UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182509

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. 483 S25S Accession No. P. G. 411

Author शर्मा, विश्वनाथसिंह.

Title शांख-ध्वनि.

This book should be returned on or before the date last marked below.

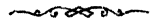
शंख-ध्वनि

(मौलिक उपन्यास)



कसौटी, वेदना, त्यागी-युवक, जीवन-नैया, वेश्याकी लड़की,
भाग्यरेखा आदि उपन्यासों के रचयिता—

श्रीयुक्त विश्वनाथ सिंह शर्म्मा



प्रकाशक

बम्बई बुक डिपो,

१६५।१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

प्रथम संस्करण]

[अगले संस्करण का सर्वाधिकार लेखक द्वारा सुरक्षित

प्रकाशक—
कल्याणदास अग्रवाल
बम्बई बुक डिपो
१६५।१ हरिसन रोड,
कलकत्ता ।

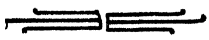
बनारस ब्रांच—
कल्याण दास एण्ड ब्रदर्स
बड़े महाराज का मन्दिर
बनारस सिटी

मुद्रक—
राधाकृष्ण नेवटिया,
यूनाइटेड कमर्सियल प्रेस लि०,
३२, सर हरिरामगोयनका स्ट्रीट कलकत्ता

गाजीपुर के सरकारी वकील तथा हिन्दी के सुकवि

पं० श्री भागवत जी मिश्र

की सेवा में



मान्यवर मिश्र जी,

पांच वर्ष की अवस्था में आदि शंकराचार्य्य ने अपने प्रथम श्लोक का निर्माण किया था। यह एक आश्चर्य की बात हुई। लेकिन ५० वर्ष की अवस्था प्राप्त करने के बाद सरकारी वकील का व्यस्त जीवन बिताते हुए भी आपके हृदय से कविता की धारा वह चली, यह भी आश्चर्य की ही बात हुई। आपके साहित्य-प्रेम और सौजन्य का मुझ पर जो प्रभाव पड़ा है, उसकी स्मृति में यह पुस्तक सप्रेम समर्पित है।

—विश्वनाथ सिंह शर्म्मा

फटकार उस समय दी गयी जब मि० चर्चिल ब्रिटेन के युद्ध-नेता के रूप में अपनी ख्याति की चोटी पर थे। बरनार्ड शा की यह प्रवृत्ति विश्व के लेखकों को सदा विचार-स्वातंत्र्य की प्रेरणा देती रहेगी।

यदि इस उपन्यास में व्यक्त किये गये किसी भाव से कुछ पाठकों का मतभेद हो तो उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि एक ग्रन्थकार अपने भावों को व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता रखता है और इस दृष्टि से विचार करने पर उन्हें स्पष्ट रूप से पता लग जायगा कि लेखक ने लोकमत को सुसंस्कृत करने के उद्देश्य से, लोकमत का अन्धानुकरण करने के बदले, अपने भावों को निष्पक्षता पूर्वक व्यक्त करने की नीति का सहारा लिया है। मेरी दृष्टि में उस देश और साहित्य की उन्नति नहीं हो सकती, जिसके ग्रन्थकार अपने को किसी शृङ्खला में बँधे हुए पावें।

लोकमत के प्रवाह के साथ तैरना एक सरल कार्य्य है; लेकिन एक ग्रन्थकार का कर्त्तव्य इतना सरल नहीं हो सकता। उसे कठिन आलोचना के लिये तैयार रहना चाहिये; और यदि लोकमत में कोई बुराई दिखाई दे, तो उसका विरोध करने में उसे तनिक भी हिचकना नहीं चाहिये। 'शंख-ध्वनि' के पन्ने आप को इन सिद्धान्तों की व्यावहारिकता का विश्वास दिला सकेंगे।

कागज के ये टुकड़े, कागज के ये पन्ने—कागज के नहीं—मेरे हृदय के टुकड़े, मेरे हृदय के पन्ने हैं। मेरे जानते एक लेखक जीने के लिये नहीं लिखता, बल्कि लिखने के लिये जीता है। ऐसी दशा में एक उपन्यासकार के लिये निष्पक्ष होना आवश्यक है। निष्पक्षता के अभाव में वह अपनी सृष्टि के अन्दर न्याय का निर्वाह नहीं कर सकता। पात्रों के मनोभावों का चित्रण करने में यदि उपन्यासकार निष्पक्षताका पालन न कर सके तो अपने

हृदय के पन्नों से



गत महायुद्धके आरम्भ के कई साल पहले अलीपुर सेण्ट्रल जेल में इस पुस्तक की रचना की गयी थी। उन दिनों इस देश में मजदूर-आन्दोलन प्रारम्भिक अवस्था में था और इसके संचालन में स्वभावतः ही कुछ ऐसे लोग आ गये थे, जो स्वार्थ-लीला से दूर नहीं कहे जा सकते थे। साथ ही, कुछ ऐसे त्यागियों की छाया भी इसे प्राप्त थी, जिनका हृदय विशुद्ध सेवा-भाव से ओत-प्रोत था और उन्हीं की तपस्या के फल स्वरूप हमारे देश में मजदूर-आन्दोलन इस तेजी के साथ बढ़ सका तथा लोकमतकी शीतल छाया इसे प्राप्त हो सकी। फिर भी उपन्यासकार ने मजदूर अन्दोलन का जैसा रूप उस समय देखा, उसकी तस्वीर इस उपन्यास के द्वारा हिन्दी-संसार के सामने है।

मत भिन्नता सम्भव है। लेकिन पत्रकार और ग्रन्थकार यदि अपने को लोकमत से स्वतंत्र न समझें तो फिर वे लोकमत का निर्माण और उसकी कमजोरियों का निराकरण किस प्रकार कर सकते हैं? इस प्रसंग में विश्वविख्यात अंग्रेज लेखक बरनार्ड शा का नाम आदर के साथ लिया जा सकता है। उन्होंने जब जैसा देखा और समझा, निर्भीकता से अपने भावों को व्यक्त किया। उनकी यह स्वतंत्रता अपनी पराकाष्ठा को पहुँच गयी, जब कि उन्होंने मि० चर्चिल को कड़ी फटकार बतलायी। और यह

फटकार उस समय दी गयी जब मि० चर्चिल ब्रिटेन के युद्ध-नेता के रूप में अपनी ख्याति की चोटी पर थे। बरनार्ड शा की यह प्रवृत्ति विश्व के लेखकों को सदा विचार-स्वातंत्र्य की प्रेरणा देती रहेगी।

यदि इस उपन्यास में व्यक्त किये गये किसी भाव से कुछ पाठकों का मतभेद हो तो उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि एक ग्रन्थकार अपने भावों को व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता रखता है और इस दृष्टि से विचार करने पर उन्हें स्पष्ट रूप से पता लग जायगा कि लेखक ने लोकमत को सुसंस्कृत करने के उद्देश्य से, लोकमत का अन्धानुकरण करने के बदले, अपने भावों को निष्पक्षता पूर्वक व्यक्त करने की नीति का सहारा लिया है। मेरी दृष्टि में उस देश और साहित्य की उन्नति नहीं हो सकती, जिसके ग्रन्थकार अपने को किसी शृङ्खला में बँधे हुए पावें।

लोकमत के प्रवाह के साथ तैरना एक सरल कार्य्य है; लेकिन एक ग्रन्थकार का कर्त्तव्य इतना सरल नहीं हो सकता। उसे कठिन आलोचना के लिये तैयार रहना चाहिये; और यदि लोकमत में कोई बुराई दिखाई दे, तो उसका विरोध करने में उसे तनिक भी हिचकना नहीं चाहिये। 'शंख-ध्वनि' के पन्ने आप को इन सिद्धान्तों की व्यावहारिकता का विश्वास दिला सकेंगे।

कागज के ये टुकड़े, कागज के ये पन्ने—कागज के नहीं—मेरे हृदय के टुकड़े, मेरे हृदय के पन्ने हैं। मेरे जानते एक लेखक जीने के लिये नहीं लिखता, बल्कि लिखने के लिये जीता है। ऐसी दशा में एक उपन्यासकार के लिये निष्पक्ष होना आवश्यक है। निष्पक्षता के अभाव में वह अपनी सृष्टि के अन्दर न्याय का निर्वाह नहीं कर सकता। पात्रों के मनोभावों का चित्रण करने में यदि उपन्यासकार निष्पक्षताका पालन न कर सके तो अपने

को वह एक "प्रोपेगेण्डिस्ट" की श्रेणी में पायेगा। मेरे दृष्टि-कोण में उपन्यासकार का स्थान एक जज के समान होना चाहिये, 'प्रोपेगेण्डिस्ट' का नहीं। उस की सृष्टि में, उसके साम्राज्य में, धनी-गरीब, सती, वेश्या, महात्मा डाकू आदि हर श्रेणी के आदमी बसते हैं। यदि वह वेश्या और डाकू पात्रों को घृणा की दृष्टि से देखें तो उनके साथ सहानुभूति कौन दिखलायगा; और सहानुभूति के अभाव में उपन्यास के अन्दर न्याय की मर्य्यादा किस तरह रक्षित रह सकेगी? उपन्यासकार अपनी सृष्टि का विधाता होता है। एक विधाता की निष्पक्षता उसके हृदय में आवश्यक है। किसी श्रेणी के प्रति अति भक्ति और किसी के प्रति अति क्षोभ उस की सफलता के पथ में बाधक होंगे। शक्ति भर मैंने अपने उपन्यासों में निष्पक्षता के निर्वाह की चेष्टा की है।

इधर चन्द महीनों के भीतर ही "बम्बई बुक डिपो" के अध्यक्ष ने बड़े उत्साह के साथ मेरे कई उपन्यासों को प्रकाशित किया है। चन्द साल के भीतर ही प्रकाशन क्षेत्र में इनका कार्य्य प्रशंसनीय रहा है। भविष्य में हिन्दी संसार को इनसे बड़ी आशा है। भगवान इनके उद्योग को सफल करें।

यदि मेरे अन्य उपन्यासों की तरह यह भी पाठकों की दृष्टि में उपयोगी साबित हो सका, तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूंगा।

३५।१, विवेकानन्द रोड
कलकत्ता।

—विश्वनाथ सिंह शर्म्मा

शंख ध्वनि

पहला अध्याय

"अपना" एक प्यारा शब्द है। यह सन्तप्तों के हृदय में शान्ति तथा निराशों के हृदय में आशा प्रदान करता है। भगवान की सृष्टि को अमृत वृष्टि से सञ्चित करने में यह अपनी शानी नहीं रखता। संसार की भयंकर बाधाओं से ऊब कर त्राहि-त्राहि पुकारने वाले व्यक्ति भी इसका सहारा पाकर अपने को धन्य समझते हैं। "अपना" शब्द की पवित्र स्मृति ही लोगों के हृदय में आनन्दमय मूर्ति अंकित कर देती है। इसकी सार्थकता अनुभव कर लोग अपने को धन्य समझने लगते हैं। आज वही "अपना" बाबू रत्नेश्वर प्रसाद के लिये सपना हो रहा है। संसार में ईश्वर की इस विस्तृत सृष्टि में, उनका कोई अपना है या नहीं, इस विषम प्रश्न का उत्तर वे बहुत दिनों से ढूंढ़ रहे थे; परन्तु सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलता था।

बार बार उनकी आत्मा कहती थी कि इस स्वार्थी संसार में किसी का कोई नहीं होता है; चलो, छोड़ो उस माया के संसार को; अपना मार्ग स्वयं निश्चित करो। परन्तु ममता एक प्रबल वस्तु है। उसका आकर्षण ही तो लोगों को पारस्परिक बन्धन में जकड़ रखता है। वह कब पिण्ड

छोड़ने लगी ? बार बार उसने वाध्य किया रत्नेश्वर प्रसाद को मोह में लिपटे रहने के लिये। परन्तु यह बन्धन वास्तविकता के प्रतिकूल था। आशा और निराशा के इस भयंकर संघर्ष में भला किस तरह इस प्रश्न का फैसला हो सकता था कि इस संसार में उनका कोई अपना है या नहीं ?

परन्तु आज ? आज निपटारा हो गया है। आज बाबू रत्नेश्वर प्रसाद की आत्माने स्पष्टतः कह दिया है कि इस संसार में कोई किसी का नहीं है। हां, कुछ भाग्यशाली लोगों को किसी को अपना कहने का सौभाग्य जरूर प्राप्त होता है; परन्तु तुम वैसे भाग्यशाली नहीं हो, तुमने इतना अधिक पुण्य नहीं किया है कि किसी को अपना कह सको। इसलिये छोड़ो इस ममता को, छोड़ो इस माया को।

घर छोड़ते समय इस प्रकार की भावना उनके हृदय में उठी थी। सच-मुच वह प्रतीक्षा की घड़ी थी। एक साथ ही नाना प्रकार की तरंगों की चोट को बर्दाश्त करना कोई अदनी बात नहीं है। वीर और सच्चे वीर ही ऐसी परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते हैं।

ओफ ! तीर की तरह वह बात लगी थी उनके हृदय में। उन्होंने शिक्षा पाई थी जरूर; परन्तु स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यह पाप है, इसका उन्हें भयंकर प्रायश्चित करना पड़ेगा। शिक्षित बनना सौभाग्य की बात है। परन्तु वही सौभाग्य रत्नेश्वर प्रसाद के लिये आज दुर्भाग्य का काम कर रहा है। कैसे आश्चर्य की बात है यह ?

शिक्षित बनना किसी भी देश के लिये, किसी भी समाज के लिये जुर्म नहीं है। परन्तु अभागे रत्नेश्वर प्रसाद के लिये वही भयंकर विपत्ति का कारण बन रहा है। यदि वे जानते कि शिक्षा के कारण उन्हें इस प्रकार अपमानित

होना पड़ेगा, तो शायद वे भूल कर भी पढ़ने का नाम नहीं लेते।

बचपन में ही पिता की मृत्यु हो जानेके कारण बड़े भाई की देखरेख में इनका लालन-पालन हुआ था। इनके परिवार की आर्थिक अवस्था साधारणतः अच्छी थी। इनके बड़े भाई बाबू कामेश्वर प्रसाद ने इनके पढ़ने लिखने की भी यथोचित व्यवस्था कर दी थी। पढ़ने लिखने में तेज रहने के कारण रत्नेश्वर प्रसाद ने प्रथम श्रेणी में मैट्रिक परीक्षा पास की। कुछ लोगों का अनुमान था कि मैट्रिक परीक्षा में छात्र वृत्ति भी पावेंगे। पर ऐसा न हो सका।

मैट्रिक पास करने के बाद ये कालेज में भर्ती किये गये। उचित समय पर उन्होंने आई० ए० तथा बी० ए० की परीक्षा पास की। बी० ए० पास करने के बाद ये एम० ए० पढ़ना चाहते थे। परन्तु इनके भाई साहब में इतना धैर्य नहीं था कि अधिक दिनों तक पढ़ाई का खर्च देते। यदि प्रारम्भ में उन्हें इस बात का पता लगता कि भाई को शिक्षित बनाने में दस बारह वर्ष तक रुपया पानी की तरह बहाना पड़ेगा तो शायद वे भूल कर भी इसका नाम नहीं लेते। उन्होंने सोचा था कि दो चार वर्ष तक कुछ रुपये खर्च करने पर उनका भाई तार-चिट्ठी आदि पढ़ने लायक अंग्रेजी जान जायगा। थोड़ा और पढ़ जाने पर वह कोई सरकारी नौकरी भी पा सकेगा। सरकारी नौकरी मिल जाने पर हम लोग मौज से गुल छर्रे उड़ा सकेंगे। बस, केवल इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर वे अपने भाई को पढ़ाने के लिके अग्रसर हुए थे।

लोगों के द्वारा उन्हें पता लगा था कि मैट्रिक परीक्षा पास कर लेने के बाद आदमी पूरा योग्य हो जाता है। उन्होंने यह भी पता लगा लिया था

कि यह परीक्षा पास करने के बाद लोगों को दारोगा आदि का भी काम मिलता है। दारोगा की नौकरी को वे बड़ा ही महत्वपूर्ण समझते थे। कई दारोगों की उन्हें बेतहर खुशामद करनी पड़ी थी। इस कारण वे चाहते थे कि यदि किसी तरह उनका छोटा भाई दारोगा बन सके तो बड़े ही सौभाग्य की बात होगी। वे दारोगा साहब के बड़े भाई कहला सकेंगे, इससे बढ़ कर उनके लिये सौभाग्य की दूसरी कौन सी बात हो सकती है? इस भावना ने उन्हें अपने भाई को शिक्षित बनाने के लिये सब से अधिक बाध्य किया।

रत्नेश्वर प्रसाद के मैट्रिक परीक्षा पास होने के बाद ही बाबू कामेश्वर प्रसाद उन्हें दारोगा का काम ढूंढ़ने के लिये बाध्य करने लगे। परन्तु पता लगाने पर उन्हें मालूम हुआ कि शिक्षितों की संख्या अधिक बढ़ जाने के कारण नौकरी मिलने में अब कुछ कड़ाई हो गयी है; इसलिये आई० ए० पास किये बिना नौकरी नहीं मिल सकती? किस्मत को कोसते हुए उन्होंने आगे पढ़ने का भी खर्च देना मंजूर किया।

दो वर्ष के पश्चात आई० ए० पास करने के बाद फिर दारोगा के पद का प्रसंग उठा। दौड़ धूप करने पर कामेश्वर बाबू को यह पता लगा कि बड़े अफसरों से जान पहचान रहने पर ही आई० ए० पास लोगों को दारोगा का काम मिलता है। परन्तु उनकी किसी बड़े अफसर से जान पहचान नहीं थी। बेचारे बड़ी कठिनाई में पड़े। कई बार अपनी मूर्खता पर उन्हें दया भी आई। उनके हृदय ने कहा कि व्यर्थ ही नौकरी के लोभ में पड़ कर घर का आटा गीला किया। हजारों रुपये खर्च करने के बाद भी इसके आदि-अन्त का कोई पता नहीं लगाता।

अन्त में कुछ लोगों के द्वारा उन्हें यह पता लगा कि बी० ए० पास करने के बाद दारोगा को नौकरी जरूर मिल जाती है। रत्नेश्वर प्रसाद भी आगे पढ़ना चाहते थे। उन्होंने हाँ हूं करके आगे पढ़ने की अपने भाई साहब से स्वकृति ले ली। बेचारे कामेश्वर प्रसाद ने सोचा कि सत्यानाश और सावा सत्यानाश में फर्क ही क्या है? जब हजारों रुपये नष्ट कर ही चुके हैं तो कुछ रुपये और लगाकर इसके अन्त तक ही पहुँच जाना ठीक है। यही सोचकर उन्होंने दो वर्ष तक और खर्च देने का निश्चय किया।

दो वर्ष समय व्यतीत होने में कितनी देर लगती है? देखते ही देखते रत्नेश्वर प्रसाद ने बी० ए० की परीक्षा भी पास कर ली। अब कोई दूसरा रास्ता नहीं था। बड़े भाई साहब ने साफ साफ कह दिया कि यदि दरोगा का काम नहीं मिलता है तो कोई दूसरी ही नौकरी कर लो। अब व्यर्थ घर का रुपया नष्ट करना ठीक नहीं है। वह समय आ गया है कि तुम कुछ पैदा कर घर का काम काज चलाओ। रत्नेश्वर बाबू भाई साहब की इन बातों के कायल थे। इनका खण्डन करना किसी तरह उनके लिये सम्भव नहीं था। वे जानते थे कि रुपया पैदा करने के प्रलोभन के कारण ही उनके भाई साहब ने उन्हें पढ़ाया लिखाया है। ऐसी दशा में उन्हें निराश करना एक प्रकार से विश्वासघात होगा। इस कारण उन्होंने नौकरी प्राप्त करने की बड़ी चेष्टा की। पर कोई सम्मान जनक काम न मिल सका। दो-तीन महीने तक दौड़ धूप करने के पश्चात उन्होंने एम० ए० बी० एल० पढ़ने का निश्चय किया। उनका अनुमान था कि एम० ए० तथा बी० एल० पास करने के बाद वे अवश्य ही किसी न किसी किनारे लग जायंगे। यदि कोई नौकरी नहीं मिलेगी तो वकालत का रास्ता तो खुला रहेगा।

बड़ी हिचकिचाहट के साथ उन्होंने अपना निश्चय बड़े भाई साहब को कह सुनाया। ये बातें सुनते ही वे तो आग बबूला हो गये। उन्होंने फटकारते हुए कहा—"ऐसी चालबाजियों में अब मैं विश्वास नहीं कर सकता। चाहे जैसा हो तुम्हें कोई न कोई नौकरी करनी ही पड़ेगी।"

बेचारे रत्नेश्वर बाबू बड़ी कठिनाई में पड़े। उन्होंने डरते डरते कहा—"आगे पढ़ने के सिवा कोई रास्ता नहीं है। इस समय तो कोई अच्छी नौकरी भी नहीं मिल रही है।"

आंखों से चिनगारियां निकालते हुए कामेश्वर बाबू ने कहा—"यदि कहीं तुम्हें नौकरी नहीं मिले तो क्या जन्म भर पढ़ते ही रहोगे? यह पढ़ना क्या हुआ खिलवाड़ हो गया। बाप रे! मेरे हजारों रुपये मुफ्त में डूब गये।"

भाई साहब का यह रूख देखकर रत्नेश्वर बाबू बोले—"यदि आप खर्च नहीं देना चाहते तो न दें, ट्यूशन कर मैं किसी तरह अपना काम चला लूँगा। पर दो वर्ष तक मुझे और पढ़ने की आज्ञा दें।"

घोर चित्कार करते हुए कामेश्वर प्रसाद बोले-"मैं तुम्हारे जैसे नालायक से कोई सम्बन्ध रखना नहीं चाहता। तुम्हारी पढ़ाई में जितने रुपये खर्च हुए हैं, उतने लाकर रख दो। इसके बाद तुम ए० ए० पढ़ो या बैरिस्टरी पढ़ो, मैं तुम्हें रोकने नहीं जाऊँगा। मालूम पड़ता है कि रुपये कहीं आसमान से टपकते थे। गाढ़ी कमाई के रुपये मैंने तुम्हारी पढ़ाई में खर्च किये हैं। भले आदमी की तरह रुपये रख दो।"

बस उतना ही काफी था। अधिक तर्क के द्वारा कोई लाभ नहीं हो सकता था। लाख चेष्ठा करने पर भी कोई पत्थर से तेल नहीं निकाल

सकता। रत्नेश्वर प्रसाद भी अपने भाई का चीत्कार सुनकर चुप हो गये। इसके पहले भी वे कई वार इस प्रकार की चर्चा चला चुके थे। प्रत्येक वार उन्हें इसका मिलता जुलता ही उत्तर मिला था। वे अपने भाई साहब की मनोवृति से परिचित थे। उन्हें मालूम था कि पढ़ाई में रुपया खर्च करना उन्हें वेतरह अखर रहा है। वे यह भी जानते थे कि उनके भाई साहब ने व्यवसाय के रूप में ही इस काम में रुपया लगाया है। यदि वे इसे लाभदायक व्यवसाय नहीं समझते तो हरगिज इस काम में रुपया नहीं लगाते। इस मनोवृति के लिये वे अपने भाई साहब को विशेष रूप से दोषी नहीं ठहराते थे। वर्त्तमान शिक्षा को समाज के अधिकांश व्यक्ति व्यवसाय के रूप में देखते हैं, यह बात उन्हें मालूम थी। ऐसी दशा में वे स्वभावतः ही इस मनोवृति के लिये अपने भाई साहब को विशेष रूप से अपराधी नहीं ठहराते थे।

परन्तु इतना होते हुए भी उस दिन की बात उनके हृदय में बेतरह चुभ गया। उन्होंने सोचा कि व्यवसाय मनुष्य के लिये होना चाहिये, मनुष्य व्यवसाय के लिये नहीं हो सकता है। यदि मनुष्य व्यवसाय के लिये हो हो तो फिर मनुष्यता का महत्व ही क्या रह गया। ऐसी दशा में तो व्यवसाय ही मनुष्यत्व से श्रेष्ठ कहा जायगा। व्यवसाय की ऐसी सत्ता स्थापित होनेपर फिर अपने और पराये की परख ही क्या रह जायगी? जब परिवार के व्यक्ति परस्पर एक दूसरे के साथ इस प्रकार व्यवसायिक बुद्धि से काम लेने लगेंगे, तो पारिवारिक जीवन का माधुर्य ही क्या रह जायगा?

इस प्रकार की बातें सोचते सोचते उनके हृदय में भयंकर वैराग्य की उत्पत्ति हुई। पारिवारिक जीवन में उन्हें कोई आनन्द नहीं मिलता था। कहीं अन्यत्र जाकर वे इस कठिनाई से छुटकारा पाने की बात सोचने लगे।

———

दूसरा अध्याय ।

गरीबी से गरीबों को यदि दुःख मिलता है तो वह भी नहीं कहा जा सकता कि अमीरी से अमीरों को सुख मिलता है। निःसन्देह गरीब भाग्य तथा साधनों की प्रतिकूलता के कारण अपार कष्टोंका सामना करते हैं; परन्तु अमीर भाग्य तथा साधनों की अनुकूलता रहते हुए भी कष्ट सहते हैं, यह बड़े ही आश्चर्य की बात है। गरीबों को फिर भी अपनी विवशता तथा भाग्यहीनता का सहारा रहता है, परन्तु अमीर इस प्रकार के सहारों से भी सर्वथा वंचित रहते हैं। अपनी अकर्मण्यता को कोसने के सिवा उनके लिये और कोई भी मार्ग नहीं रह जाता है। अमीर सुखी न हो, साधारण दृष्टि से वह अवश्य ही आश्चर्य की बात है; परन्तु गम्भीरता-पूर्वक विचार करने पर इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं रह जाती है। सुख की प्राप्ति धन से नहीं, सन्तोष से होती है। जहां सन्तोष नहीं है, वहां सुख मिलना किसी प्रकार सम्भव नहीं कहा जा सकता है। सन्तोष के लिये धन दौलत की नहीं, आत्म संयम की आवश्यकता होती है। अमीर गरीब दोनों ही समान रूपसे आत्म संयम के अधिकारी होते हैं। इस कारण सुख-सन्तोष का दरवाजा दोनों के लिये ही खुला हुआ है। आत्म संयमी होने पर अमीर गरीब दोनों ही समान रूप से सुखी होते हैं और हो सकते हैं।

सन्तोष के द्वारा सुख प्राप्त करना, सुख की पराकाष्ठा है इसे हम सुखकी अन्तिम सीढ़ी कह सकते हैं। परन्तु साधारण आदमियों के लिये इस

सीढ़ी तक पहुँचना सम्भव नहीं है। योगी और सच्चे त्यागी ही सन्तोष सुख के अधिकारी हो सकते हैं। फिर भी हम कुछ लोगोंको सुखी पाते हैं, पता लगाने पर यह देखा जाता है कि सन्तोष की सीढ़ी तक नहीं पहुँचने पर भी पारिवारिक जीवन कलह रहित रहने के कारण वे सुखी हैं। इसे हम सुख की दूसरी सीढ़ी कह सकते हैं। पारिवारिक जीवन शान्तिपूर्ण रहने के कारण भी कुछ लोग सुखी देखे जाते हैं। यद्यपि उनका सुख सन्तोष सुख से बहुत ही निम्न श्रेणी का रहता है, फिर भी साधारण दृष्टि से वे सुखी कहे जा सकते हैं। इस प्रकार के सुख के लिये भी धन वैभवकी विशेष आवश्यकता नहीं होती। इस कारण साधारण श्रेणी के मनुष्य भी इस सुख के अधिकारी होते हैं। केवल धनी लोगोंका ही इस पर अधिपत्य हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता।

बाबू फतेहचन्द्र के जीवन से उपरोक्त बातों का स्पष्टीकरण हो जाता है। वे धनी हैं करोड़ों रुपये के स्वामी हैं। कपड़े की एक बहुत बड़ी मील उन्होंने खोल रखी है, वे उसके सर्वे सर्वा हैं। फिर भी उन्हें चैन नहीं, सुखका आजीवन उन्हें दर्शन नहीं हुआ। तोभी व्यवसायी होने के कारण सन्तोष सुख के तो वे अधिकारी है ही नहीं। पारिवारिक जीवन शान्तिपूर्ण रहने पर दूसरी श्रेणी का सुख उन्हें मिल सकता था। पर वह भी उनके भाग्य में बदा नहीं था। अपने एक मात्र पुत्र मेहरचन्द्र के आचार व्यवहारने सदा के लिये उनके सुख को बिदा कर दिया था। उन्होंने अपने पुत्रको रास्ते पर लाने की बड़ी चेष्टा की; पर कोई फल न हुआ। भाग्य को कोसते हुए वे अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

उनके बाद उनके विस्तृत व्यवसाय की क्या दशा होगी, यह भावना

उन्हें सदा विचलित किया करती थी। सोते-जागते उठते-बैठते उन्हें सदैव इसी बात की चिन्ता रहती थी। आज तो उस चिन्ताने विकराल रूप धारण किया है। उन्हें विश्वास हो गया था कि यह उनकी अन्तिम घड़ी है। वे जानते थे कि आज का सूर्य्यास्त ही उनके जीवन का अन्तिम सूर्यास्त होगा। अब प्रातःकालीन सूर्य की निर्मल राशि की आशा; इस जीवन में वे खो बैठे थे। डाक्टरोंने उन्हें साहस दिया था, भरोसा दिया था; पर वे उसका मूल्य जानते थे। कई मौकों कर वे भी दूसरों को इस प्रकार का दिलासा दे चुके थे। इस कारण उन्हें इसका मूल्य मालूम था।

परिवार के सभी कोई इस समय चारो ओर से घेर कर उनकी सेवा सुश्रुषा कर रहे थे। अभी कुछ देर पहले वे बेहोश हो गये थे। नाना प्रकार के उपचार से वे होश में लाये गये, होश होते ही उन्होंने अपनी पुत्र वधू लक्ष्मी के सिवा और सभी लोगो को बाहर चले जाने के बाद बाबू फतेहचन्द ने बड़ी कठिनाई से बोलते हुए कहा—"अब तो मैं तुम लोगों से अलग होता हूं। मुझे दुख है कि मेहरचन्द इस समय तक काम काज सम्हालने लायक नहीं हो सका। उसे सुधरा हुआ देखकर मैं बड़ी शान्ति के साथ इस संसार से बिदा हो सकता था; परन्तु अफसोस! मेरी इच्छा पूरी न हो सकी।" इतना कहते कहते उनका गला भर आया। वे अधिक न बोल सके।

आंचल से अपनी आंखों का आंसू पोछते हुए लक्ष्मी ने कहा—"बाबू जी! आप हताश क्यों होते हैं? आपको बीमारी संगीन होते हुए भी असाध्य नहीं है। डाक्टर बाबू तो पूरी आशा दे गये हैं।"

बड़ी कठिनाई से बाबू फतेहचन्द बोले—"नहीं अब जीवन की मुझे

कोई आशा नहीं है। भगवान तुम लोगों का भला करे। जिन्दगी की इस अन्तिम घड़ी में मैं तो तुम्हें देखकर ही सुखी हो रहा हूं। सचमुच तुम मेरे घर की लक्ष्मी हो। सुख से या दुख से, चाहे जिस तरह से हो मेहरचन्द के साथ सचाई पूर्वक जीवन व्यतीत करना। वह दुराचारी है। मैं इस बात को मानता हूं; फिर भी तुम्हारे लिये वही देवता है, तुम्हारा सुख दुख उसी पर निर्भर करता है, दुराचारी समझ कर उससे किसी तरह घृणा नहीं करना।"

लक्ष्मी कोई उत्तर न दे सकी। मुंह में कपड़ा डाल कर वह सिसक सिसक कर रोने लगी। थोड़ी देर के बाद बाबू फतेहचन्द फिर बोले—"लक्ष्मी! मेहरचन्द की माता इस संसार से प्रस्थान करते समय तुम्हें मेरे हाथों सोप गयी थीं। उन्हें भी अपने पुत्र पर पूरा विश्वास नहीं था। उन्हें मालूम था कि मेहरचन्द के हाथों तुम्हें अपमानित होना पड़ेगा। उनका विश्वास था कि मेहरचन्द तुम्हारे जैसे रत्न का उचित सम्मान नहीं कर सकेगा। इस कारण अन्तिम समय में वे धरोहर के रूप में तुम्हें मेरे हाथों सौंप गयीं थीं। आज तक मैंने उस धरोहर की यथाशक्ति रक्षा की। आज चलते समय उसे किसके हाथ छोड़ू? मुझे तो कोई ऐसा योग्य व्यक्ति नहीं दिखलायी देता, जिसपर मैं तुम्हें छोड़ सकूँ अन्त में बार बार भगवान की ओर दृष्टि जाती है। ऐ कुल के देवता! ऐ चमकने वाले सूर्य! तुम हमारी लक्ष्मी की सुध लेना। इस पवित्र धरोहर की रक्षा मैं तुम्हारे ऊपर ही छोड़ता हूं।" इतना कहते कहते बाबू फतेहचन्द का गला भर आया। वे अधिक न रुके। लक्ष्मी फूट फूट कर रोने लगी। थोड़ी देर के बाद वे फिर बोले—"लक्ष्मी! आओ तुम्हें अन्तिम आशिर्वाद देकर बिदा करूँ।"

आज्ञा पाते ही लक्ष्मी और भी समीप आ गयी। उसके सिर पर हाथ रखकर उन्होंने कहा—"भगवान तुम्हें सौभाग्यवती तथा सुखी रखें। ईश्वर मेहरचन्द को तुम्हारी प्रतीष्टा करने की सुबुद्धि दे।" वे अधिक कुछ न बोल सके। लक्ष्मी वहीं पर बैठकर रोने लगी। इसी समय उन्होंने अपने छोटे भाई मलूकचन्द को बुलाया। उनके पहुँचते ही लक्ष्मी बगल के कमरे में चली गयी। थोड़ी देर तक आँखें बन्द किये रहने के पश्चात बाबू फतेहचन्द बोले—"मलूकचन्द! कारबार तुम्हारे भरोसे छोड़कर ही मैं बिदा हो रहा हूँ। मेहरचन्द पर पूरा ख्याल रखना। बालिग होते हुए भी वह नवालिग के समान ही है। उसके भरोसे कोई काम नहीं छोड़ा जा सकता।"

रोते हुये बाबू मूलचन्द बोले—"आप जिन्दगी से निराश क्यों हो रहे हैं। आप एक सप्ताह में भले चंगे हो जायंगे। सुधीर बाबू ने तो ग्राण्टी के साथ आपके बचने की बात कही हैं। वे बड़े ही अच्छे डाक्टर हैं। उनकी बातों पर किसी प्रकार अविश्वास नहीं किया जा सकता।"

बाबू फतेहचन्द-"अब डाक्टरों की बात पर मुझे विश्वास नहीं है। आत्मा ही सबसे बड़ा डाक्टर है। आत्मा ने अब कूचका बिगुल बजा दी है। मुझे बहुत शीघ्र ही यहां से प्रस्थान करना पड़ेगा। डाक्टरों की बात को लेकर मुझे ढाढ़स देने से कोई लाभ नहीं है। मैं अब मरने के लिये हर प्रकार से तैयार हूं।

आंसू पोछते हुए बाबू मलूकचन्द ने कहा—"यदि हम लोगों के भाग्य में आपका विछोह ही बदा होगा, तो भी आप कोई चिन्ता न करें, आप बे

आशीर्वाद से सब काम चलता रहेगा। मेरे जीते जी मेहरचन्द का कोई अनिष्ट नहीं हो सकता।"

बाबू फतेहचन्द—"मुझे तो तुमसे ऐसी ही आशा है। तुम स्वयं बुद्धिमान आदमी हो। तुम्हें अधिक समझाने बुझाने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता। आज मेहरचन्द को तुम्हारे हाथों सौंपकर मैं इस संसार से बिदा होता हूं।" इतना कहते कहते उनका दम फूलने लगा। खोंखते खोंखते उनकी हालत खराब हो गयी। घबराते हुए बाबू मलूकचन्द ने डाक्टर साहब को बुलाने के लिये आदमी भेजा। परिवार के अन्य भी आदमी वहां इकट्ठे हो गये।

सौभाग्यवश थोड़ी देर के बाद स्वतः बाबू फतेहचन्द का अवस्था अच्छी हो गयी। दो-तीन घूंट जल पीने के बाद अपने पुत्र मेहरचन्द के सिवा उन्होंने सब लोगों को बाहर चले जाने के लिये कहा। सभी लोगों के चले जाने के बाद वे बोले—"मेहरचन्द! अब मैं जिन्दगी की अन्तिम घड़ियां गिन रहा हूँ। कब मेरी आँखें सदा के लिये बन्द हो जायगी, इस का ठिकाना नहीं है। आओ तुम्हें एकवार आशीर्वाद दे दें। शायद यह आखिरी आशीर्वाद कुछ काम कर जाय। यदि अब भी तुम अच्छे रास्ते पर चलने का मुझे विश्वास दिलाओ तो मैं अधिक शान्ति के साथ इस दुनियां से अलग हो सकूंगा।"

बच्चे की तरह फूट फूट कर रोते हुए मेहरचन्द ने कहा—"पिता जी! सचमुच मैंने बड़ा अपराध किया है। आपकी आज्ञा का उल्लंघन कर मैंने जो पाप किया है, उससे मेरा छुटकारा हो, मैं आपसे यही आशीर्वाद चाहता

आज्ञा पाते ही लक्ष्मी और भी समीप आ गयी। उसके सिर पर हाथ रखकर उन्होंने कहा—"भगवान तुम्हें सौभाग्यवती तथा सुखी रखें। ईश्वर मेहरचन्द को तुम्हारी प्रतीष्ठा करने की सुबुद्धि दे।" वे अधिक कुछ न बोल सके। लक्ष्मी वहीं पर बैठकर रोने लगी। इसी समय उन्होंने अपने छोटे भाई मलूकचन्द को बुलाया। उनके पहुँचते ही लक्ष्मी बगल के कमरे में चली गयी। थोड़ी देर तक आँखें बन्द किये रहने के पश्चात बाबू फतेहचन्द बोले—"मलूकचन्द! कारबार तुम्हारे भरोसे छोड़कर ही मैं बिदा हो रहा हूँ। मेहरचन्द पर पूरा ख्याल रखना। बालिग होते हुए भी वह नवालिग के समान ही है। उसके भरोसे कोई काम नहीं छोड़ा जा सकता।"

रोते हुये बाबू मूलचन्द बोले—"आप जिन्दगी से निराश क्यों हो रहे हैं। आप एक सप्ताह में भले चंगे हो जायंगे। सुधीर बाबू ने तो ग्राण्टी के साथ आपके बचने की बात कही हैं। वे बड़े ही अच्छे डाक्टर हैं। उनकी बातों पर किसी प्रकार अविश्वास नहीं किया जा सकता।"

बाबू फतेहचन्द-"अब डाक्टरों की बात पर मुझे विश्वास नहीं है। आत्मा ही सबसे बड़ा डाक्टर है। आत्मा ने अब कूचका बिगुल बजा दी है। मुझे बहुत शीघ्र ही यहां से प्रस्थान करना पड़ेगा। डाक्टरों की बात को लेकर मुझे ढाढ़स देने से कोई लाभ नहीं है। मैं अब मरने के लिये हर प्रकार से तैयार हूं।

आंसू पोछते हुए बाबू मलूकचन्द ने कहा—"यदि हम लोगों के भाग्य में आपका विछोह ही बदा होगा, तो भी आप कोई चिन्ता न करें, आप के

आशीर्वाद से सब काम चलता रहेगा। मेरे जीते जी मेहरचन्द का कोई अनिष्ट नहीं हो सकता।"

बाबू फतेहचन्द—"मुझे तो तुमसे ऐसी ही आशा है। तुम स्वयं बुद्धिमान आदमी हो। तुम्हें अधिक समझाने बुझाने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता। आज मेहरचन्द को तुम्हारे हाथों सौंपकर मैं इस संसार से बिदा होता हूं।" इतना कहते कहते उनका दम फूलने लगा। खोंखते खोंखते उनकी हालत खराब हो गयी। घबराते हुए बाबू मलूकचन्द ने डाक्टर साहब को बुलाने के लिये आदमी भेजा। परिवार के अन्य भी आदमी वहां इकट्ठे हो गये।

सौभाग्यवश थोड़ी देर के बाद स्वतः बाबू फतेहचन्द की अवस्था अच्छी हो गयी। दो-तीन घूंट जल पीने के बाद अपने पुत्र मेहरचन्द के सिवा उन्होंने सब लोगों को बाहर चले जाने के लिये कहा। सभी लोगों के चले जाने के बाद वे बोले—"मेहरचन्द! अब मैं जिन्दगी की अन्तिम घड़ियां गिन रहा हूँ। कब मेरी आँखें सदा के लिये बन्द हो जायगी, इस का ठिकाना नहीं है। आओ तुम्हें एकवार आशीर्वाद दे दें। शायद यह आखिरी आशीर्वाद कुछ काम कर जाय। यदि अब भी तुम अच्छे रास्ते पर चलने का मुझे विश्वास दिलाओ तो मैं अधिक शान्ति के साथ इस दुनियां से अलग हो सकूंगा।"

बच्चे की तरह फूट फूट कर रोते हुए मेहरचन्द ने कहा—"पिता जी! सचमुच मैंने बड़ा अपराध किया है। आपकी आज्ञा का उल्लंघन कर मैंने जो पाप किया है, उससे मेरा छुटकारा हो, मैं आपसे यही आशीर्वाद चाहता

हूं। इसके साथ ही आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस समय से बराबर अपने को बुरे कार्यों से दूर रखूंगा।"

कुछ प्रसन्नता का भाव दिखलाते हुए बाबू फतेहचन्द बोले—"भगवान प्रतिज्ञा पालन करने को तुम्हें शक्ति दे। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम सदा फूलो फलो। बेटा! मरते समय मैं तुमसे एक अनुरोध करना चाहता हूं यदि उसकी रक्षा करने के लिये तैयार हो तो तुम्हें कह सुनाऊँ।"

कातर भावसे मेहरचन्दने उत्तर दिया—"कहिये पिताजी! क्या आज्ञा है? आपकी आज्ञा मरते दम तक न भूलूँगा।"

बाबू फतेहचन्द—"सौभाग्यवश तुम्हें बड़ी सतीसाध्वी बहु मिली है। उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो आजीवन उसे सुखी रखने की चेष्टा करना। यदि तुम केवल मेरे इस अनुरोध का ही पालन करसको" तो मैं अपने को धन्य समझूँगा।"

बच्चे की तरह बिलखते हुए मेहरचन्द ने कहा—"पिताजी! आजन्म आप की आज्ञा का पालन करूँगा। आप मेरे अपराधों को क्षमा कर दें।" इतना कहते कहते वे उनका पैर पकड़ कर लोटने लगे। बाबू फतेहचन्द ने उठकर अपने प्यारे पुत्र का आलिंगन करना चाहा। इस चेष्टा में उनके दुर्बल शरीर पर बहुत जोर पड़ा और वे उसी समय वेहोश हो गये।

वेहोश होते ही सारे परिवार में कुहराम मच गया। टेलीफोन के द्वारा कई डाक्टरों से शीघ्र आनेका अनुरोध किया गया। उसी समय डाक्टर सुधीरचन्द्र आ पहुंचे। नाना प्रकार के उपचार के द्वारा उन्होंने वेहोशी तो उसी समय दूर कर दी; परन्तु एकान्त में उन्होंने बाबू मलूकचन्दसे निराशा प्रगट की। फिर भी औषधि का प्रबन्ध कर शीघ्र ही लौटने की प्रतिज्ञा

कर वे अपने घर लौट आये। दो-तीन अन्य डाक्टरों ने भी परीक्षा की। परन्तु सभी लोगों ने निराशा ही प्रकट की।

उस समय से बराबर डाक्टरों का आना जाना जारी रहा। कलकत्ते में कोई भी ऐसा प्रसिद्ध डाक्टर न होगा, जिसकी जेब बाबू फतेहचन्द के घर से उस दिन गर्म न हुई हो। परन्तु विधाता के विधान के सामने किसी का कोई बश नहीं चलता है। रुपये के बल पर दुनियां में सभी कुछ हो सकता है, परन्तु मौत नहीं टाली जा सकती। बाबू फतेहचन्द के सम्बन्ध में भी ऐसा ही हुआ। चिकित्सा विज्ञान के बड़े बड़े धुरन्धर भी उनकी रक्षा न कर सके। दो बजे रात्रि के समय शोकाकुल परिवार को वियोग व्यथा सहने के लिये छोड़कर, वे परमधाम को चल बसे।

तीसरा अध्याय

कुछ लोगों का कहना है कि निराशा से सुख की प्राप्ति होती है। अपने इस कथन के समर्थन में वे दलील भी देते हैं। वे कहते हैं कि आशा की समाप्ति के बाद भयंकर निराशा की उत्पति होती है और उससे लोगों को अपार कष्ट होता है। यदि आशा के बदले प्रारम्भ से ही मनुष्य निराशा के वायुमण्डल में विचरण करे तो उसका दुख बहुत परिचित रूपमें रहता है और बहुत शीघ्र ही वह उस परिचित दुख से छुटकारा पा जाता है। ऐसी दशा में आशा की अपेक्षा निराशा को ही कल्याणप्रद समझना चाहिये। यह तो प्रारम्भिक अवस्था की बात हुई।

उपरोक्त कथन के द्वारा हम इस तथ्य पर पहुंचे कि प्रारम्भिक अवस्था में मनुष्य को आशा के बदले निराशा का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करना चाहिये। परन्तु एक बार आशा के चंगुल में फंस जानेपर उससे निकलने का कोई रास्ता नहीं रह जाता। वैसी दशा में मंत्र मुग्ध की तरह आशा की अराधना करनेमें ही मनुष्य अपना कल्याण समझता है। आशा के बाद आने वाली निराशा संसार के सभी सुखों पर हड़ताल फेर देती है। सचमुच उस अवस्था में अभागे मनुष्य को सुख और शान्ति का बहिष्कार करने के लिये बाध्य होना पड़ता है। ओफ! निराशा की भयंकर ज्वाला से ईश्वर मनुष्य समाज की रक्षा करे!

मालूम पड़ता है कि पेड़ के नीचे बैठा हुआ यह नवयुवक भी निराशा के भयंकर चक्र में पड़ गया है। उसके चेहरे से वैराग्य के भाव स्पष्ट रूप से टपक रहे हैं। उसकी आंखें स्पष्टतः यह कह रही है कि यह दुनियां धोखे की टट्टी है। उसके सुन्दर मुख मंडल से बेचैनी के भाव स्पष्टतः रूपसे दिखलायी दे रहे हैं। उसका सुन्दर शरीर गुलाब के सूखे हुए फूल की तरह मुर्झा गया है। हृदय से अब भी ज्वाला की लू निकल रही है। देखते ही देखते उसका चेहरा और भी भयंकर रूप धारण करने लगा। बेचैनी के साथ लड़खड़ाती हुई आवाज से वह स्वतः बोलने लगा—"देख लिया, स्वार्थ की लीला भूमि इस असार संसार को! इसकी बुराई देखी, अफसोस! अच्छाई देखने का मौका न मिला। लोगों का कहना है कि यहां अच्छे और बुरे, अपने और पराये, दोनों ही रहते हैं; परन्तु मुझे तो कोई खूबी नजर नहीं आई। मेरे साथ तो किसी ने अपने की तरह बर्ताव नहीं किया। सम्भव है कि मेरा अनुभव अपूर्ण हो, संसार के सम्बन्ध में

मेरी जानकारी यथेष्ट न हो। अब अनुभव प्राप्त करने का समय भी नहीं रहा। यदि चाहूं जब भी मैं ऐसा नहीं कर सकता। अब तो मैं चन्द मिनटों का मेहमान हूं। आह! जहर की ज्वाला बेतरह परेशान कर रही है। सचमुच बड़ी शक्ति होती है जहर में भी, ऐसा होना स्वाभाविक ही है। यदि इसमें अपार शक्ति न हो तो किस तरह यह मुझ जैसे अभागों को बात की बात में संसारिक कष्टों से छुटकारा दे दे। खैर, अब तो चला किसी दूसरे जन्म में संसार की खूबी को भी परखने की चेष्टा करूंगा। नहीं, नहीं ईश्वर न करे कि इस भयंकर संसार में फिर कभी पैदा होना पड़े। भगवान! इस कष्ट पूर्ण संसार में फिर न भेजना। "इस अभागे की तुमसे यही अन्तिम प्रार्थना है।" इतना कहते हुए उसकी जबान लड़खड़ा गयी। वह घायल शिकार की तरह जमीन पर छटपटा कर लोटने लगा।

आठे बजे संध्या की यह बात है। कलकत्ते का इडन गार्डन इस समय तक प्रायः सूना हो चुका है। लोगों की भीड़ हट चुकी है। गिने गिनाये मनुष्य ही यत्र तत्र घूम रहे हैं। कुछ देर से एक सज्जन छिपकर बड़ी उत्सुकता के साथ पेड़ के नीचे बैठे मनुष्य का प्रलाप सुन रहे हैं। उसकी सभी बातें सुन लेने के बाद उन्हें पता लग गया कि किसी भयंकर विपत्ति के कारण आत्म हत्या करने के विचार से इस मनुष्य ने जहर खा लिया है। उसकी अवस्था देखकर उन्हें यह भी पता लग गया कि जहर काफी असर डाल चुका है। यदि शीघ्र ही इसकी चिकित्सा न की गयी तो इसका बचना मुश्किल हो जायगा।

उसकी रक्षा करने की भावना धीरे धीरे उनके हृदय में प्रबल हो उठी। वे उत्सुकतापूर्वक उस अर्द्धमूर्छित मनुष्य के समीप जाकर बोले—"आप

इस अवस्था में यहां क्यों पड़े हुए हैं। मालूम पड़ता है कि आप किसी भयंकर विपत्ति में फंस गये हैं।"

बड़ी कठिनाई के साथ उस नवयुवक ने उत्तर दिया—"आप कौन हैं? इस समय मुझे शान्ति के साथ मरने दीजिये। मैं परमपिता परमात्मा की आराधना कर रहा हूँ।"

जिज्ञासु सज्जन बोले—"आपकी अवस्था देख कर मैं विचलित हो रहा हूं। मालूम पड़ता है कि आप किसी भयंकर विपत्ति के भय से आत्महत्या कर रहे हैं। पेड़ की ओट से मैंने आप की दुखपूर्ण बातें सुनी हैं। आप हताश न हों। अभी अपने घर ले जाकर मैं आपकी सेवा-सुश्रुषा कराता हूं, आप जीवन से निराश न हों।"

बड़े ही कष्ट के साथ नवयुवक ने उत्तर दिया—"दयालु बन्धु! इस शुभ कामना के लिये आपको अनेक धन्यवाद। परन्तु अब मैं इस स्वार्थी संसार में एक क्षण के लिये भी रहना नहीं चाहता। यदि आप मेरे सच्चे बन्धु हैं, तो शान्तिपूर्वक मुझे इस संसार से बिदा होने दीजिये। भगवान आपका भला करेगा। यदि आप मुझपर कुछ अधिक कृपा दिखलाना चाहते हों तो मेरी लाश का संस्कार हिन्दू प्रथा के अनुसार करा दीजियेगा। बस, इसे ही मैं आपकी सबसे बड़ी कृपा समझूंगा। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि अन्तिम समय में मुझे एक ऐसे आदमी से मुलाकात हुई जिसने मेरे साथ आत्मीयता का बर्त्ताव किया। अन्तिम समय की यह प्रसन्नता मेरे लिये बड़ी मूल्यवान वस्तु है। मैं भगवान को आपकी आत्मीयता की कहानी सुनाऊँगा।" इतना कहते कहते वह नवयुवक बेहोश हो गया। उसका चेहरा उस समय तक पीला पड़ चुका था। सांस तेजी

के साथ चलने लगी थी। अवस्था देखने से यही मालूम होता था कि चन्द मिनट के भीतर ही उसकी जीवन लीला समाप्त हो जायगी।

उसकी वह अवस्था देखकर बेचारे बड़ी विपत्ति में पड़े। कुछ सोचने विचारने का भी समय न था। फाटक पर उनकी मोटर खड़ी थी। तुरत उन्होंने ड्राइवर को बुलाया। उसकी सहायता से वे किसी प्रकार उसे अपनी मोटर तक ले गये। पुलिस की आँख पड़ जाने पर विपत्ति में पड़ने का भय था। भला चंगा होने पर उस अभागे नवयुवक पर आत्महत्या करने की चेष्टा का मामला चल सकता था। बड़ी कठिनाई से पुलिस की आँख बचाते हुए वे उसे अपनी कोठी पर ले आये। उनके चतुर ड्राइवर ने इस कार्य में उन्हें बड़ी सहायता दी।

कोठी पर पहुँचते ही उन्होंने तुरत टेलीफोन के द्वारा डाक्टर को बुलाया। शीघ्र ही सेवा-सुश्रूषा आरम्भ हो गयी। चिकित्सा में कोई कोर कसर नहीं की गयी। बात की बात में सैकड़ों रुपये डाक्टरों की जेब में पहुँच गये। उल्टी के द्वारा जहर का असर बहुत कुछ कम किया गया। नाना प्रकार के उपचार से उसकी अवस्था सुधरने लगी। डाक्टरों ने उसका जीवन खतरे से खाली बतलाया।

बारह बजे रात्रि तक निरंतर चेष्टा होने पर बेचारे की अवस्था कुछ सुधरी। उसकी बेहोशी तो पहले भी कई बार दूर हो चुकी थी, पर यह अवस्था चन्द मिनटों तक ही रहने पाती थी। शीघ्र ही वह फिर बेहोश हो जाता था। इस बार १५-२० मिनट से वह बेचैनी के साथ बिस्तरे पर उलट पुलट कर रहा है। बगल में उसकी रक्षा करने वाले सज्जन एक कुर्सी पर बैठे हुए हैं। दो-तीन नौकर इधर उधर दौड़ धूप लगा रहे हैं।

अवस्था कुछ सुधरने पर नवयुवक ने कहा—"क्या मैं जान सकता हूं कि मैं कहां पड़ा हुआ हूं"।

बगल में बैठे हुए सज्जन ने कहा—"आप किसी बात की चिन्ता न करें। आप सुरक्षित स्थान में हैं।"

व्यग्रता के साथ नवयुवक ने कहा—"यह नर्क है या स्वर्ग? देखने से तो यह स्वर्ग ही मालूम पड़ता है। ऐसा सुन्दर नर्क नहीं हो सकता। परन्तु मैं स्वर्ग में कैसे चला आया? आत्म-हत्या करने वालों को तो स्वर्ग नहीं मिलता। वे तो भयंकर पापी समझे जाते हैं। फिर मैं यहां किस प्रकार चला आया?"

दुखित भाव से उक्त सज्जन ने कहा—"आप होश में आइये। आप अभी जीवित अवस्था में है।" अब आपकी जान किसी प्रकार खतरे में नहीं है।

नवयुवक ने आश्चर्य से कहा—"आपकी बातें तो ठीक मालूम पड़ती हैं। मैं सचमुच जीवित हूं। परन्तु ऐसा किस प्रकार हुआ? क्या मेरा कष्ट दूर करने की शक्ति भयंकर जहर में भी नहीं है? हाय, मैं कैसा अभागा हूं? किस तरह मैं फिर इस संसार के चक्र में फँस गया?"

उसकी रक्षा करने वाले सज्जन ने उत्तर दिया—"अभी आप अधिक कमजोर हैं। अधिक बातें करने से आपकी अवस्था खराब हो सकती है। डाक्टरों ने आपको उत्तेजना से दूर रखने की सलाह दी है। अवस्था ठीक होने पर आपको स्वतः सभी बातों का पता लग जायगा।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद नवयुवक ने कहा—'क्या मैं किसी अस्पताल में पड़ा हूं? पुलिस को तो मेरे कार्यों का पता अवश्य लग गया होगा।"

सज्जन ने उत्तर दिया—"आप सुरक्षित रूप से एक मित्र के घर में हैं। आप अस्पताल और पुलिस की चिन्ता छोड़ दें। मेरे जीते जी कोई आपका बाल भी बांका नहीं कर सकता।"

आश्चर्य के साथ नवयुवक ने कहा—"मैं और मित्र? क्या इस दुनियां में मेरा भी कोई मित्र हो सकता है? नहीं, नहीं आप भूलते हैं। इस संसार में मेरा कोई भी मित्र नहीं है, इसका मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं।"

नम्रता के साथ उक्त सज्जन ने उत्तर दिया—"आप मुझ पर दया कर कृपया चुप हो जाइये। अधिक बातें करने से आपकी अवस्था खराब हो सकती है। इस समय आप बहुत कमजोर हैं।"

नवयुवक—"मालूम पड़ता है कि आपने ही मेरी रक्षा की है। इसलिये आपकी बात मैं जरूर मानूंगा। लेकिन कल आपको सारी बातें अवश्य बतलानी पड़ेगी।"

सज्जन—"हां, कल आपको अवश्य ही सारी बातें मालूम हो जायगी। इस समय आप शान्तिपूर्वक विश्राम करें। इस क्षुद्रजीव से ही आज आपकी थोड़ी बहुत सेवा हो सकी है।"

अपने प्राणरक्षक की बातें सुन कर नवयुवक ने कृतज्ञता पूर्वक उनकी ओर देखा। परन्तु उनके अनुरोध की रक्षा के विचार से कोई उत्तर नहीं दिया।

थोड़ी देर के बाद उसकी आंख लग गयी। दो-तीन घंटे तक वह शान्तिपूर्वक सोया। इस से लोगोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। उसे पुनर्जीवन प्रदान करनेवाले सज्जन रात भर उसको देख रेख में रहे। नौकरों के द्वारा

सोनेका बहुत आग्रह किये जाने पर वे विश्राम करनेके लिये एक बार अपने शयनगृह गये भी, पर उन्हें नींद नहीं आई, वहां वे बेचैनीका अनुभव करने लगे। उसी समय वे बेचारे नवयुवक की देख रेख करने के लिये चले आये। इस बार उनकी स्त्री भी साथ थी। इस कारण नौकर आदि उस कमरे से बाहर चले गये।

लगभग चार बजे रात्रि के समय नवयुवक की आंख खुली। इस समय तक उसका बेचैनी बहुत कुछ दूर हो चुकी थी। सिर्फ कमजोरी बच रही थी। टेलीफोन के द्वारा डाक्टर से परामर्श कर उस समय उसे थोड़ा गर्म दूध पीने के लिये दिया गया। दूध पीकर कुछ स्वस्थ्य होने पर उसने कहा—"क्या अब मैं जान सकता हूं कि मैं यहां किस प्रकार लाया गया। पहले की बातें मैं एकदम भूल गया हूं। मुझे थोड़ा थोड़ा केवल यही याद है कि मैंने आत्महत्या करनेके विचार से जहर खाया था। उसके बाद की घटनायें मुझे याद नहीं है।"

सज्जन—"आप अर्द्ध मुर्छित अवस्था में एडेन गार्डेन में पड़े थे। वहां से मैं मोटर पर आपको अपने यहां ले आया। यहां सेवा सुश्रुषा होने पर किसी प्रकार आप की रक्षा हो सकी, इसके लिये ईश्वरको धन्यवाद है।"

नवयुवक—"क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूँ?"

सज्जन—"मैं यहां का एक व्यवसायी हूँ। आप लोगों की दया से कारबार ठिकानेसे चल रहा है। एक निज की कपड़े की माल भी है।"

नवयुवक—"क्या मैं आपका नाम जान सकता हूं?"

सज्जन—"मेरा नाम मेहरचन्द है।"

नवयुवक—"आपके माता पिता जीवित हैं।"

मेहरचन्द—"नहीं, मैं ऐसा भाग्यशाली नहीं हूं। तीसरे साल माताजी की मृत्यु हुई थी। पिताजी को मृत्यु हुए भी दो मास व्यतीत हो चुके हैं।"

नवयुवक—"आपने मुझे पुनर्जीवन प्रदान किया है। किन शब्दों में मैं आपके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करूं?"

मेहरचन्द—"कृतज्ञता की कोई बात नहीं है। मनुष्य के द्वारा ही मनुष्य की सेवा होती है। मेरे द्वारा आप की कुछ सेवा हो सकी है, इसके लिये मैं अपने को भाग्यशाली समझता हूं। भगवान शीघ्र आपको स्वस्थ्य बनावें।"

नवयुवक—"अवश्य मनुष्य के द्वारा मनुष्य की सेवा होती है। इस बात को बचपन से ही मैं सुनता आया हूँ। परन्तु मुझे तो ऐसा कोई भी आदमी नहीं मिला था, जिसे मैं अपना सच्चा शुभचिन्तक कहने का दावा करता। मैं तो सच्चा शुभचिन्तक पाने की प्यास लिये ही इस दुनियां से जा रहा था। ईश्वर की दया से आप के रूप में वह प्यास बुझी और बुझी एक नाटकीय अभिनय के रूप में।"

मेहरचन्द—"मनुष्य कुछ नहीं करता। दुनियां के सभी कार्य ईश्वर के द्वारा ही होते हैं। मनुष्य तो उसका साधन मात्र हैं। कल मैं अचानक ही एडेन गार्डेन पहुँच गया था। प्रति दिन वहां जाने का अभ्यास मुझे नहीं है। परिवारिक अशान्ति से ऊब कर थोड़ी देर तक तबीयत बहलाने के विचार से मैं वहां गया था। ईश्वर की दया से आप पर मेरी नजर पड़ी और आपकी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यदि उस समय मैं संयोगवश वहां नहीं पहुँचता तो आपकी सेवा का सुख मुझे किसी प्रकार प्राप्त नहीं हो सकता था।"

नवयुवक—"मेरी रक्षा के लिये ही भगवान ने आपको वहां भेजा था।"

मेहरचन्द—"मैं आपकी दुखपूर्ण कहानी जानने के लिये उत्सुक हो रहा हूं। पर इस समय उन बातों की याद दिला कर मैं आप को दुखित करना नहीं चाहता। अभी आप काफी कमजोर हैं। ऐसी दशा में बीती हुई बातों की स्मृति से आपकी अवस्था फिर बिगड़ सकती है। इस कारण मैं अभी अपनी उत्सुकता को दबा रखता हूं। पूर्ण स्वस्थ्य होने पर आपकी कहानी सुनुँगा। परन्तु आप से मैं अनुरोध करना चाहता हूं कि इस समय से आप मुझे अपना बन्धू तथा मेरे घर को अपना घर समझें।"

नवयुवक—"सब आप की दया है। आप जैसे उपकारी मनुष्य के साथ बन्धुत्व स्थापित होनेका मुझे गौरव है। यदि आप मेरी कहानी सुनना चाहते हैं, तो मैं अभी सुनाने के लिये तैयार हूं। अब मेरी अवस्था खराब नहीं हो सकती। मैं काफी स्वस्थ हो चुका हूं।"

मेहरचन्द—"नहीं इस समय उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। दुख की बात याद आने पर आप के मस्तिष्क पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ेगा। उससे आप की हानि हो सकती है।"

नवयुवक—"जैसी आज्ञा आपकी।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद नवयुवक ने फिर कहा—"क्या मैं इस देवी का परिचय पा सकता हूं? सम्भवतः ये आप की..."

बीच में ही बात काटते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"हां, ये मेरी धर्म पत्नी हैं।"

उन्हें प्रणाम कर नवयुवक ने कहा—"आज से मैं इन्हें अपनी बहन समझूँगा। आप लोगों की दया से ही मेरा पुनर्जीवन हुआ है।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद नवयुवक ने फिर कहा—"अब मैं स्वस्थ्य हूं। रात भर आप लोग व्यस्त रहे हैं। मेरी चिन्ता छोड़ कर कृपया अब आप विश्राम कीजिये।"

बाबू मेहरचन्द को भी थकावट मालूम पड़ने लगी थी। एक नौकर पर नवयुवक की देख रेख का भार छोड़ कर वे सपत्नीक बिश्राम करने के लिये चले गये।

चौथा अध्याय

अच्छे रुपयों के साथ कुछ खोटे सिक्कों का चल जाना भी सम्भव हो जाता है। लोग रंग रूप तथा चमक दमक देख कर उन्हें स्वीकार कर लेते हैं। परीक्षा लिये जाने पर पीछे भले ही उन का मोल घट जाय, पर प्रारम्भ में अन्य रुपयों के साथ वे पूरे दाम में अवश्य निकल जाते हैं। लीडरी के इस युग में नेताओं के सम्बन्ध में ही यही बात लागू हैं। नेतागिरी का काम कितना दायित्वपूर्ण हैं, इस बात को प्रायः सभी कोई जानते हैं। नेता ही समाज का बास्तविक सूत्रधार होता है। वह अपनी इच्छा के अनुकूल समाज का संचालन करता है। इस जमाने में किसी देश अथवा समाज का उत्थान पतन उस नेता के कार्यों पर ही विर्भर करता है। यह प्रजासत्तात्मक युग है। इस में नेता ही जनता के बास्तविक शासक होते हैं। देश के शासकों को भी अपने को उन की इच्छा के अनुकूल बनना पड़ता है। प्रत्येक देश का वर्तमान इतिहास इस कथन का साक्षी है। यदि एक शब्द में इस युग को नेता युग कहा जाय तो कोई अत्युति नहीं होगी।

नेताओं का इतना प्रभाव तथा महत्व रहने के कारण प्रत्येक समाज तथा श्रेणी में नेताओं का प्रादुर्भाव होना स्वभाविक तथा अनिवार्य हैं। अन्य लोगों की तरह मजदूरों के भी नेता हैं। वे उनकी भलाई में सदैव उद्योगशील रहते हैं। मजदूरों की अवस्था सुधारना ही उनका प्रधान उद्देश्य रहता है। बिलायत के मजदूर दल का इतिहास इस कथन का स्पष्ट उदाहरण है। हमारे देश में भी मजदूरों के अनेक बिचारशील नेता हैं। वे उनकी भलाई के लिये सदैव उद्योगशील रहते हैं। पर अच्छे या बुरे प्रत्येक समाज तथा श्रेणी में रहते हैं। इस कारण कोई आश्चर्य की बात नहीं यदि मजदूरों के बीच काम करने वाले भी कुछ स्वार्थी लोग हों और खोटे सिक्के की तरह उनका भी वास्तविक नेता की तरह सम्मान होने लगा हो, जिनका स्वार्थसाधन के सिवा दूसरा कोई उद्देश्य नहीं; फिर भी वे नेता के पवित्र नाम से पुकारे जाते हों।

बाबू रामकुमार प्रसाद को हम इसी श्रेणी का मनुष्य कह सकते हैं। इन का जीवन भी बड़ा ही विचित्र तथा रोमाञ्चपूर्ण है। बचपन में इन्हों ने मैट्रिक श्रेणी तक शिक्षा पायी थी। नाना प्रकार के कार्यों में अपने को लिप्त कर लेने के कारण वे मैट्रीक पास न कर सके। कुछ दिनों तक तो पिता जी की कमाई के बल पर इधर उधर भटकते रहे। हिन्दुस्तान का कोई भाग शायद ही ऐसा बच रहा हो जिसकी यात्रा आपने न की हो। परन्तु पिता की मृत्यु के बाद ही सारी मस्ती दूर हो गयी। घर का बोझ सिर पर पड़ते ही विचलित हो उठे। अन्त में बड़ी चेष्टा करने पर इन्हें एक मील में क्लर्की का काम मिल गया। आदमी हरफन मौला थे ही। किसी प्रकार परिवार के भरण-पोषण के लायक रुपया पैदा कर लिया करते थे।

मील के अन्य कर्मचारियों के साथ भी इन्होंने काफी परिचय कर लिया था, वहां के मजदूरों के साथ भी वे हिले मिले रहने की चेष्टा करते थे। कुछ लोगों के सहयोग से इन्होंने कर्मचारी संघ नामक एक संस्था भी कायम कर ली थी। इस मील के अधिकांश कर्मचारी उसके सदस्य थे।

लगभग दो वर्ष तक तो अपना समय इन्होंने किसी प्रकार व्यतीत किया; परन्तु इस बीच में ही मील के असिस्टेन्ट मैनेजर की युवती बालिका मिस कूपर के साथ इनकी आंख लड़ गयी। ये जरा सुन्दर चेहरा तथा हँसमुख प्रकृति के आदमी थे। इस कारण मिस कूपर भी इनके साथ कभी कभी हँस हँस कर बातें कर लिया करती थी। इसे इन्होंने प्रेम प्रदर्शन समझा। चन्द महीनोंके बाद ही ये मिस कूपर को अपनी प्रेमिका समझने लगे। बात-चीत करने का मौका तो ये किसी प्रकार निकाल लेते थे, पर उससे विशेष प्रेमालाप करने का इन्हें अवसर नहीं मिलता था। गोरी बालिकाओं के साथ किस प्रकार प्रेमालाप करना चाहिये, यह भी इन्हें मालूम नहीं था। मिस कूपर का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करने के लिये यह भेद जानना आवश्यक था।

अन्त में इन्होंने एक उपाय सोचा। इधर उधर भटकने वाले एक अंग्रेज के साथ इन्होंने मित्रता की। कभी कभी होटलों में जाकर ये उसके साथ चाय, ह्विस्की आदि भी उड़ाया करते थे। उस बेचारे को भी अच्छा शिकार हाथ लगा। वह इन्हें नाना प्रकार का प्रलोभन देकर खुश रखना चाहता था। विशेष हिलमिल जानेपर इन्होंने उससे मिस कूपर को हाथमें लानेकी तरकीब पूछी। बहुत आग्रह करने पर मार्ग तो उसने बतला दिया, पर उस दिन से वह इनके ऊपर कड़ी निगाह रखने लगा और मिस कूपर के

पिता को यह भेद बतला कर वह मील में कोई नौकरी पा जानेका भी स्वप्न देखने लगा।

अब रामकुमार प्रसाद के सामने कोई कठिनाई न थी। इन्हें इस बात का तो विश्वास था ही कि मिस कूपर इनको प्यार करती है, ये भी उस पर जी जान से फिदा थे। कमी केवल एक पथ प्रदर्शक की थी, अपने नवीन अंग्रेज मित्र के रूपमें उन्होंने इस कमी की पूर्ति कर ली। उस दिनसे ये इस चेष्टामें रहने लगे कि किस प्रकार मिस कूपरको किसी होटलमें भोजन करने के लिये निमंत्रित करें। पर यह प्रस्ताव करने का उन्हें साहस नहीं होता था। बात भी स्वाभाविक ही थी। एक अदने क्लर्क को इतना साहस कहां हो सकता है कि खुल्लम खुल्ला अंग्रेज मैनेजर की कन्या से प्रेमालाप करे। परन्तु प्रेमका उन्माद किसी कठिनाई के सामने सिर झुकाना नहीं चाहता। लगातार कई सप्ताह की चेष्टा के बाद एक दिन उन्होंने मिस कूपर को भोजन करने के लिये निमंत्रित कर ही दिया। बड़ी हिचकिचाहटके साथ उसने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया।

स्वीकृति मिल जाने पर रामकुमार प्रसाद की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं रही। वे मन ही मन अपने भाग्यकी बार बार सराहना करने लगे। संध्या समय अपनी कल्पित प्रेमिका के साथ वे होटल में पहुंचे। बात की बात में चाय ह्विस्की का बाजार गर्म हो गया। प्रेमपूर्वक बातेंकर वे खाने पीने लगे। इसी समय अपने अंग्रेज मित्रके बतलाये हुए मार्गके अनुसार इन्होंने प्रेम प्रदर्शन करना शुरू किया। मिस कूपर ठीक इनके सामने बैठी थी। बीच में संगमरमर का सुन्दर टेबल पड़ा हुआ था। रामकुमार प्रसाद ने अपने पैर से मिस कूपर का पैर धीरेसे दबा दिया। उनके इस व्यवहार ने

उसके हृदय में सन्देह पैदा कर दिया। पहले उसने समझा कि शायद धोखे से पैर पड़ गया हो। पर दुबारा पैर दबाये जाने पर उसका सन्देह और भी पुष्ट हो गया। फिर भी परीक्षा लेने के लिये उसने भी अपने अंगूठे से उनका पैर दबा दिया। फिर क्या था? रामकुमार प्रसाद ने उसे मिस कूपर की स्वीकृति समझी। वेस्वतंत्रतापूर्वक उससे प्रेमालाप करने की चेष्टा करने लगे।

जिसका निमंत्रण स्वीकार कर वह होटलमें भोजन करने आई हो, उसके साथ वहां किसी प्रकार की रुखाई का वर्ताव करना मिस कूपर ने साधारण शिष्टाचार के विरुद्ध समझा। निःसन्देह कई महीनों से वह रामकुमार प्रसाद से खूब हिलमिल कर बातें करती थी। पर उनके प्रति उसके हृदय में कभी प्रेम की उत्पत्ति नहीं हुई थी। उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि उसके पिता की आधीनतामें काम करनेवाला एक अदना क्लर्क उसे अपनी प्रेमिका बनाने की चेष्टा करेगा। आजके निमंत्रण के सम्बन्ध में उसकी धारणा थी कि शायद उसे खुशकर वह उसके पिता से कोई काम निकालना चाहता है। उसके साथ ही उसने सोचा कि निमंत्रण अस्वीकार करने पर शायद उसे दुख हो। मिस कूपर का कोमल हृदय किसी को व्यर्थ ही दुख देना नहीं चाहता था, इस कारण उसने निमंत्रण स्वीकार कर लिया था। यदि वह जानती कि इसमें प्रेमरहस्य छिपा है तो किसी भी अवस्था में निमंत्रण स्वीकार नहीं करती।

खैर, बड़ी बुद्धिमानी के साथ बिना किसी छेड़छाड़ के मिस कूपर होटल से लौट आई। लौटने पर उसने रामकुमार प्रसाद को खूब फटकारा। फटकारने के बाद उसने कहा कि सारा भेद खोलने की अवस्थामें तुम्हारी नौकरी

छूट जाने का भय है। इस बातका पता लगते ही पिताजी तुम पर बहुत नाराज हो जायंगे, वैसी दशा में तुम्हारी नौकरी किसी प्रकार बच नहीं सकती। मैं नहीं चाहती हूं कि मेरे कारण किसी को कष्ट हो। इस कारण मैं यह बात किसी को बतलाऊंगी नहीं। परन्तु आजसे तुम फिर कभी प्रकार की घृणित चेष्टा नहीं करना।

बेचारे रामकुमार प्रसाद अपना सा मुंह लिये घर लौट आये। दो-चार दिनों तक तो लज्जाके भार से वे दबे रहे। परन्तु धीरे धीरे प्रतिहिन्सा की भावना उनके हृदयमें प्रबल होने लगी। उन्होंने सोचा कि सैकड़ों रुपये नष्ट कराकर मिस कूपर ने उन्हें अच्छा मूर्ख बनाया। इस भावना के प्रबल होते ही वे मिस कूपर के कट्टर शत्रू बन गये। उसे अपमानित करने के लिये इन्होंने दो-एक गुण्डों को भी नियुक्त किया। धीरे धीरे इन बातों की खबर मिस कूपर को भी लगी। बात इस प्रकार बढ़ते देखकर उसने अपने पिताजी को इन बातों की सूचना दे दी। रामकुमार प्रसाद के अंग्रेज मित्रके द्वारा उन्हें इन बातोंकी थोड़ी बहुत सूचना मिल चुकी थी। परन्तु कूपरके कथन से उसकी और भी पुष्टि हो गयी।

वे भला एक अपने क्लर्क को इस प्रकार की शोखी किस तरह बर्दाश्त करते। तुरत कोई बहाना ढूंढ़ कर उन्होंने रामकुमार प्रसाद को बर्खास्त कर दिया। परन्तु रामकुमार प्रसाद भी पूरे घुटे हुए आदमी थे। इस प्रकार बात की बात में उन्होंने नौकरी से अलग होना उचित नहीं समझा। झट उन्होंने अपने द्वारा स्थापित कर्मचारी संघ की एक सभा बुलाई और गर्मा-गर्म व्याख्यान झाड़ते हुए यह बतलाया कि जितने दिनों तक मुझ से आप लोगों की सेवा हो सकी, मैंने की। मील के अधिकारियों को यह

स्वीकार नहीं कि यहां के कर्मचारी संघठित रूप से अपने सुधार की चेष्टा करें। इस संघ के जन्मदाता होने के कारण उन लोगों की कड़ी नजर मुझ पर ही है। इस कारण मैं मील की नौकरी से अलग होता हूं। फिर भी आप लोगों की बराबर सेवा करते रहने की चेष्टा करता रहूँगा। मुझे आशा है कि बाहर रह कर मैं आप लोगों की और भी अधिक सेवा कर सकूंगा। उस समय परन्त्रता का कोई भाव नहीं रहेगा। मील की नौकरी से अलग होने के थोड़े दिन बाद ही मैं आप लोगों के सामने एक विस्तृत कार्यक्रम लेकर उपस्थित होऊँगा और यदि आप लोग मुझे सेवा का अवसर देंगे तो मैं अवश्य ही आप लोगों की यथाशक्ति सेवा करता रहूँगा।

इस व्याख्यान का मील के मजदूरों पर काफी प्रभाव पड़ा। उन्होंने रामकुमार प्रसाद को सच्चा त्यागी समझा। उनकी भलाई करने की चेष्टा में वे नौकरी से अलग हो रहे हैं, यह बात सोच कर लोगों का हृदय भर आया। तुरत उन्हें एक थैली भेंट करने के लिये उन लोगों ने चन्दा किया। लोहा गर्म था, रामकुमार प्रसाद के लिये लोगों के हृदय से बारबार आहें निकल रही थीं। बात की बात में ६ सौ रुपया इकट्ठा हो गया। तुरत वह रकम उन्हें प्रदान की गयी।

उस दिन से रामकुमार प्रसाद क्लर्क के बदले मजदूरों के नेता बन गये। इस काम को ही उन्होंने अपना पेशा बना लिया। यदि इसे पेशा बनाते हुए भी वे सचाई के साथ काम करते तो कोई बात नहीं थी। परन्तु मजदूरों की शक्ति का उपयोग कर उल्लू सीधा करना ही उन्होंने अपना प्रधान कार्यक्रम बना लिया। रुपये की लालच में पड़ कर किसी मील में हड़ताल करा देना उनके लिये अदनी बात थी। इतना होते हुए भी बेचारे मजदूर उन्हें बड़ी इज्जत की नजर से देखते थे।

पाँचवाँ अध्याय

प्रत्येक देश की अवस्था का अन्दाजा, उसके मजदूर तथा किसानों की दशा के द्वारा ही लगाया जा सकता है। मजदूर तथा किसान ही किसी भी देश के वास्तविक प्रतिनिधि होते हैं। उनकी उन्नति तथा अवनति पर ही किसी देश की उन्नति अथवा अवनति निर्भर करती है। गरीब से गरीब देश में भी मोटर की सवारी करने वालों की एक श्रेणी होती है। परन्तु उनकी मोटर के बल पर वह देश धनी नहीं कहा जा सकता। गिने-गिनाये करोड़पति किसी दरिद्र देश को धनाढ्य नहीं बना सकते। उनकी मोटरें तथा ऊंची दीवारें उनकी निजी सम्पत्ति हैं। देश की सामुहिक सम्पत्ति में उसका सुमार होने पर भी उपयोगिता की दृष्टि से देश को उससे कोई लाभ नहीं है। दरिद्र किसान तथा मजदूर के परिश्रम के बल पर ही कोई देश अपना मुख उज्वल कर सकता है।

संसार के प्रायः सभी देशों ने इस तथ्य को समझा है। इस कारण गरीबों की अवस्था उन्नत करने की ओर लोगों का विशेष ध्यान है। पश्चिमीय देशों में मील के मजदूरों की अवस्था सुधार ने की विशेष चेष्टा हो रही है। इंगलैण्ड की वर्तमान राजनीति तो इस समस्या के गहन तत्वों पर ही निर्भर करती है। जो राजनीतिक दल मजदूरों की अवस्था सुधारने का सब से सुन्दर तथा उपयोगी कार्यक्रम पेश करता है, देश के राजनीतिक क्षेत्र में उसी की तूती बोलती है। परन्तु हमारे देश की अवस्था सर्वथा विपरीत है। यहां मजदूरोंके नाम जो कुछ थोड़ा बहुत किया भी जाता है, उससे उनका वास्तविक मंगल होने पाता है या नहीं, इस सम्बन्ध में, निश्चयपूर्वक कुछ कहना कठिन है।

मजदूरों की आन्तरिक अवस्था से साधारणतः लोग परिचित हैं। आधा पेट भोजन, फटा-चिटा वस्त्र, अज्ञानता का अन्धकार आदि उनकी विशेषतायें हैं। इस जीवन में ही वे नर्क के कष्टों का अनुभव करते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। और इस प्रकार उन लोगों का कथन सत्य प्रमाणित होता है, जो यह कहते हैं कि स्वर्ग तथा नर्क का सुख दुःख लोगों को इस जीवन में ही भोगना पड़ता है।

अन्य मीलों की तरह फतेहचन्द काटन मिल्स के मजदूरों की भी दशा दयनीय हैं। यों तो मजदूरों को बहुत थोड़ी मजदूरी मिलती है। किसी प्रकार बड़ी कठिनाई के साथ वे उसके द्वारा अपना जीवन निर्वाह करते हैं। परन्तु इतना बस नहीं है। इस दुःखपूर्ण जीवन में भी कुछ आदमी उन का रक्त चूसने में अपना कल्याण समझते हैं। मजदूरों के रक्त शोषकों में प्रधानतः उनके मेंट तथा उन्हें दस-पांच रुपये उधार देने वाले काबुली होते हैं। प्रायः प्रत्येक मील में काबुलियों का एक अड्डा होता है और वे लोग थोड़े रुपयों का जाल बिछा कर बराबर मजदूरों का रक्त चूसते रहते हैं। उनका सूद आवश्यकता से बहुत अधिक कड़ा होता है। बेचारे मजदूर सूद देते देते ही तबाह हो जाते हैं। असल से कई गुना अधिक सूद के रूप में दे देने पर भी असल चुकाने का सौभाग्य बेचारे मजदूरों को नहीं होता, और इस प्रकार वे बराबर कर्ज के बोझ से दबे रहते हैं। साप्ताहिक वेतन मिलने के साथ ही वे अपनी गाढ़ी कमाई का एक हिस्सा सूद के रूप में काबुलियों को सुपुर्द करते हैं।

रक्त शोषकों में काबुलियों के बाद मेंटों का नम्बर आता है। प्रत्येक मजदूर की बहाली के समय घूस के रूप में वे उससे रुपये लिया करते हैं।

चूंकि केवल बहाली के समय उन्हें रुपया मिलता है, इस कारण बहाल किये गये मजदूरों को किसी न किसी बहाने हटा कर वे दूसरों को नियुक्त करने की चेष्टा करते हैं। इस कारण मजदूरों की नौकरी बराबर अनिश्चित अवस्था में रहती है और एक बार काम से हटा दिये जाने पर फिर दूसरी बहाली के लिये काबुलियोंसे कर्ज लेकर उन्हें मेट-पूजा करनी पड़ती है। इस प्रकार थोड़ी मजदूरी पर भी वे शान्तिपूर्वक जीवन बिताने नहीं पाते। संक्षेपतः मजदूरों की आर्थिक कठिनाइयों का यही दिग्दर्शन है।

रामपलट फतेहचन्द काटन मिल्स का एक साधारण मजदूर है। उसके भाग्यविधाता अथवा मेट शिवदयाल की शनि दृष्टि रहने के कारण इन दिनों उसे नौकरी से हाथ धोना पड़ा है। फिर से बहाल किये जाने के लिये उससे पांच रुपये की मांग पेश की जाती है। बेचारा पांच रुपये कहां से दे? इस समय तो पांच पैसे भी उसके लिये पांच अशर्फी हो रहे हैं। गत मास ही उसकी स्त्री के गर्भ से एक अभागा लड़का पैदा हुआ है। इस अवसर पर उसे काबुलियों से दस रुपये उधार लेना पड़ा था। इस कारण वह दरवाजा भी उसके लिये बन्द है। नौकरी छूट जाने के कारण पहले रुपये का सूद चुकाना ही मुश्किल हो रहा है। काबुली अधिक रुपया किस प्रकार दे सकता था।

इधर भूखों मरने की नौबत आ गयी। पेट को क्या पता कि इस समय रामपलट के पास रुपये पैसे का प्रबन्ध नहीं है। उसे तो समय पर भोजन चाहिये। नौकरी रामपलट की छूटी थी। पेट की नौकरी तो उस समय तक अचल अमर है, जब तक उसका शरीर मौजूद है। पेट को मेट और नौकरी के झमेले से कोई मतलब नहीं। उसके साथ ही

बेचारे दुधमुँहें बच्चे को तो गरीबी अमीरी का पता नहीं। वह तो अपने को बादशाह समझता है। वह अपने रूदन को किसी भी शक्तिशाली सम्राट की आज्ञा से कम नहीं समझता। वह तो अपनी आंसू के बून्दों को संसार के सर्वश्रेष्ठ रत्न से मूल्यवान समझता है। उसके हृदय में राग-द्वेष, छल-कपट लेश मात्र भी नहीं है। फिर वह क्यों संसार के कष्टों को सहने के लिये तैयार रहे? वह भोला बादशाह तो अपने को सांसारिक कष्टों से परे समझता है।

बेचारे बच्चे की दुरावस्था देख कर रामपलट का कलेजा चकनाचूर हो जाता था। उसका संतप्त हृदय बार बार ईश्वर को धिक्कारता था। वह तो कभी कभी उन्मत्त तथा पागल हो जाता था। दूध के बिना बच्चे का कराहना कोई माता-पिता किस प्रकार बर्दास्त कर सकता है? रामपलट पर भी इस कष्ट का गहरा प्रभाव सर्वथा स्वाभाविक ही था। आगे भी कोई उम्मीद नहीं थी। काम में लगे रहने की अवस्था में एक सप्ताह के बाद रुपये पैसे का दर्शन होना निश्चित सा रहता है। परन्तु यहाँ तो अन्धकार ही अन्धकार है। मेट-पूजा किये बिना ग्रह से छुटकारा पाने का कोई मार्ग नहीं था।

अन्त में कोई मार्ग न देख कर रामपलट को सुप्रसिद्ध मजदूर नेता बाबू रामकुमार प्रसाद की याद आई। वह उसी समय उनके यहाँ चल पड़ा। पैसे की कमी के कारण बस पर न चढ़ कर वह पैदल ही आठ मील का मार्ग तय कर रामकुमार प्रसाद के यहाँ पहुंचा। उस समय वे अपने एक मित्र से बातें कर रहे थे। उन्हें सलाम कर वह चुपचाप उनकी कुर्सी के बगल में बैठ गया। थोड़ी देर के बाद रामकुमार प्रसाद का ध्यान

उसकी ओर गया। उन्होंने गम्भीरता पूर्वक पूछा—"क्या तुम किसी मील में काम करते हो?"

रामपलट—"जी हां, मैं फतेहचन्द मील में काम करता था।"

रामकुमार प्रसाद—"इस समय क्या नौकरी छूट गयी है?"

रामपलट—"जी हां, मेट ने मुझे पिछले सप्ताह बर्खास्त कर दिया है। इन दिनों मैं बड़े कष्ट में पड़ गया हूं। एक पैसे का भी प्रबन्ध नहीं है। पांच रुपये मिलने पर मेट फिर से बहाल करने के लिये तैयार हुआ है। परन्तु रुपये कहां से दूँ। यहां तो खाने को मुँहताज हो रहा हूं। पैसे की तंगी के सबब से हुजूर के यहाँ पैदल ही आया हूँ।" इतना कह कर वह रोने लगा।

उसे धैर्य देते हुए रामकुमार प्रसाद ने कहा—"घबराने से कोई लाभ नहीं है। धैर्यपूर्वक कष्ट सहने में ही बहादुरी है। तुम मेरे यहां किस उद्देश्य से आये हो?"

रामपलट—"हुजूर! हम लोगों के मां-बाप हैं! इस कष्ट के समय आपके सिवा सहारा देने वाला तो मुझे कोई दिखलाई नहीं दे रहा है। आज हमारी जान बचाइये। सभी कुछ सह सकता हूं, पर दुधमुंहे बच्चे की आह नहीं सही जाती।

रामकुमार प्रसाद—"क्या तुम मुझ से कुछ रुपये पैसे की सहायता चाहते हो?"

रामपलट—"हुजूर! खुद बुद्धिमान आदमी हैं। मैं क्या कहूं? मैं तो आपकी शरण में आया हूं। किसी प्रकार मेरी रक्षा कीजिये।"

बनावटी गम्भीरता दिखलाते हुए रामकुमार प्रसाद ने कहा—"हम

तो केवल दुःख के समय तुम लोगों को याद आते हैं। सुख के दिनों में तो हमारी बात का कोई मूल्य ही नहीं रहता है। कई बार मैंने तुम लोगों से अपील की कि प्रत्येक मजदूर चार आने महीने के हिसाब से चन्दा देकर एक जोरदार संस्था कायम करे। ऐसे मौके पर तुम लोगों को उस संस्था से आर्थिक सहायता भी मिल सकती है। परन्तु तुम लोग तो कोई वास्तविक काम करना नहीं चाहते। अपने दुःख की कहानी सुना कर दूसरों को भी दुःखित करने की शक्ति तुम लोगों में है। यदि अपने को संगठित करके तुम लोग अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आगे बढ़ो तो किस की मजाल की वह तुम को जरा भी दबा सके।

रामपलट—"हुजूर का कहना बिलकुल ठीक है। लेकिन हम लोग तो मूर्ख ठहरे। दस बार समझाने-बुझाने पर कहीं कोई बात हम लोगों के समझ में आवेगी। आप पर हमारी बड़ी भक्ति है। इस विपत्ति में तो आपको अवश्य ही मेरी सहायता करनी पड़ेगी।"

रामकुमार प्रसाद—"तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक। लेकिन तुम्हें मालूम है कि मुझे लाखों मजदूरों के हानि-लाभ का ख्याल करना पड़ता है। यदि प्रत्येक आदमी मुझ से आर्थिक सहायता की आशा करे तो मैं कहां तक सहायता दे सकता हूं।"

रामपलट—"परन्तु मेरे लिये तो कोई दूसरा रास्ता नहीं है। मैं किस प्रकार बाल-बच्चों को भूखा मरता देख सकूँगा। यदि हुजूर मेरी सहायता नहीं करेंगे तो मुझे आत्म-हत्या करनी पड़ेगी।"

रामकुमार प्रसाद—"क्या काबुलियों से रुपया नहीं ले सकते हो?"

रोते हुए रामपलटने कहा—"यदि उनसे रुपया मिल सकता तो हुजूर

को क्यों कष्ट देने आता ? पिछले महीने एक लड़का हुआ है। उस मौके पर मैंने दस रुपये कर्ज लिया था। अभी वह रुपया ही सिर पर सवार है। काबुली आगे रुपया देने के लिए तैयार नहीं होते।"

कुछ सोच कर रामकुमार प्रसाद ने कहा—"यदि मैं काबुली से तुम्हें रुपया दिला दूं, तब तो तुम्हारा काम चल जायगा।"

प्रसन्नता के साथ रामपलट ने उत्तर दिया—"हाँ, मेरे मालिक! रुपया मिल जाने पर तो किसी तरह एक शाम खाने का तो डोलडौल लग ही जायगा।"

रामकुमार प्रसाद—"कितने रुपये से तुम्हारा काम चल सकता है ?"

रामपलट...."हुजूर दस रुपये में मेरा सभी काम निकल जायगा। पांच रुपये तो मेट को दे दूंगा और बकिये पांच रुपयेमें मजदूरी मिलने तक घर का काम धन्धा चलेगा।"

उसी समय रामकुमार प्रसाद ने काबुली से रुपया दिलाने के लिये एक आदमी रामपलट के साथ कर दिया। वह ईश्वर तथा रामकुमार प्रसाद को दिल से धन्यवाद देता हुआ उस आदमी के साथ चल पड़ा।

छठां अध्याय

उस दिन बाबू मेहरचन्दके द्वारा हमारे पूर्व परिचित बाबू रत्नेश्वर प्रसाद को रक्षा हुई थी। शिक्षित होनेके अपराधमें बेचारे को परिवार के द्वारा भयंकर रूप से अपमानित होना पड़ता था। शिक्षा प्राप्त करने का अर्थ वे

नौकरी प्राप्ति मानने के लिये तैयार नहीं थे। पर उनके भाई साहब की दृष्टि में उसका वही अर्थ था। उनके भाई बाबू कामेश्वर प्रसाद का ही इसमें कोई विशेष अपराध नहीं है। समाज के अधिकांश लोगों की शिक्षा के सम्बन्ध में यही धारणा है। समाज की दृष्टि में शिक्षा नौकरी प्राप्त करने की मशीन है। अवश्य ही कुछ इसके वास्तविक पहलू तथा महत्व को भी समझते हैं, पर अधिकांश लोग इसे इस दृष्टि से ही देखते हैं। यदि कोई शिक्षित व्यक्ति कोई नौकरी प्राप्त नहीं कर सके तो समाज की दृष्टि में वह निकम्मा ठहरता है, समाज संचालक उसका तथा उसकी शिक्षा का कोई महत्व स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं होते। इसका कोई यथेष्ट कारण नहीं बतलाया जाता। केवल समाज की आज्ञाके नाम पर ऐसी धांधली मचायी जाती है। हायरे समाज! हायरे तेरा न्याय!!

बेचारे रत्नेश्वर प्रसाद को भी समाज की इस आज्ञा के सामने नतमस्तक होना पड़ा। यद्यपि वे स्वतंत्र विचार के आदमी थे। अपनी स्वतंत्र परायणता के कारण ही वे इस समय तक अविवाहित थे। परन्तु इस स्थल पर उनकी स्वतंत्र परायणता कोई काम नहीं कर सकी। आखिर, भाई साहब की हाय हाय वे कबतक बर्दाश्त करते? एक दिन घर वालों से रुष्ट होकर वे वहां से भाग चले। चलते समय उन्होंने प्रतिज्ञा की कि यथा सम्भव यहां लौट कर कभी आवेंगे ही नहीं और यदि आवेंगे भी तो यथेष्ट धन उपार्जन करने के बाद ही।

आवेश में आकर उन्होंने प्रस्थान तो कर दिया, पर चलते समय उन्होंने कोई कार्यक्रम निश्चित नहीं किया था। केवल सत्तर रुपये लेकर वे घर से चल निकले थे। कुछ दूर जाने के बाद एक पेड़ के नीचे बैठ कर वे

अपना भावी कार्यक्रम स्थिर करने लगे। बहुत उधेड़बुन करने के बाद उन्हों ने कलकत्ता जाने का ही निश्चय किया। उन्होंने सोचा कि कलकत्ता बहुत बड़ा नगर है। वहां लाखों आदमी निवास करते हैं। शिक्षा की भी काफी कद्र है। कोई न कोई काम मिल ही जायगा। प्रारम्भ में गुजारा चलाने लायक तो कोई काम मिल ही जायगा। फिर देखा जायगा। जैसी परिस्थिति सामने आवेगी, उसके सांचे में ही अपने को ढाल लूँगा। यही बातें सोच कर इधर उधर भटकने में समय नष्ट न कर वे सीधे कलकत्ता चले आये।

वे यहां पहले पहल आये थे। कोई जान पहचान का आदमी नहीं था। यदि संयोगवश कोई रहा भी हो तो वे उसका पता ठिकाना नहीं जानते थे। घंटोंतक सड़कों पर इधर उधर भटतेकते रहे। कई धर्म-शालाओं में भी उन्हें धक्के खाने पड़े। कहीं ठहरने का कोई डोलडौल लगता ही नहीं था। संध्या समय थके मांदे अवस्था में वे एक पार्क में बैठ कर विश्राम करने लगे। उस समय घर की याद उन्हें बार बार सता रही थी। उनका हृदय कहता था कि घर का सुख बाहर किसी भी अवस्था में नहीं मिल सकता। घर के अपमान की भी समता बाहर का सम्मान नहीं कर सकता। कई बार उनके हृदय में यह बात उठती थी कि व्यर्थ ही इधर उधर मारे मारे फिरना ठीक नहीं है। चलकर घर में ही शान्ति पूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहिये। पर शीघ्र ही उनकी दृढ़ता इस भावना को दबा देती थी और वे अपनी आन पर अधिक दृढ़ता पूर्वक डट जाते थे।

पार्क में बैठे बैठे उनके हृदय में इसी तरह नाना प्रकार की बातें उठ रहीं थी। इसी समय एक बंगाली सज्जन से इनकी मुलाकात हो गयी।

सहानुभूति पूर्वक उन्होंने उनसे पूछा—"आप कुछ चिन्तित जान पड़ते हैं। आपके चेहरे से व्यस्तता की आभा स्पष्ट रूप से दिखलायी दे रही है।"

अपने दुखको छिपाने की चेष्टा करते हुए रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"हां, महाशय! नाना प्रकार की बातें एक साथ ही हृदय में उठने पर आदमी स्वभावतः ही उद्विग्न हो जाता है।"

प्रश्नकर्त्ता महोदय ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"शायद आप अपना भाव छिपाने की चेष्टा कर रहे हैं। आप निःसंकोच मुझसे अपने कष्ट की बात कह सकते हैं। यथा सम्भव मैं आपकी सेवा करने की चेष्टा करूंगा।"

उन्हें एक बार सिर से पैर तक देखने के बाद रत्नेश्वर बाबू ने नम्रता पूर्वक कहा—"आपकी सहानुभूतिपूर्ण बातों ने मुझ पर बड़ा असर डाला है। अपनी दुखपूर्ण कहानी बतलाने के पहले क्या मैं अपने ऊपर अकृत्रिम कृपा करने वाले का परिचय जान सकता हूं?"

प्रश्नकर्त्ता महोदय ने उत्तर दिया—"मैं इसी नगर का निवासी हूं। यहां बाप दादों की कमाई के फल स्वरूप दो-तीन मकान हैं। उनके किराये से किसी तरह गुजारा चल जाता है। छोटा मोटा दो-एक व्यवसाय भी चल रहा है।"

प्रसन्नता का भाव दिखलाते हुए रत्नेश्वर बाबू ने कहा—"तब तो आप से मुझे बहुत बड़ी सहायता मिल सकती है। क्या आप मुझे अपना नाम बतलाने की कृपा करेंगे?"

आगन्तु सज्जन ने उत्तर दिया—"मेरा नाम कालीचरण राय है। आप कृपया अपनी कहानी सुनावे। यदि हो सका तो मैं आप की अवश्य सहायता करूंगा। मालूम पड़ता है कि आप अभी हाल में ही यहां आये हैं।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"जी हाँ, मैं यहाँ आज ही आया हूं। ठहरने का कोई प्रबन्ध नहीं रहने के कारण मैं दिन भर इधर उधर भटकता रहा।"

कालीचरण राय—"ओफ! तब तो आप को बड़ा कष्ट हुआ। खैर, कोई चिन्ता नहीं। अब मैं आपके ठहरने का प्रबन्ध कर दूँगा।"

कृतज्ञता का भाव दिखलाते हुए रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"तब तो आपकी बड़ी कृपा होगी। ठहरने का स्थान ठीक हो जाने पर मैं नौकरी का भी कोई न कोई प्रबन्ध कर लूँगा।"

कालीचरण राय—"क्या आप नौकरी करनेके उद्देश्य से यहां आये हैं?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"जी हाँ।"

कालीचरण राय—"खैर, कोई चिन्ता नहीं। मैं नौकरी का भी प्रबन्ध कर दूंगा। मेरे एक मित्र इसी का व्यवसाय करते हैं। उन्हों ने बेकारों को नौकरी दिलाने की एक कम्पनी खोल रखी है।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"तब तो वे देश का बहुत बड़ा उपकार कर रहे हैं। इस समय बेकारो का प्रश्न विकट रूप धारण कर रहा है। आश्चर्य है कि देश के नेता इस प्रश्न की ओर उचित ध्यान नहीं दे रहे हैं।"

कालीचरणराय—"जी हाँ, बेकारी के कारण नवयुवकों की अवस्था बड़ी खराब हो गयी हैं। खैर अब तो नौकरी बहुत जल्द मिल जायगी। आपने अंग्रेजी की शिक्षा कहां तक पायी हैं?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मैं पटना विश्वविद्यालय का ग्रेज्युएट हूं।"

कालीचरण राय—"तब कोई कठिनाई नहीं होगी चेष्टा करने पर आप को नौकरी अवश्य मिल जायगी।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"सब आप की मेहरबानी है।"

कालीचरण राय—"खैर, चलिये, पहले आपके ठहरने का प्रबन्ध कर दूँ। आप बहुत थके मांदे मालूम पड़ते हैं।

रत्नेश्वर प्रसाद—"जी हां, इसमें क्या सन्देह है। लम्बी सफर के बाद इधर उधर मारे मारे फिरने से तबीयत एकदम खराब हो गयी है।"

उनकी बातों का कोई उत्तर न देकर कालीचरण बाबू उन्हें अपने साथ ले चले। मार्ग में वे लोग बातें भी करते जाते थे। लगभग पन्द्रह मिनट में वे एक धर्मशाले में पहुंचे। कालीचरण बाबूने उनके ठहरने के लिये एक हवादार कमरे का प्रबन्ध कर दिया। रत्नेश्वर प्रसाद कोई बिस्तर आदि लेकर घर से नहीं चले थे। इस कारण उसी समय उन्हें कम्बल आदि खरीदना पड़ा। फाटक पर ही दूकान थी। कालीचरण बाबू की सहायता से उन्हों ने सभी आवश्यक चीजें खरीद लीं। उनके लिये सभी आवश्यक चीजों का प्रबन्ध कर दूसरे दिन फिर मिलने की प्रतिज्ञा कर कालीचरण बाबू अपने घर वापसचले आये।

दूसरे दिन भोर के समय ही वे फिर रत्नेश्वर बाबू से मिले। उस समय तक यथेष्ट विश्राम मिल जाने के कारण वे काफी स्वस्थ्य हो चुके थे। थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें करने के बाद नौकरी की चर्चा छिड़ी। नौकरी की बात छिड़ने पर कालीचरण बाबू ने कहा कि उनके मित्र प्रेज्युएटों से डेढ़ सौ रुपये लेकर उनके लिये किसी अच्छी नौकरी का प्रबन्ध कर देते हैं। १५०) रुपये की बात सुन कर जरा चिन्तित होते हुए रत्नेश्वर बाबू ने कहा—"क्या रुपया पेशगी देना होता है?"

कालीचरण राय—"जी हां, उनके यहां तो ऐसा ही नियम है।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"लेकिन, मेरे पास तो इस समय डेढ़ सौ रुपये नहीं हैं।"

कालीचरण राय—"आप डेढ़ सौ रुपये की चिन्ता क्यों करते हैं? क्या मुझ से भी वे डेढ़ सौ रुपया ही लेंगे। ऐसी दशा में उन की मित्रता से क्या लाभ होगा। आप के लिये मैं उन्हें एक सौ रुपये में तैयार कर लूंगा।

रत्नेश्वर प्रसाद—"आप की बड़ी कृपा होगी। लेकिन इस समय तो मैं १००) भी नहीं दे सकता हूं।

कुछ रुकते हुए कालीचरण राय ने कहा—"जब आप को सहायता देने का बचन मैंने दे दिया है, तब तो मुझे आप के लिये अवश्य ही कोइ न कोई प्रबन्ध करना ही होगा इस समय आप कितना रुपया दे सकते हैं?

कृतज्ञता का भाव दिखलाते हुए रत्नेश्वर प्रसादने कहा—"मैं इस समय ५०) से अधिक नहीं दे सकूंगा।"

धीरे स्वर से काली चरण राय ने कहा—"शेष रुपये का प्रबन्ध मैं कर लूंगा। वेतन मिलने पर आप से मैं रुपये ले लूंगा।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आप से मुझे ऐसी कृपा की ही आशा है। भगवान ने मेरी सहायता करने के लिये ही आप को मेरे पास भेजा है।"

कालीचरण राय—"इस में सहायता की कोई बात नहीं है। मनुष्य आपस में एक दूसरे की सेवा करते ही हैं। इसी प्रकार इस संसार का कार्य चलता है।"

इस प्रकार थोड़ी देर तक वे लोग बातें करते रहे। चलते समय रत्नेश्वर प्रसाद ने कम्पनी में जमा करने के लिये बाबू काली चरण राय को ५०) दे दिया। उन्होंने स्वयं जाकर रुपया जमा करने की बात पर जोर डाला। पर रत्नेश्वर प्रसाद ने इसकी कोई आवश्यकता नहीं समझी। उन्होंने

कहा कि मेरे जाने से शायद वे कुछ अधिक रुपया मांगने लगें, आप ही जाकर जमा कर दीजिये। उनकी यह बात सुन कर बाबू कालीचरण राय सन्ध्या समय फिर मिलने की प्रतिज्ञा कर रुपया लेकर अपने घर लौट आये और बेचारे रत्नेश्वर प्रसादका हृदय उस उपकारी आत्माको धन्यवाद देने लगा।

संध्या समय रत्नेश्वर प्रसाद बाबू कालीचरण राय की प्रतीक्षा करते करते थक गये, पर उनको पता नहीं लगा। इस प्रकार एक नहीं, चार-पांच संध्यायें बीत गयीं, लेकिन उपकारी जीव के दर्शन नहीं हुए। सन्देह तो उन्हें दूसरे ही दिन से होने लगाथा, पर चार-पांच दिन के बाद उन्हें विश्वास हो गया कि मित्र का रूप धारण कर कालीचरण राय ने उनके साथ विश्वासघात किया है।

संसार की स्वार्थ लीला से वे काफी परेशान थे। इस दृश्य ने ही उन्हें घर छोड़ने के लिये बाध्य किया था। उनका हृदय अधिक विश्वासघात सहने के लिये तैयार नहीं था। उन के पास कुछ बच भी नहीं रहा था, जिस के द्वारा वे लौटने की चेष्टा करते। संसार के प्रति उन के हृदय में इतनी अधिक घृणा हो गयी थी कि सहायता के लिये किसी के यहाँ जाना उन्होंने उचित नहीं समझा।

अन्त में आत्म-हत्या के सिवा उन्हें कोई मार्ग दिखलाई नहीं दिया। एक दिन बिष खाकर वे एडन गार्डन चले गये। वहां बाबू मेहरचन्द की दृष्टि उन पर पड़ी और उनकी रक्षा हुई। उस समय से बाबू मेहरचन्द उन्हें भाई की तरह मानने लगे और परिवार के व्यक्ति की तरह वे वहां हिलमिल कर रहने लगे।

सातवां अध्याय

बिना कोई आन्दोलन चले लीडरी में मजा नहीं आता। लीडरी शब्द से इस स्वप्न पर हमारा संकेत उन लोगों की ओर नहीं है, जो देश के सुख दुख के लिये अपना सुख दुख भूल गये हैं और जो देश सेवा को अपना एक मात्र उद्देश्य समझते हैं। इस श्रेणी के लोग तो लीडर कहलाना ही नहीं चाहते और लीडर कहे जाने पर भी अपने को जनता का एक सेवक मात्र समझते हैं। सेवा का यह भाव आने पर किसी प्रकार के प्रदर्शन की आवश्यकता नहीं रहती। उस अवस्था में तो सेवा में ही आनन्द मिलता है। किसी आन्दोलन में भाग लेकर सेवा करने में उन्हें जितना आनन्द मिलता है, उससे किसी प्रकार कम आनन्द उन्हें एक कुटिया में बैठ कर चुपचाप सेवा करने में नहीं मिलता।

इसके बाद इन लोगों की श्रेणी है, जो लीडर तो कहलाना चाहते हैं पर साथ ही उन में सेवा का भी भाव है। लीडर बनने की चेष्टा करते हुए भी वे सेवा भाव को नहीं भूलते। कोई आन्दोलन नहीं रहने पर इस श्रेणी के लोगों को कभी कभी आन्दालन का अभाव अवश्य खटकता है। पर हृदय में सेवा भाव रहने के कारण अपनी लीडरी कायम रखने के लिये वे जान बूझ कर अनावश्यक आन्दोलन की सृष्टि नहीं करते। इन्हें हम द्वितीय श्रेणी का नेता कह सकते हैं।

इस नेता युग में लीडरी पेशा वालों की भी एक श्रेणी है और उन्हें हम संसार के सब से निम्न श्रेणी का मनुष्य कह सकते हैं। ख्याति और

ख्याति के बल पर रुपया पैदा करना ही उनका प्रधान उद्देश्य रहता है। स्वार्थ-साधन के सिवा कभी धोखे से भी उन के द्वारा देश सेवा का कोई वास्तविक कार्य नहीं होता। ऐसे लोगों को बराबर आन्दोलनों की आवश्यकता रहती है। कोई आन्दोलन नहीं रहने पर स्वभावतः ही लीडरी का बाजार ठंढा पड़ जाता है और इस प्रकार उन्हें स्वार्थसाधन की सुविधा प्राप्त नहीं होती। इस लिये अपना व्यवसाय जारी रखने के लिये लोग जान बूझ कर किसी न किसी आन्दोलन की सृष्टि करते रहते हैं।

पहले बतलाया जा चुका है कि बाबू रामकुमार प्रसाद नेता शब्द को बदनाम करने वाले इसी श्रेणी के पुरुष हैं। उन्हें भी स्वार्थसाधन के लिये बराबर आन्दोलनों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक साल ये किसी न किसी हड़ताल की सृष्टि करते हैं। हड़ताल के द्वारा इन्हें काफी रकम मिल जाती है। हड़ताल होने पर भिन्न भिन्न व्यवसायियों का स्वार्थ टक्कर खाता है। मिल मालिकों की हानि तो निश्चित ही रहती है। उन के साथ सम्बन्ध रखने वाले अन्य कई व्यवसायियों को भी हानि उठानी पड़ती है। इसके साथ ही उन व्यवसायियों का भी एक दल होता है, जिन्हें अवस्था तथा कारण विशेष के कारण उस से लाभ हो जाता है। कितने ही लोग हड़ताल के दिनों में काफी मुनाफा उठाते हैं। ऐसे लोगों के द्वारा बाबू रामकुमार प्रसाद को यथेष्ठ धन की प्राप्ति हो जाती थी।

इधर कई महीनों से हड़ताल आदि का कोई सिलसिला नहीं था। इस कारण बेचारे रामकुमार प्रसाद का व्यवसाय फीका हो रहा था। कई बार उन्होंने हड़ताल कराने की परिस्थिति उत्पन्न करने की चेष्टा की, पर सफल नहीं हुए। असफल होने पर आदमी का दिल छोटा हो जाता है, अक्ल काम नहीं करती।

कई महीने तक चुपचाप बैठे बैठे ये नाना प्रकार की बातें सोचते रहे। पर कोई काम रास्ते पर नहीं आया। आज अपने कमरे में बैठकर ये कुछ सोच ही रहे थे कि पोष्ट मैन डाक दे गया, अन्य कई चिट्ठियों के साथ मि० रावर्ट की भी चिट्ठी थी। उन्होंने अपने पत्र में बाबू रामकुमार प्रसाद से मिलने की इच्छा प्रकट की थी। मि० रावर्ट से अधिक परिचित न होने पर भी वे उन से सर्वथा अपरिचित नहीं थे। दो एक बार विशेष कार्यवश वे उन के आफिस में गये थे।

मि० रावर्ट कलकत्ते के एक प्रसिद्ध व्यवसायी हैं। उनका कई तरह का व्यवसाय है। बाबू रामकुमार प्रसाद यह सोच कर मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे कि किसी आवश्यक कार्य वश ही उन्होंने उनको बुलाया होगा। ऐसी दशा में उन से किसी न किसी रूप में अवश्य स्वार्थ सिद्ध हो सकता है। उत्सुकतावश वे उसी समय उनसे मिलने जाना चाहते थे। परन्तु कुछ सोच बिचार कर उन्होंने एक दिन के लिये इस कार्यक्रम को स्थगित रखा। उन्होंने सोचा कि आज ही मिलने से शायद मैं मि० रावर्ड की दृष्टि में कुछ गिर जाऊं। वे यह ख्याल करने लगेंगे कि कोई काम काज नहीं रहने के कारण मिलने के लिये तुरत दौड़े आये। यह सोच कर वे उस दिन रूक गये।

दूसरे दिन वे लीडरी ठाठ में मि० रावर्ट के आफिस पहुँचे। प्रारम्भिक शिष्टाचार के बाद रामकुमार प्रसाद के हाथ में एक सिगार देते हुए वे बोले—"आज एक विशेष कार्यवश मैं ने आप को कष्ट दिया है। आशा है कि आप इसका कोई ख्याल नहीं करेंगे।

राम कुमार प्रसाद—"इसमें कष्ट की कोई बात नहीं है। इसे तो

मैं आप की दया समझता हूं, लेकिन कल से मैं इसी आश्चर्य में पड़ा हुआ हूं कि मेरे द्वारा आप का कौन सा काम हो सकता है।"

मि० रावर्ट—"काम बहुत ही बड़ा तथा जिम्मेदारी का है। लेकिन आप के द्वारा वह आसानी से हो सकता है। इस कार्य के लिये आप को ही सब से योग्य समझ कर मैंने कष्ट दिया है।"

रामकुमार प्रसाद ने कौतूहल का प्रदर्शन करते हुए कहा—"वह कौन सा कार्य है ?

मि० रावर्ट—"मुझे भय है कि सभी बातें सुन कर कहीं आप बुरा न मानें।"

रामकुमार प्रसाद—"बुरा मानने की कौन सी बात है। यह सम्भव है कि आपका प्रस्ताव अपने योग्य नहीं रहने पर, मैं उसे स्वीकार नहीं करूं, लेकिन बुरा मानने का कोई सवाल ही नहीं उठता।"

मि० रावर्ट—"आज कल व्यवसायिक प्रतियोगिता किस प्रकार चल रही है; इस बात से तो आप परिचित ही हैं। इसी सम्बन्ध में मैं आप की सहायता चाहता हूं।"

रामकुमार प्रसाद किस प्रकार की सहायता ? संकोच की कोई बात नहीं है। अपना मतलब स्पष्ट कीजिये।"

मि० रावर्ट—"मेरा मतलब शायद आप थोड़ा बहुत समझ गये होंगे। मैं अभी आप को पूरा पूरा—"

बीच में ही बात काटते हुए रामकुमार प्रसाद बोले—"आप के दिल की कोई बात मैं नहीं समझ सका हूं। आप यह कैसे आशा करते हैं कि केवल सहायता शब्द से सभी बातें मेरी समझ में आ गयी होंगी।

कुछ संकोच के साथ मि० रावर्ट ने कहा—"माफ कीजियेगा। अब मैं आप को सभी बातें पूरी तरह समझा देता हूं। पहले मैं प्रतियोगिता का जिक्र कर चुका हूं। इन दिनों फतेहचन्द काटन मिल्स के कारण हमारे व्यवसाय को बड़ा धक्का लग रहा है। मैं चाहता हूं कि उस से किसी प्रकार छुटकारा मिले।"

आश्चर्य के साथ रामकुमार प्रसाद ने कहा—"फिर इस कार्य में मैं आप को किस प्रकार की सहायता दे सकता हूं। आप की बातें तो धीरे धीरे पहेली का रूप धारण कर रही है। कृपया अपना मतलब स्पष्ट कीजिये।"

मि० रावर्ट—"आप सभी कुछ कर सकते हैं। इस समय लाखों मजदूर आप के हाथों में हैं। आप की दया के ऊपर ही तो मिल वालों का जीवन मरण निर्भर करता है।"

मूछों पर हाथ फेरते हुए रामकुमार प्रसाद ने कहा—"आप का कहना बिलकुल ठीक है। लेकिन शक्ति का सदैव सुन्दर उपयोग करना चाहिये। दुरुपयोग करने के लिये भगवान ने मुझे शक्ति नहीं दी है। मि० रावर्ट! माफ कीजियेगा, अभी तक आपकी बातें पूर्ण रूप से मेरी समझ में नहीं आई। मैं यह सुनकर परेशान हूं कि मेरी शक्ति का उपयोग कर आप किस प्रकार व्यवसायिक प्रतियोगिता में अपने प्रतिद्वन्दी को परास्त करना चाहते हैं।"

मि० रावर्ट ने मुस्कुराते हुए कहा—"आप मेरा मतलब तो अवश्य समझ गये होंगे। लेकिन मुहँ से आप साफ साफ बातें सुनना चाहते हैं। खैर जब आपकी यही इच्छा है तो मैं भी स्पष्टतः सभी कुछ बतलाने के लिये बाध्य हूं। मैं चाहता हूं कि फतेहचन्द काटन मील के मजदूर कुछ

दिनों के लिये हड़ताल कर दें। हड़ताल होने पर उन लोगों के कार्य में कुछ गड़बड़ी हो जायगी और उस से हमें कुछ लाभ होने की सम्भावना है।"

रामकुमार प्रसाद—"अपने व्यवसायिक लाभ के लिये आप भले ही ऐसा सोच सकते हैं, लेकिन आप यह किस तरह आशा करते हैं कि मैं इस कार्य में आप की सहायता करूंगा। मि० रावर्ट! मैं तो मजदूरों का एक सेवक मात्र हूं। उनकी सेवा ही मेरे जीवन का प्रधान उद्देश्य है। उन के लाभ के लिये मैं उचित अनुचित सभी कुछ समझता हूं। लेकिन उन के स्वार्थ को हत्या कर दूसरों को लाभान्वित करने की बात तो मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकता।

मि० रावर्ट—"इस में मजदूरों की कौन सी हानि होगी? हड़ताल होने पर उन्हें अवश्य ही कोई न कोई नवीन सुविधा मिलेगी। मैं तो उनको हानि की कोई सम्भावना नहीं देखता।

रामकुमार प्रसाद—"हानि की सम्भावना क्यों नहीं है? थोड़ी देर के लिये मान लीजिये कि हड़ताल असफल हुई। उस दशामें मजदूरों की क्या हालत होगी? कितने ही नौकरी से बर्खास्त कर दिये जायंगे और भूखों मरने का प्रसंग उन के सामने उपस्थित हो जायगा।

मि० रावर्ट—"आप ऐसी बातें क्यों सोचते हैं। सुसंगठित रहने पर हड़ताल किस प्रकार असफल हो सकती है?"

रामकुमार प्रसाद—"कोई काम प्रारम्भ करने के पहले उस का प्रत्येक पहलू सोच लेना चाहिये। मान लीजिये कि हड़ताल एकदम असफल नहीं हुई, लेकिन उस का अधिकारियों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा और बीच में ही कोई समझौता कर लेना पड़ा। उस दशा में तो मजदूरों को हड़ताल

के दिनों का वेतन नहीं मिलेगा। फिर आप उन्हें हानि से किस प्रकार वंचित रख सकते हैं?

कुछ सोच कर मि० रावर्ट बोले—"इस दशा में उन की क्षतिपूर्ति का यदि मैं जिम्मा लूं, तब हो आप को कोई आपत्ति नहीं होगी?"

गम्भीरतापूर्वक रामकुमार प्रसाद ने कहा—"आपत्ति क्यों नहीं होगी? मैंने तो हड़ताल कराने की बात स्वीकार नहीं की है। स्वीकृति के बाद यदि आप कठिनाईयों का भार अपने ऊपर ले लेते तब आप को ऐसा प्रश्न पूछने का अधिकार था। लेकिन मैं तो सिद्धान्त की दृष्टि से ऐसे कार्यों का विरोधी हूं।

मि० रावर्ट—"इस में आप की या आप के दल को तो कोई हानि नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—"हानि क्यों नहीं है? यदि इस प्रकार हम लोग हड़ताल कराया करें तो जनता की दृष्टि में हमारा महत्व ही क्या रह जायगा?"

मि० रावर्ट—"तर्क में तो मैं आप को परास्त नहीं कर सकता हूं। लेकिन मुझ पर दया कर यदि आप यह कार्य कर दें तो इस से मेरा बहुत बड़ा लाभ हो सकता है।"

रामकुमार प्रसाद—"मि० रावर्ट! इस में दया की कोई बात नहीं है। यहां तो सिद्धान्त का प्रश्न उठता है।"

मि० रावर्ट—"सिद्धान्त का प्रश्न तो उस समय उठता जब इस में मजदूरों की हानि की कोई सम्भावना रहती। उनकी हानि की तो सारी जिम्मेदारी मैं अपने ऊपर लेता हूं। यदि आप को विश्वास न हो तो इस

के लिये कुछ रुपये मैं आप के पास पहले ही जमा कर दूं। इस के साथ ही आप के दल को मैं यथेष्ट आर्थिक सहायता दूंगा। इससे आप का कार्यक्रम बहुत कुछ अग्रसर हो सकता है।"

कुछ सोच कर रामकुमार प्रसाद ने कहा—"आप ने मेरे सामने बहुत ही पेचीला प्रसंग उपस्थित कर दिया है इस समय मैं कुछ निश्चित उत्तर नहीं दे सकता। गम्भीरतापूर्वक इस प्रश्न पर बिचार कर मैं आपको कोई उत्तर दे सकूंगा।"

मि० रावर्ट—"हां, आप खूब सोच समझ लीजिये। इतना कह कर दूसरा सिगार देते हुए वे अपने कार्यक्रम की व्याख्या करने लगे। उन की सभी बातें सुन कर बाबू रामकुमार प्रसाद अपने घर वापस चले आये।

आठवाँ अध्याय

उस दिन बाबू रामकुमार प्रसाद की कृपा से रामपलट को काबुली से दस रुपया उधार मिल गया। रुपये पाने पर किसी प्रकार बेचारे की रक्षा हुई। उसी समय उसने पांच रुपये अपने मेठ शिवदयाल के हवाले किये। दूसरे दिन से ही वह काम पर जाने लगा। शेष पांच रुपयों से वह घर का काम चलाता रहा। सप्ताह खतम होने पर उसे मजदूरी मिल गयी और इस प्रकार आमदनी का सिलसिला जारी हो गया। परन्तु गरीब की कठिनाइयां एक नहीं अनेक होती हैं। लगभग एक महीने के बाद उसका

छोटा भाई देश से चला आया। उसे आने के लिये वह कई बार मना कर चुका था। उसने साफ-साफ लिख दिया था कि इन दिनों काम काज बहुत मन्दा है, आधी रोटी खाकर भी देश में ही रहना। यहाँ आने का नाम भूल कर भी न लेना।

परन्तु, हरिहर कब मानने वाला था। आने का उसने एक रास्ता निकाल ही लिया। एक दिन जानबूझ कर उसने मालिक के कारिन्दे से लड़ाई कर ली। बिना किसी सबब के ही बेतरह उसके साथ उलझ पड़ा। भला, वह भी मालिक का कारिन्दा था। किस तरह गुस्सा बर्दाश्त करता। दो-चार करारी धौल जमायी। धौल खा कर हरिहर की तबीयत ठिकाने पर आ गयी। गुस्से में आकर दिन भर खूब काम करता रहा। उस दिन उसने कम से कम दो तीन आदमियों के बराबर अकेले ही काम किया।

यह सब तो हुआ। पर दूसरे दिन उसने काम पर जाने से साफ-साफ इन्कार कर दिया। मालिक के आदमी बड़ी कठिनाई से उसे काम पर ले गये। पर वह अपने काबू में नहीं था। उस दिन भी कारिन्दे से उलझ कर खूब धौल खायी। सन्ध्या समय उसने अपने पिता से साफ कह दिया कि चाहे खून की नदी क्यों न बह जाय, कल से वह काम पर नहीं जायगा।

बेचारा बुड्ढा बड़ी कठिनाई में पड़ा। उसने अपने पुत्र को समझाने-बुझाने की बड़ी चेष्टा की, पर कोई फल न हुआ। अन्त में कोई रास्ता न देख कर उसने उसे कलकत्ता भेज देनेका निश्चय किया; क्यों कि वहां रहने पर तो मालिक का काम जरूर करना पड़ता। हरिहर तो यह चाहता ही था। वह तुरत प्रस्थान करने के लिये तैयार हो गया। पर रेल किराया कहाँ से आवे?

दो-तीन दिनों तक तो बीमारी का बहाना बना कर वह घर में रहा। इस बीच में उसकी मां दो-तीन बर्तन बन्धक रख कर किराये के लिये रुपया उधार ले आयी। रुपया मिल जाने पर वह सीधे कलकत्ता चला आया। बिना किसी सूचना के अपने भाई को आया देख रामपलट के क्रोध का कोई ठिकाना नहीं रहा। आते ही उसने उसे खूब फटकारा। परन्तु फटकार से क्या हो सकता था? गले का ढोल तो बजाना ही पड़ता है।

अब रामपलट अपने भाई को काम में लगाने की चिन्ता में पड़ा। बैठा कर खिलाना बड़ा मुश्किल था। मील में पूरा काम नहीं होने के कारण बहुत थोड़ी मजदूरी मिलती थी। उससे किसी प्रकार उसका ही गुजारा होता था, इसलिये हरिहर को किसी काम में लगाना जरूरी था। उसने मेठ से बड़ी मिन्नतें की। परन्तु फिर पांच रुपये का सवाल सामने आया। काम लगने के पहले रुपया देना बड़ा मुश्किल था। काबुलियों का सूद बराबर सिर पर सवार रहता था। मजदूरी से एक पैसा निकालना भी कठिन था। बेचारा रामपलट बड़ी चिन्ता में पड़ा। अन्त में उसने सोचा कि इस बार मजदूरी मिलने पर मेठ को दे दूँगा। लेने देने वाले को आरजू मिन्नत करके किसी तरह मना लूंगा। फिर काम लग जाने पर तो कोई चिन्ता ही नहीं रहेगी। दो आदमियों की मजदूरी मिला करेगी। हाकिम महाजन तो एक महीने में साफ हो जायंगे।

बेचारा रामपलट कई दिनों से इसी प्रकार का मँसूबा बाँध रहा था। दो आदमियों की मजदूरी की बात सोच कर उसकी प्रसन्नता की सीमा नहीं रहती थी। वह अपने को राजा समझने लगता था। उस समय

वह सभी कष्टों को भूल जाता था। बिना बुलाये आने के कारण हरिहर के प्रति उसका क्रोध प्रसन्नता के रूप में परिणत हो जाता था।

अखिर सप्ताह खतम हुआ और अन्य मजदूरों के साथ रामपलट को भी मजदूरी मिली। मजदूरी प्रत्येक शनिवार को मिला करती है। दूसरे दिन काम से छुट्टी रहती है। टेंट में पैसा रहता है। फिर उनसे बढ़ कर राजा कौन हो सकता है? बेपरवाही के साथ वे लोग इधर उधर घूमते रहते हैं। परीक्षा की समाप्ति के बाद विद्यार्थियों में जितनी चहल-पहल रहती है, उससे किसी प्रकार कम चहल-पहल शनिवार को मील के मजदूरों में नहीं रहती। फर्क इतना ही रहता है कि विद्यार्थियों की चहल-पहल में निर्दोष मादकता तथा उल्लास रहता है। विद्यार्थियों की चहल-पहल में स्वर्गीय सौन्दर्य की छाया दिखलायी पड़ती है, उसे सांसारिकता नहीं छू पाती है। परन्तु मजदूरों की मादकता तथा उल्लास में रूखाई और चहल-पहल में सांसारिकता की बू रहती है। शनिवार की सन्ध्या को अधिकांश मजदूर कितने ही बुरे कार्यों में लिप्त हो जाते हैं। कई दिनों के बाद उनके टेंट में पैसा आता है। इस कारण वे उन्मत्त हो जाते हैं। शराब, ताड़ी से लेकर वेश्यागमन तक में दिल खोल कर पैसा खर्च करते हैं। इसका फल यह होता है कि दूसरे दिन से ही उनके पास पैसे का अभाव हो जाता है और उन्हें आधा पेट भोजन तथा कभी कभी उपवास करके ही काम करना पड़ता है। मजदूरों के जीवन का प्रायः यही संक्षिप्त दिग्दर्शन है।

बेचारे रामपलट की गणना दारू-शराब पीने वाले मजदूरों में नहीं थी। वह बड़ा सम्हल कर चलता था। अखिर जोरू-बच्चा वाला आदमी ठहरा।

सम्हल कर नहीं चलने पर ७ दिन-दुनियां किस प्रकार चल सकती थी। अकेले रहे तो उपवास भी कर ले। पर जोरू, बच्चे की जवाबदेही से तो छुटकारा नहीं मिल सकता है। यही बातें सोच कर रामपलट बराबर अपने को बुरे व्यसनों से बचाता था।

उस दिन उसे कुल साढ़े चार रुपये मिले। उसने सोचा था कि चार रुपये में किसी तरह मेठ को राजी कर हरिहर को काम दिला देंगे। शेष आठ आने में सप्ताह भर घर का नोन, तेल चलता रहेगा। दूसरा सप्ताह लग जाने पर तो सारी कठिनाई दूर हो जायगी। फिर तो उसकी तरह कोई बादशाह ही नहीं रहेगा। यही बातें सोचता हुआ, घर में रुपये रख कर वह इधर उधर घूमने चला गया।

इस समय तक हरिहर को कई मजदूरों से दोस्ती हो गयी थी। वह बेकार तो था ही। दिन भर इधर उधर भटकने तथा लोगों से दोस्ती करने के सिवा उसके पास दूसरा काम ही क्या था। नेवाजी नामक मजदूर से उसकी काफी घनिष्ठता हो गयी थी। वह पहले नम्बर का शराबी तथा वेश्यागामी था। अकेला ही वह था। जोरू न जाता अल्लाह मियां से नाता, वाली कहावत का वह प्रत्यक्ष उदाहरण था। बड़ी बेपरवाही से उसकी जिन्दगी बीतती थी। सप्ताह भर की कमाई वह दो दिनों में साफ कर देता था। सप्ताह के शेष दिन फाके मस्ती में गुजरते थे। शेष दिनों की बात तो शेष में होती है, पर शनिवार तथा रविवार को तो वह सचमुच बादशाह बन जाता था।

इस शनिवार को उसने शराब पीने के लिये हरिहर को भी ललकारा। हरिहर नौजवान था। दुनियां उसने देखी नहीं थी। वह कब इस ललकार

को बर्दास्त कर सकता था। उसने उसके साथ चलना मंजूर किया। यह सब बातें हो जाने बाद वह अपने ठहरने के स्थान पर लौट आया वहां वह सावधानी से देखता रहा कि उसके भाई साहब रुपया कहाँ रखते हैं। उसके सामने ही रुपया रख कर बेचारा रामपलट घूमने के लिये गया।

भाई साहब के चले जाने के कारण हरिहर का काम और भी सहल हो गया। वह चुपचाप घर से रुपया लेकर चलता बना। नेवाजी उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसे प्रसन्नतापूर्वक आते देख कर वह समझ गया कि यह टेंट गर्म कर आ रहे हैं। दोनों बड़ी प्रसन्न के साथ शराबखाने की ओर गये।

घूम कर लौटने के बाद रामपलट को तो काठ मार गया। रखे गये स्थान पर रुपया न देख कर उसने अपनी स्त्री से उस सम्बन्ध में प्रश्न किया। उसने इठला कर उत्तर दिया—"रुपया क्या मेरे हवाले कर गये थे? मैं क्या जानूं तुम्हारा रुपया कहां गया।"

कुछ गर्म होते हुए रामपलट ने कहा—"यह जरूर तुम्हारी शैतानी है। तुम्हीं ने रुपया छिपा रखा है।"

वह बेचारी भी घबड़ा गयी। एक तो रुपये का गायब होना और दूसरे चोरी का इल्जाम। दुधमुंहे बच्चे की कसम खा कर उसने अपनी पिण्ड छुड़ायी। स्त्री की कसम सुन कर रामपलट की घबराहट और भी बढ़ी। वह तो हक्का बक्का हो गया। बेचारे की आंखों से आंसू टपक पड़ी। थोड़ी देर तक वह हरिहर को इधर उधर ढूंढ़ता रहा। पर कहीं पता नहीं लगा। उसे गायब देख कर उसे विश्वास हो गया कि अवश्य ही यह उस छोकड़े का ही काम है।

क्रोध से तो उसका सारा शरीर जल रहा था। यदि उस समय हरिहर से उसकी मुलाकात हो जाती तो वह उसे अवश्य ही अधमरा कर देता। कई घण्टे बीत गये, पर उसका कहीं पता नहीं लगा। अधिक रात बीत जाने पर वह सो रहा। क्रोध के मारे उससे भोजन नहीं किया गया। भोजन भी क्या करता। सामने तो उसे उपवास का भयंकर दृश्य दिखलाई दे रहा था। वह जहर का घूंट पीकर चुपचाप हो गया। दूसरे दिन प्रातःकाल ही हरिहर पर दृष्टि पड़ी। वह चैतन्यहीन की तरह आंगन में पड़ा हुआ था।

रामपलट की लात खाने पर उसकी नींद खुली। वह तो लात घूसा खाने के लिये तैयार था ही। आंख मलता हुआ चुपचाप बैठ गया। रामपलट ने गर्जते हुए उससे पूछा—"रुपये तुमने क्या किये?"

कोई जवाब न देकर हरिहर चुपचाप संज्ञाहीन की तरह वहां बैठा रहा। इसपर रामपलटने लात घूसे से उसकी खूब खबर ली। काफी मार खाने पर उसने डरते हुए कहा—"कसूर तो मुझ से जरूर हो गया। लेकिन नेवाजी के बहकावे में आकर मैंने ऐसा काम किया। अब ऐसी गलती कभी नहीं करूँगा।"

नेवाजी का नाम सुनते ही दो-एक घूसा और जमाते हुए रामपलट ने कहा—"तो आज से उसके यहां ही जाकर रहो। हम से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं रहा। भाग्य के खोटे ऐसे ही होते हैं। तुम्हारी नौकरी के लिये तो मैंने रुपया रखा था और तुम्हीं ने उसका सत्यानाश कर दिया। खैर, कोई चिन्ता नहीं। अब हम लोग तुम्हारे नाम पर ही भूखों मरेंगे।" इतना कहता हुआ वह तुरत नेवाजी के यहां जा पहुंचा। नेवाजी छटा हुआ आदमी था। वह रामपलट को देखते ही समझ गया कि हरिहर के कारण

यह मुझ से झगड़ा करने के लिये आ रहा है। उसके समीप पहुंचते ही रामपलटने गर्जते हुए कहा—"अकेले शराब पीने में क्या मजा नहीं मिलता है? तुमने मेरे घर का क्यों सत्यानाश कर दिया? मेरे भाईको तुम्हें बुरे रास्ते पर ले जाने का साहस किस तरह हुआ?"

नेवाजी ने भी खूब गर्म होते हुए कहा—"खबरदार! मेरे यहां हल्ला गुल्ला मत करो। ज्यादे कोलाहल किया तो अभी जबान काट लूँगा। मैं क्यों बिगाड़ने लगा तुम्हारे भाई को। जाकर उसे सम्हालो, मेरे यहां क्या लेने आये हो?"

इस प्रकार बात धीरे धीरे बढ़ गयी और दोनों आदमी एक दूसरे से भिड़ गये। दो-चार लात घूसे भी चले। बीच में कई लोगों ने पड़कर मामला ज्यादा संगीन नहीं होने दिया। अपने भाई तथा नेवाजी को गाली देता हुआ रामपलट वहां से लौट आया।

नवां अध्याय

मनुष्य का स्वभाव जल्दी नहीं बदलता। उस दिन पिता की मृत्यु-शय्या के समीप बाबू मेहरचन्द ने अपनी बुराइयों को छोड़ने की प्रतिज्ञा अवश्य की थी। उन्हें उस प्रतिज्ञा का दायित्व तथा महत्व भी मालूम था। बुराइयों के रहते हुए भी वे एक चिन्ताशील तथा बुद्धिमान व्यक्ति थे। उन्हें मालूम था कि उस प्रतिज्ञा की अवहेलना होने से उनके मृत पिता की

आत्मा को भयंकर कष्ट होगा। इस कारण वे यथाशक्ति उसका पालन करने की चेष्टा करते थे। यदि उनके पिता को मृत्यु नहीं होती तो सम्भव था कि वे बहुत अंशों में उस प्रतिज्ञा का पालन करते और कुछ ही दिनों में सुधरे हुए व्यक्ति कहे जाने लगते। परन्तु मार्ग में उनके चाचा साहब का रूखा स्वभाव खड़ा हो गया। वे बाबू मेहरचन्द पर पूरा कड़ाई के साथ शासन करना चाहते थे। होश हवाश सम्हाले हुए बाबू मेहरचन्द का तरह स्वतंत्र प्रकृति के नवयुवकके लिये ऐसा व्यवहार सहन करना किसी प्रकार सम्भव नहीं था।

इसमें कसूर उनके चाचा बाबू मलूकचन्द का भी था। वे एक निराले प्रकृति के आदमी थे। अपने भाई की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने को घर का पूरा स्वामी समझ लिया। वे इस बातको भूल गये कि सारी कमाई तो उनके स्वर्गीय भाई साहब की है और उसे उपभोग करने का सब से बड़ा अधिकारी मेहरचन्द मौजूद है। यह बाबू फतेहचन्द की मेहरबानी तथा धर्मपरायणता थी कि उन्होंने सभी जायदाद में अपने छोटे भाई का उचित हिस्सा दिया था। परन्तु बाबू मलूकचन्द इस बातको एकदम भूल गये। वे सारी सम्पत्ति पर इस प्रकार प्रभूत्व स्थापित करने लगे जैसे मेहरचन्द का उससे कोई सम्बन्ध ही नहीं हो। भला वह नवयुवक किस तरह ये बातें बर्दास्त करता?

बाबू फतेहचन्द की मृत्यु के बाद दो-तीन महीने तो बड़ी शान्ति के साथ व्यतीत हुए। इसके बाद चाचा-भतीजा में द्वन्द शुरू हुआ। बाबू मलूकचन्द को फतेहचन्द का कोई कार्य अच्छा ही नहीं लगता था। बार बार उन्हें फटकार बतलाया करते थे। इसका फल उल्टा हुआ। ऐसा होना

बिलकुल स्वाभाविक था। नवयुवकों के हृदय में प्रतिहिन्सा की अग्नि बहुत जल्द प्रज्वलित हो जाती है। फटकार और विरोध की बौछार सहने का धैर्य उनमें नहीं रहता। ऐसा प्रसंग उपस्थित होने पर वे विरोधात्मक प्रवृति का परिचय देने लगते हैं। और उनके द्वारा होने वाले साधारण लाभ से भी लोगों को बंचित रहना पड़ता है। उन्हें सुधारने का मार्ग उनका विरोध नहीं, समर्थन है। विरोध और फटकार के द्वारा कोई नवयुवकों को नहीं सुधार सकता। वैसी दशा में तो वे जानबूझ कर स्वाभाविक गुणों को भी तिलांजली दे बैठते हैं। किसी नवयुवक को सुधारने के लिये उसके कलेजे के अन्दर पैठने की आवश्यकता है। समर्थन और शाबासी के द्वारा सबसे पहले उसके हृदय पर अधिकार जमाना चाहिये। फिर तो वह आप ही सुधर जायगा। मंत्र मुग्ध की तरह प्रत्येक अच्छे आदेश का पालन करेगा। परन्तु बाबू मलूकचन्द में इतनी बुद्धि कहां? व्यवसाय के सिवा वे और कोई बात जानते ही नहीं थे। उन्होंने सोचा कि मरते समय भाई साहब मेहरचन्द का भार मुझ पर सौंप गये हैं। उनकी पवित्र आज्ञाका तो पालन करना ही चाहिये। मेहरचन्दके साथ सख्तीका वर्ताव करना ही उन्होंने इसका सबसे सुन्दर उपाय समझा। ऐसा सोचने का एक कारण और था। उनका ख्याल था कि एक बार रोब जम जाने पर मेहरचन्द बराबर उनसे दबा करेगा, कभी उनके अधिकार तथा प्रभुत्व को चुनौती नहीं दे सकेगा।

परन्तु फल ठीक इसके विपरीत हुआ और ऐसा होना सर्वथा स्वाभाविक था। बाबू मेहरचन्द अपने चाचा साहब को शत्रु समझने लगे। पिताजीके सामने की गयी प्रतिज्ञा को भी वह भूल जाने के लिये बाध्य हुए। उनका

हृदय उस प्रतिज्ञा का पालन करने के लिये तैयार था। परन्तु बाबू मलूकचन्द की प्रवृति ने उसे तोड़ने के लिये बाध्य किया। बराबर किसी न किसी बात को लेकर दोनों में चखचख हो जाया करती थी।

उस दिन एक अदनी बात को लेकर मुठभेड़ हो गयी। एक संस्था के लिये दो-तीन सज्जन चन्दा मांगने आये थे। बाबू मेहरचन्द के उभड़े हुए हृदयने कुछ देनेके लिये उन्हें बाध्य किया। करोड़पति आदमी थे। दस-पांच रुपये चन्दा देना प्रतिष्ठा के खिलाफ था। संग्रहकर्त्ता महोदयगण २५०) देने के लिये इन्हें बाध्य कर रहे थे। बड़ी हिचकिचाहट से उन्हों ने १२५) प्रदान किया। उनके लिये यह कोई बड़ी रकम नहीं थी। इतना रुपया तो उनकी स्थिति के आदमी किसी भी काम में बेरोकटोक खर्च कर सकते हैं। परन्तु बाबू मलूकचन्द के लिये यह असह्य हो गया। इसकी खबर पाते ही वे आग बबूला हो गये। वे तो बाबू मेहरचन्द को दबाने के लिये कोई न कोई बहाना ढूढ़ा ही करते थे। इस अवसर को उन्होंने हाथ से निकल जाने देना उचित नहीं समझा। तुरत बुला कर फटकारते हुए उन्होंने कहा—"भाई साहब के पसीने को कमाई को क्या धूल में ही मिला देने का निश्चय कर लिया है? क्यों इस तरह घर का पैसा बर्बाद करते हो?"

यह बात सुन कर बाबू मेहरचन्द को बड़ा क्रोध हुआ। फिर भी क्रोध का भाव छिपाते हुए उन्होंने कहा—"मैंने कौन सी बर्बादी की है। हरवख्त इस तरह की बातें मुझे अच्छी नहीं लगती। आप व्यर्थ इस तरह की बातें न किया करें।"

आपेसे बाहर होते हुए बाबू मलूकचन्द ने कहा—"क्या ही व्यर्थ की बातें

करता हूँ ? पैसे की बर्बादी मुझ से नहीं देखी जाती। अन्तिम समय भाई साहब तुम्हें मेरे हाथ सौप गये हैं। मैं तुम्हारी फिजूल खर्ची चुपचाप देखता रहूं, यह मेरे लिये सम्भव नहीं है।"

बाबू मेहरचन्द—"अधिक कुछ बोलने के पहले आप फिजूल खर्ची की बातें साफ साफ बतला दीजिये। इस तरह की झिड़की मैं नहीं बर्दास्त कर सकता।"

बाबू मलूकचन्द—"बात की बात में १२५) चन्दा दे देना फिजूल खर्ची नहीं तो क्या है और खास कर इस जमाने में जब कि चन्दा देने वालों पर सरकार की कड़ी निगाह रहती है।"

क्रोध से कांपते हुए बाबू मेहरचन्दने कहा—"आपके ख्याल से अगर यही फिजूल खर्ची है तो भविष्य में आप कभी फिजूल खर्ची की शिकायत नहीं करें। इसे मैं धन का सुन्दर उपयोग समझता हूं। यदि जन की सेवा करनेवाले को सहायता नहीं दी जायगी, तो धन औरकिस काम आ सकता है ?"

बाबू मलूकचन्द—"क्या भाई साहब इन दफालियों के खाने के लिये ही धन छोड़ गये हैं। तुम्हारी बातें सुनकर तो मेरी अक्ल हैरान हो रही है।"
बाबू मेहरचन्द—"इन्हें दफाली कहना सरासर अन्याय है जिन्हें मैं अच्छी दृष्टि से देखता हूँ, मेरे सामने आप उन का अपमान न किया करें। उसका बड़ा ही खराब फल हो सकता है।"

बाबू मलूकचन्द—"ओफ ! मुझे इतना डर कर रहना पड़ेगा ! बाबू साहब को यह बात पसन्द नहीं है, इसलिये मैं उनके सासने कोई बात ही न करूँ। आज कलके छोकड़ों का दिमाग इस प्रकार आसमान पर चढ़ा रहता है, इसका पता मुझे नहीं था।"

बाबू मेहरचन्द—"आप मुझसे श्रेष्ठ हैं। आप को प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखना मेरा कर्त्तव्य है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा अपने हाथोंमें ही रहती है। आप इस तरह की बातें मुझ से न किया करें। मैं अपने जानते अच्छा ही करता हूँ। पिताजी यदि मुझे आपके सुपुर्द कर गये हैं, तो इस का यह अर्थ हरगिज नहीं है कि आप हर समय मेरे सिर पर जूती लगाते रहें।"

बाबू मलूकचन्द—"उल्टे मैं ही जूती लगा रहा हूं। बात शैतानी की तुम कर रहे हो और उल्टे मुझे ही अपनी प्रतिष्ठा सम्हालने के लिये कहते हो। तुम्हारे जैसे नालायक से कोई प्रतिष्ठा की आशा नहीं रख सकता। तुम मेरी पतिष्ठा की चिन्ता न करो!"

बाबू मेहरचन्द—"बड़ी अच्छी बात है।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद बाबू मलूकचन्द बोले—"तुम्हारे किसी काम का तो मुझे अन्दाजा ही नहीं लगता है। महीनों से एक अनजान आदमी को घरमें ला रखा है और तारीफ यह कि बहू भी उससे पर्दा नहीं करती। इन बातों की क्या तुझे जरा भी शर्म नहीं है?"

बाबू मेहरचन्द—"आपने रत्नेश्वर प्रसाद को समझ क्या रखा है? क्या वह चोर, डाकू या बदमाश है?"

बाबू मलूकचन्द—"वह चोर डाकू नहीं है, इसका तुम्हारे पास क्या सबूत है। शायद वह सी० आई० डी० का ही आदमी हो?"

घृणापूर्ण मुस्कराहट के साथ बाबू मेहरचन्दने कहा—"सी० आई० डी० का आदमी होकर ही वह हमारा क्या बिगाड़ लेगा? हमारे यहाँ क्या बम पिस्तौल का कोई कारखाना है? एक भले घरके लड़के को यदि दोस्त की

करता हूँ ? पैसे की बर्बादी मुझ से नहीं देखी जाती। अन्तिम समय भाई साहब तुम्हें मेरे हाथ सौप गये हैं। मैं तुम्हारी फिजूल खर्ची चुपचाप देखता रहूं, यह मेरे लिये सम्भव नहीं है।"

बाबू मेहरचन्द—"अधिक कुछ बोलने के पहले आप फिजूल खर्ची की बातें साफ साफ बतला दीजिये। इस तरह की झिड़की मैं नहीं बर्दास्त कर सकता।"

बाबू मलूकचन्द—"बात की बात में १२५) चन्दा दे देना फिजूल खर्ची नहीं तो क्या है और खास कर इस जमाने में जब कि चन्दा देने वालों पर सरकार की कड़ी निगाह रहती है।"

क्रोध से कांपते हुए बाबू मेहरचन्दने कहा—"आपके ख्याल से अगर यही फिजूल खर्ची है तो भविष्य में आप कभी फिजूल खर्ची की शिकायत नहीं करें। इसे मैं धन का सुन्दर उपयोग समझता हूं। यदि जन की सेवा करनेवाले को सहायता नहीं दी जायगी, तो धन औरकिस काम आ सकता है ?"

बाबू मलूकचन्द—"क्या भाई साहब इन दफालियों के खाने के लिये ही धन छोड़ गये हैं। तुम्हारी बातें सुनकर तो मेरी अक्ल हैरान हो रही है।"

बाबू मेहरचन्द—"इन्हें दफाली कहना सरासर अन्याय है जिन्हें मैं अच्छी दृष्टि से देखता हूँ, मेरे सामने आप उन का अपमान न किया करें। उसका बड़ा ही खराब फल हो सकता है।"

बाबू मलूकचन्द—"ओफ ! मुझे इतना डर कर रहना पड़ेगा ! बाबू साहब को यह बात पसन्द नहीं है, इसलिये मैं उनके सासने कोई बात ही न करूँ। आज कलके छोकड़ों का दिमाग इस प्रकार आसमान पर चढ़ा रहता है, इसका पता मुझे नहीं था।"

बाबू मेहरचन्द—"आप मुझसे श्रेष्ठ हैं। आप को प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखना मेरा कर्त्तव्य है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा अपने हाथोंमें ही रहती है। आप इस तरह की बातें मुझ से न किया करें। मैं अपने जानते अच्छा ही करता हूँ। पिताजी यदि मुझे आपके सुपुर्द कर गये हैं, तो इस का यह अर्थ हरगिज नहीं है कि आप हर समय मेरे सिर पर जूती लगाते रहें।"

बाबू मलूकचन्द—"उल्टे मैं ही जूती लगा रहा हूं। बात शैतानी की तुम कर रहे हो और उल्टे मुझे ही अपनी प्रतिष्ठा सम्हालने के लिये कहते हो। तुम्हारे जैसे नालायक से कोई प्रतिष्ठा की आशा नहीं रख सकता। तुम मेरी पतिष्ठा की चिन्ता न करो!"

बाबू मेहरचन्द—"बड़ी अच्छी बात है।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद बाबू मलूकचन्द बोले—"तुम्हारे किसी काम का तो मुझे अन्दाजा ही नहीं लगता है। महीनों से एक अनजान आदमी को घरमें ला रखा है और तारीफ यह कि बहू भी उससे पर्दा नहीं करती। इन बातों की क्या तुझे जरा भी शर्म नहीं है?"

बाबू मेहरचन्द—"आपने रत्नेश्वर प्रसाद को समझ क्या रखा है? क्या वह चोर, डाकू या बदमाश है?"

बाबू मलूकचन्द—"वह चोर डाकू नहीं है, इसका तुम्हारे पास क्या सबूत है। शायद वह सी० आई० डी० का ही आदमी हो?"

घृणापूर्ण मुस्कराहट के साथ बाबू मेहरचन्दने कहा—"सी० आई० डी० का आदमी होकर ही वह हमारा क्या बिगाड़ लेगा? हमारे यहाँ क्या बम पिस्तौल का कोई कारखाना है? एक भले घरके लड़के को यदि दोस्त की

तरह मैंने घरमें रखही लिया तो कौन सा अन्धेर हो गया ? आपका कलेजा क्यों यह देख कर जलता है ?"

आवेश के साथ बाबू मलूकचन्द ने कहा—"मैं तुम्हारे जैसे नालायक से बातें करना नहीं चहता।"

"मैं भी आपसे बोलना नहीं चाहता।" इतना कह कर बाबू मेहरचन्द उस कमरेसे बाहर चले गये।

बगलके कमरेसे बाबू रत्नेश्वर प्रसाद इन लोगों की बातें सुन रहे थे। अपने सम्बन्ध की बातें सुन कर इन्हें बड़ी लज्जा हुई। ये भी उन लोगों के मतभेद के एक कारण थे, यह जानकर लज्जा से उनका सिर नीचा हो गया। बाबू मेहरचन्द चाहे जैसे भी व्यक्ति हों, पर इनके लिये तो वे एक देवता थे। सचमुच उन्होंने इनके साथ देवता तुल्य ही व्यवहार किया था। अधमरे अवस्था में अपने घर ले आना भाई की तरह सेवा-सुश्रुषा करना, अच्छे होने पर निकट सम्बन्धी की तरह सत्कार पूर्वक रखना, कोई साधारण बात नहीं। इस जमाने में विरला ही मनुष्य किसी के साथ इस प्रकार का बर्ताव करता है। संसार की स्वार्थ लीला से वे परिचित थे। अपने सगे भाई तथा परिवार वालों का स्वार्थ वे देख चुके थे। इस संसार में कोई अपना नहीं रहने का इन्हें दुख और गहरा दुखा था। ईश्वर की दया से जीवन के एक नाटकीय पटाक्षेप के अवसर पर इन्हें बाबू मेहरचन्द के रूपमें अपना और सगा मिला। ऐसी दशा में रत्नेश्वर प्रसाद बाबू मेहरचन्द को किस प्रेम तथा सम्मानकी दृष्टि से देखते होंगे, उसकी चर्चा करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। बाबू मेहरचन्द के लिये यदि उन्हें जान की बाजी लगा देनी पड़े तो उसे भी वे प्रसन्नतापूर्वक सहन कर सकते थे। वही बाबू मेहरचन्द उनके

लिये अपने चाचाकी फटकार सुनें, यह बात उन्हें किस प्रकार सह्य हो सकती थी !

सभी बातें सुनकर बाबू रत्नेश्वर प्रसाद अपने दुर्भाग्य को बार बार धिक्कारने लगे ! अपने प्राण रक्षक के हित के लिये उन्होंने उस स्थान से प्रस्थान कर देना ही उचित समझा। थोड़ी देरतक इस भावना की प्रबलता रही। परन्तु शीघ्र ही दूसरा विचार सामने आया। इस समय तक बाबू मेहरचन्द के प्रेम तथा सौजन्य का असर उनपर काफी पड़ चुका था। वे उनकी सेवा तथा हित-चिन्तनमें ही अपना जीवन व्यतीत करता चाहते थे। ऐसी दशामें इस संकटके समय उन्हें छोड़ देना उन्होंने मुनासिब नहीं समझा। इन दिनों चाचा साहब के साथ बराबर बाबू मेहरचन्द की गर्मागर्मी होती थी। इस कारण उनका चित स्थिर नहीं रहता था। ऐसे अवसर पर उन्हें एक योग्य सलाहकार की आवश्यकता थी।

यही बातें सोचकर उनके लिये अपमान सहते हुए भी उन्हें वहां ठहरने के लिये प्रेरित किया। वे चाहते थे कि दोनों आदमियों का द्वन्द किसी प्रकार बन्द हो जाय। पर लाख चेष्टा करने पर भी वे कोई मार्ग नहीं निकाल पाते थे। उस समय जाकर उन्होंने बाबू मेहरचन्द को समझाना बुझाना चाहा। पर यह बात ध्यानमें आने पर वे रुक गये कि यह बात जानकर वे कहीं दुखित न हों कि उन्हें इस बातका पता लग गया है कि उन का वहां रहना, उनके चाचा साहब पसन्द नहीं करते हैं। उन्होंने पिछले कमरे से सभी बातें सुन ली है, यह जान बाबू मेहरचन्द का कुछ दुखित तथा लज्जित होना स्वाभाविक ही था।

दसवाँ अध्याय

बाबू रामकुमार प्रसाद बड़े ही चतुर आदमी हैं। उस दिन मि० रावर्ट के सामने उन्होंने बड़ी चतुराई के साथ अपना भाव छिपाया। वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि यदि सभी लोगोंको उनके वास्तविक रहस्य का पता लग जाय तो जनता के सामने उनका कोई मूल्य नहीं रहेगा और वे बातकी बात में कौड़ीके तीन हो जायगें। इसी कारण हड़ताल की बात छिड़ने पर उन्होंने मि० रावर्ट के सामने उस दिन इतना नखरा दिखलाया था।

वे तो हड़ताल कराने का मौका ही ढूढ़ते थे। भला, इससे बढ़िया अवसर उन्हें दूसरा कौन सा मिलता? मि० रावर्ट जैसा धनी आदमी उन्हें भरपूर आर्थिक सहायता देने के लिये तैयार था। दूसरे ही दिन उन्हों ने मि० रावर्ट को अपनी स्वीकृति दे दा। साथ ही यह भी निश्चित करा लिया कि मजदूरों की सहायसा के लिये उन्हें पच्चीस हजार रुपया देना पड़ेगा। मि० रावर्ट ने इस शर्त को तुरत स्वीकार कर लिया।

बाबू रामकुमार प्रसाद कोई ऐसे वैसे शिकारी नहीं थे। वे एक ही निशाने में दो शिकार मारना जानते थे। मि० रावर्ट से सभी बातें तय हो जाने के बाद उन्होंने मील के मालिकों से भी एक बार मिल लेना उचित समझा। उनका अनुमान था कि हड़ताल की धमकी से यदि कुछ रुपये उस ओर से भी मिल जांय तो अच्छा हो। इसी उद्देश्य से वे उन लोगों से एक बार मिलना चाहते थे।

मुलाकात करने के पहले वे उनकी वर्तमान स्थिति की जानकारी प्राप्त

करने की चेष्टा करने लगे। पता लगाने पर उन्हें मालूम हुआ कि इन दिनों चाचा-भतीजा में खूब द्वन्द चल रहा है। दोनों एक दूसरे के शत्रु हो रहे है। ये बातें सुन कर रामकुमार प्रसाद को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपना मतलब गांठने के लिये इसे ही सब से सुन्दर अवसर समझा। पहले वे बाबू मलूकचन्द से मिलना चाहते थे। पीछे उन्होंने अपनी राय बदल दी। बाबू मलूकचन्द पुराने ढर्रे के आदमी थे। उन से मिलने की अपेक्षा उन्हों ने बाबू मेहरचन्द से ही मिलना अधिक अच्छा समझा। उन्होंने सोचा कि आपस के कलह के कारण शायद बाबू मेहरचन्द से उनका अधिक काम निकल सके।

एक दिन संध्या के समय वे बाबू मेहरचन्द के यहां जा पहुँचे। उस समय वे अपने कमरे में बाबू रत्नेश्वर प्रसाद से बातें कर रहे थे। इसके पहले इन लोगों में एक दूसरे के साथ मुलाकात नहीं हुई थी। फिर भी मजदूरों के नेता होने के कारण बाबू मेहरचन्द रामकुमार प्रसाद का नाम सुन चुके थे। नौकर के द्वारा कार्ड मिलने पर उन्हों ने तुरत उन्हें अपने कमरे में बुलाया। प्रारम्भिक शिष्टाचार के बाद बाबू मेहरचन्द ने पूछा—"किस प्रकार आपने यहां पधारने का कष्ट किया?"

रामकुमार प्रसाद—"कुछ विशेष कार्यवश आज मैं आप की सेवा में उपस्थित हुआ हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"बोलिये, मुझ से आप की कौन सी सेवा हो सकती है?"

मुस्कराते हुए रामकुमार प्रसादने कहा—सेवा की कौन सी बात है। आपकी कृपा दृष्टि से ही हम लोगों का कल्याण हो सकता है।"

बाबू मेहरचन्द—"यह सब कहने की बात है। किसी से किसी का कल्याण नहीं होता है। प्रत्येक आदमी अपने कर्तव्य का फल उपभोग करता है।"

रामकुमार प्रसाद—"इसमें क्या सन्देह है? फिर भी बड़े आदमियों की कृपा से साधारण लोगों का कल्याण जरूर होता है।"

बाबू मेहरचन्द—"खैर, यहां तक पधारने का कष्ट करने का कारण आपने नहीं बतलाया।"

रामकुमार प्रसाद—"एक आवश्यक कार्य से मैं आप के यहां आया हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"वह कौन सा काम है?"

बाबू रामकुमार प्रसाद—"आप से कुछ गुप्त बातें करनी हैं।"

बाबू मेहरचन्द—बेरोकटोक आप बातें कीजिये। ये मेरे अभिन्न मित्र हैं। इनके उपस्थित रहने से आपकी कोई हानि नहीं हो सकती है।"

बाबू रामकुमार प्रसाद ने इसका कोई उत्तर तो नहीं दिया। पर उनके भाव से यह स्पष्टतः मालूम पड़ता था कि एक तीसरे आदमी के सामने बातें करनेमें वे हिचकिचाते हैं। उनका भाव समझ कर बाबू मेहरचन्द बोले—"आप किसी प्रकार का सन्देह नहीं कीजिये। मैं इनसे कोई बात नहीं छिपाता हूँ। यदि संयोगवश ये इस समय यहां उपस्थित नहीं रहते तब भी मैं इन से सभी बातें कहता ही। आप इन्हें तीसरा आदमी न समझ कर मेरा ही एक दूसरा रूप समझिये।"

मुस्करा कर बाबू रामकुमार प्रसाद ने कहा—"जब इन में भी आप ही विराजमान हैं, तो इनके सामने बातें करने में मुझे कौन सी आपत्ति हो

सकती है। आज मैं काटन मील के सम्बन्ध में आप से कुछ बातें करना चाहता हूं।"

मील की बात सुन कर वैराग्य का भाव दिखलाते हुए बाबू मेहरचन्द ने कहा—"उसकी कार्यवाही में मैं कोई दिलचस्पी नहीं लेता हूं। सभी काम चाचा साहब सम्हाल रहे हैं। अब वे उसका सत्यानाश करें या उसे आबाद रहने दें, मेरा उससे विशेष मतलब नहीं है।"

जरा गम्भीरता पूर्वक रामकुमार प्रसाद ने कहा—"आखिर मील के हानि लाभ से तो आपका सम्बन्ध है ही।"

बाबू मेहरचन्द—"सम्बन्ध रहते हुए भी मेरा उस से कोई सम्बन्ध नहीं है। चाचा साहब जब सत्यानाश करने पर ही तुले हुए हैं, तो मील की कौन सी बात है। उसका भी वे सत्यानाश कर सकते हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"इन दिनों आपकी मीलमें बड़ी बुराई हो रही है। मालूम पड़ता है कि कोई काम देखने वाला ही न हो। इस सम्बन्ध में ही आपको कुछ सूचना देनेके लिये मैं यहां आया हूं।"

बाबू मेहरचन्द—"बोलिये, आप क्या कहना चाहते हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"आप से यद्यपि मेरा प्रथम परिचय है, फिर भी मीलके मजदूरों के साथ सम्बन्ध रहने के कारण अन्य मीलों के साथ साथ आप की मील की अवस्था का भी मुझे पूरा पूरा ज्ञान है।"

बाबू मेहरचन्द—"हां, आपको क्यों नहीं ज्ञान होगा। आपका नाम पहले कई बार सुन चुका हूं। आप मजदूरों के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं।"

प्रसन्नता के साथ रामकुमार प्रसादने कहा—"भला आप से कौन सी बात छिपी हुई है? मजदूरों की सेवाको ही मैंने अपने जीवनका प्रधान

उद्देश्य बना लिया है। फिर भी उनके साथ साथ मैं आप लोगोंके स्वा- का भी पूरा पूरा ख्याल रखता हूं। किसी भी भारतीय की मील देख कर मेरी प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं रहता है। पर उसकी दुरावस्था देख कर उससे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं होता है। इन दिनों आपकी मीलकी दुरावस्था देखकर मुझे हार्दिक दुःख हो रहा है।"

बाबू मेहरचन्द—"आपका दुःखित होना स्वाभाविक ही है।"

रामकुमार प्रसाद—"आपकी मीलके मजदूरों की अवस्था इन दिनों हदसे ज्यादे खराब हो गयी हैं। उनके साथ भेड़ बकरे की तरह व्यवहार किया जाता है। बाबू साहब! आपका मुनाफा उन गरीबोंके पसीना पर ही निर्भर करता है। उनके साथ मनुष्यता का बर्ताव करना आपका प्रधान कर्त्तव्य है।"

बाबू मेहरचन्द—"आपका कहना बिलकुल ठीक है। मैं भी मजदूरों के दुखसे दुखित हूं। लेकिन चाचा साहब की हठ बुद्धि के सामने मेरी अक्ल काम ही नहीं करती।"

रामकुमार प्रसाद—"लेकिन अब आपको इन बातों की ओर ध्यान देना चाहिये। आप की मील के मजदूर हड़ताल करना चाहते हैं। कई महीनों से वे मुझे हड़ताल का आयोजन करने के लिये बाध्य कर रहे हैं। अब तक मैं उन्हें किसी न किसी प्रकार टालता आया हूं। लेकिन देखता हूं कि टाल मटोल से काम नहीं चल सकता है। मजदूरों के अधिकारों की रक्षा के लिये हड़ताल के रूप में युद्ध आरम्भ ही करना होगा।"

बाबू मेहरचन्द ने आश्चर्य के साथ कहा—"क्या अवस्था इतनी संगीन हो गयी है?"

रामकुमार प्रसाद—"जरूर ! यदि मजदूरोंका असन्तोष दूर करने की चेष्टा नहीं की गयी तो एक मासके भीतर ही हड़ताल प्रारम्भ हो जायगी। आप एक भारतीय हैं। इस कारण आपको इस बातसे सूचित कर देना आवश्यक समझता हूं। हड़ताल हो जाने पर आपको भीषण रूपसे क्षति-ग्रस्त होना पड़ेगा।"

कुछ सोच कर बाबू मेहरचन्द बोले—"इसमें मेरे अधिकार की कोई बात नहीं है। संसार में पापका प्रकोप अधिक बढ़ जाने पर प्रलय होता है और उसके बाद फिर सुन्दर सृष्टि होती है। इसलिये यदि हड़ताल की सम्भावना है तो होने दीजिये। फिर उसके बाद जो होना होगा होगा।"

रामकुमार प्रसाद—"क्या हड़ताल से आप अपनी हानि नहीं समझते हैं ?"

बाबू मेहरचन्द—"हानि तो अवश्य है। लेकिन क्या किया जाय ? हमारे चाचा साहब तो मानने वाले जीव नहीं हैं। वे तो अपनेको सबसे चतुर व्यवसायी समझते हैं। हड़ताल होने पर उन्हें पता लग जायगा कि उनके विचार कितने भ्रमपूर्ण हैं ?"

उपरोक्त बातों से रामकुमार प्रसाद समझ गये कि बाबू मेहरचन्द अपने चाचा साहब से इतने चिढ़े हुए हैं कि उन्हें मूर्ख बनाने के लिये वे व्यवसाय के हानि-लाभ की भी परवा नहीं करते। इस प्रवृत्ति को उन्होंने अपने को सब से अधिक लाभदायक समझा। गर्म लोहा पर चोट लगाना वे खूब जानते थे। तुरत सहानुभूति का भाव दिखलाते हुए वे बोले:—"आप इस समय हड़ताल की गम्भीरता शायद पूरा पूरा नहीं समझ रहे हैं। उसकी भीषणता का अनुमान कर स्वयं मुझे दुःख होता है। इस कारण इतने दिनों से मैं हड़ताल की बात टालता आया हूं।"

बाबू मेहरचन्द—"एक शुभचिन्तक के नाते आप का दुःखित होना सर्वथा स्वाभाविक है। यदि आप कोई रास्ता निकाल सकें तो बड़ी अच्छी बात है।"

रामकुमार प्रसाद—"हड़ताल रोकने का एक मात्र मार्ग तो यही है कि मजदूरों की मांग स्वीकार की जाय।"

बाबू मेहरचन्द—"लेकिन जब तक चाचा साहब के हाथ में प्रबन्ध-भार है, उस समय तक उनकी एक मांग भी स्वीकार नहीं की जा सकती है।"

रामकुमार प्रसाद—"तब तो मुझे हड़ताल का आयोजन करने के लिये बाध्य होना ही पड़ेगा।"

बाबू मेहरचन्द—"मैं भी आप से सहमत हूँ। समूचे शरीर की रक्षा के लिये जिस प्रकार उसके एक विषैले भाग को काट कर फेंक दिया जाता है, उसी प्रकार समूचे व्यवसाय की रक्षा के लिये मैं भी यह आवश्यक समझता हूं कि थोड़ी हानि उठाकर भी किसी प्रकार चाचा साहब के प्रबन्ध को दोषपूर्ण प्रमाणित कर दिया जाय। ऐसा होने पर स्वभावतः ही प्रबन्ध का भार मेरे हाथों में आ जायगा और उस समय मैं सभी बुराइयों को दूर कर सकूंगा।"

रामकुमार प्रसाद—"आप का अभिप्राय मैं समझ गया। आप नवीन सृष्टि की रचना होने के पहले एक बार प्रलय होना आवश्यक समझते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"मैंने अपना अभिप्राय आवश्यकता से अधिक स्पष्ट कर दिया है। पहली मुलाकात में मुझे इतना आगे नहीं बढ़ना चाहिये था।"

रामकुमार प्रसाद—"कोई हर्ज नहीं है। आप की स्पष्टवादिता देख कर मेरी आप के प्रति बड़ी भक्ति हो रही है। आप मुझे अपना सच्चा शुभचिन्तक समझें।"

बाबू मेहरचन्द—"जानबूझ कर कोई अपनी हानि करना नहीं चाहता। लेकिन चाचा साहब की प्रवृत्ति मुझे थोड़ी हानि सहने के लिये बाध्य कर रही है।"

रामकुमार प्रसाद—"आप की चाल में गहरी राजनीति है। बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ इस प्रकार की चाल से काम निकाला करते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"दुर्भाग्यवश मुझे राजनीतिक चाल का सहारा लेने के लिये बाध्य होना पड़ रहा है।"

रामकुमार प्रसाद—"जब हड़ताल से हानि के बदले आप को वास्तविक लाभ होने की सम्भावना है, तो क्या मैं आशा करूं कि इस आयोजन में मुझे आप की सहायता प्राप्त होगी?"

बाबू मेहरचन्द—"हां, हड़ताल से मेरी पूरी सहानुभूति है और इस कार्य में मैं आप की यथाशक्ति सहायता भी करूंगा।"

रामकुमार प्रसाद—"यह मजदूरों के लिये बड़े ही सौभाग्य की बात है। मुझे आशा है कि हड़ताल के बाद आप के हाथ में प्रबन्ध आ जाने पर मजदूरों की अवस्था बहुत कुछ सुधर जायगी।"

बाबू मेहरचन्द—"इस समय इस सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। समय आने पर ही आप देख सकेंगे कि गरीब मजदूरों के लिये मेरे हृदय में कितनी अधिक सहानुभूति है।"

इतने में घड़ी ने आठ की घण्टी बजा दी। नौकर भोजन तैयार होने की सूचना दे गया। उस समय अधिक देर ठहरना उचित नहीं समझ कर बाबू रामकुमार प्रसाद फिर मिलने की बात कह कर वहां से चले गये।

उपरोक्त बातों के सम्बन्ध में बाबू रत्नेश्वरप्रसाद बाबू मेहरचन्द से

कुछ बातें करना चाहते थे। उन बातों से उन्हें बड़ा दुःख हुआ था। पारिवारिक कलह को लेकर व्यवसाय में हानि उठाने की चेष्टा को वे अपने पैर में कुल्हाड़ी मारने के बराबर समझते थे। सच्चे शुभचिन्तक होने के कारण उनका दुखित होना स्वाभाविक ही था। पर उस समय उचित अवसर न पाकर उन्होंने इस बात की कोई चर्चा न की।

ग्यारहवाँ अध्याय

बेल का गिरना और सिर का फूटना इसी को कहते हैं। व्यापार में मुनाफे के साथ साथ घटा भी होता है। घाटा सहने के लिये कलेजा कड़ा कर ही कोई व्यापार करता है। व्यापार के इस प्रारम्भिक बात को साधारण से साधारण व्यापारी भी जानते हैं। जो आज मुनाफा उठाता है, कल वही घाटा सहने के लिये तैयार रहता है। जान बूझ कर तो घाटे का काम करता नहीं है, यदि संयोग से, दुर्भाग्य से घाटा लग गया तो उसे भी सहन करना पड़ता है। यही व्यापारिक वीरता है, यही व्यापारिक परीक्षा का स्वरूप है। बाबू मलूकचन्द का बहुत बड़ा व्यवसाय है। रात-दिन घाटे और मुनाफे का अड़ंगा लगा ही रहता है। संयोगवश इस महीने फाटके में उन्हें तीन लाख का नुकसान हो गया।

साधारण परिस्थिति में इस नुकसान का कोई विशेष महत्व नहीं था। पर दिन-रात बाबू मेहरचन्द के दोषों को ढूंढ़ निकालने में व्यस्त रहने वाले बाबू मलूकचन्द की यह गलती किस प्रकार आसानी से भुलायी जा सकती

थी; बाबू मेहरचन्द ने इस घाटे को महत्व दिया और बहुत अधिक महत्व दिया। परिवार के लोगों तथा अन्य सम्बन्धियों के बीच इसको काफी विज्ञापनबाजी की गयी। बाबू मेहरचन्द ने स्पष्टतः लोगों से कह दिया कि यदि यही क्रम जारी रहा तो कुछ दिनों में हम लोगों को कंगाल बन जाना पड़ेगा। इस घाटे का जिक्र करते हुए वे मील की दुरावस्था का जिक्र करना भी नहीं भूलते थे। लोगों को हड़ताल की सम्भावना भी साफ साफ बतला देते थे। इस प्रकार मौका पाकर उन्होंने अपने चाचा से प्रतिशोध लेने का खासा उद्योग किया। घाटे की बात बिलकुल ठीक थी। लोगों को उनकी दलील का कायल होना पड़ता था।

अपने विरुद्ध इस प्रकार प्रचार होते देख कर बाबू मल्लूकचन्द के क्रोध का कोई ठिकाना नहीं रहा। जिसे उन्होंने गोद में खिलाया था और जो कल तक उनकी झिड़कियां सहता था, उसी का यह प्रचार वे किस प्रकार बर्दाश्त करते? उन्होंने लोगों से साफ साफ कह दिया कि यह नालायक है, कपूत है, बुरे व्यसनों के लिये इसे महीने में हजारों रुपये चाहिये। लेकिन मेरे जीते जी ऐसा होना किसी प्रकार सम्भव नहीं है। ऐसी अवस्था में इसका मेरे विरुद्ध विद्वेष फैलाना सर्वथा स्वाभाविक है।

दोनों ओर से इस प्रकार की बातें हुआ करती थी। इन लोगों की मनोवृत्ति देख कर दुश्मन खुश थे और शुभचिन्तक दुखित। इनके हित चाहने वाले की यही इच्छा थी कि किसी प्रकार यह द्वन्द्व समाप्त हो जाय। बाबू रत्नेश्वर प्रसाद इनके सच्चे शुभचिन्तक थे। भला, उन्हें कब इस प्रकार की बातें बर्दाश्त हो सकती थीं? वे बराबर यह झगड़ा मिटाने का उद्योग करते थे, पर इन्हें सफलता नहीं मिलती थी। अन्त में सफल होने

का कोई दूसरा मार्ग न देख कर इन्होंने बाबू मेहरचन्द की स्त्री लक्ष्मी से सहायता लेना उचित समझा। सँयोगवश लक्ष्मी इनसे पर्दा नहीं करती थी। ये भी उसे छोटी बहन की तरह मानते थे।

इधर लक्ष्मी भी घर का कलह देख कर परेशान थी। उसे मालूम था कि जिस घर में कलह का वास होता है, वहां सुख समृद्धि कभी नहीं रह सकती है। उसने अपने पति को समझाने बुझाने की कई बार चेष्टा की, पर वे रूखा सूखा जवाब देकर बात को टाल देते थे। रत्नेश्वर प्रसाद का उसके पति के ऊपर कुछ प्रभाव है, वह इस बात को जानती थी। इस सम्बन्ध में उनसे कुछ परामर्श करने के विचार से उसने एक दासी के द्वारा बाबू रत्नेश्वर प्रसाद को बुलवाया। बुलाहट पाकर वे तुरत उपस्थित हुए। वह उनसे बेरोक टोक बातें करती ही थी। उनके सामने खड़ी होकर उसने वर्तमान कलह का प्रसंग छेड़ा। कलह की चर्चा छिड़ते ही रत्नेश्वर प्रसाद बोले—"मैं तो इन बातों से स्वयं परेशान हो रहा हूं। घर में यह अनिष्टकारी दृश्य तो मुझसे देखा नहीं जाता है। जिसने मेरी प्राण रक्षा की, उसी का मेरे देखते ही देखते अनिष्ट हो, यह बड़ी लज्जा की बात है।"

लक्ष्मी—"आप उन्हें समझाते क्यों नहीं हैं? आपकी बातों का तो वे पूरा ख्याल रखते हैं।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"न मालूम उन्हें क्या हो गया है? इस विषयका प्रसंग छिड़ते ही एकदम उदासीन होकर किसी दूसरे काम में लग जाते हैं या कोई दूसरा प्रसंग छेड़ देते हैं।"

लक्ष्मी ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से कहा—"इससे उनकी बड़ी बदनामी होती है। उनकी बदनामी सुन कर तो लज्जा से मैं जमीन में धँस जाती हूं।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"हम देखते हैं कि यह मामला बड़ा ही प्रकाण्ड रूप धारण करना चाहता है। रामकुमार प्रसाद नामक एक ढोंगी आदमी इन दिनों प्रायः बाबू मेहरचन्द के यहां आया जाया करता है। वह मील में हड़ताल कराने की चेष्टा कर रहा है।"

लक्ष्मी—"फिर वह दाढ़ीजार यहां क्या लेने आता है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"बड़ी विचित्र बात है। कोई अनजान आदमी तो इन बातों पर विश्वास भी नहीं कर सकता है। स्वयं बाबू मेहरचन्द हड़ताल कराने के पक्ष में हैं।"

लक्ष्मी—"क्या कहा आपने? क्या वे स्वयं हड़ताल कराना चाहते हैं?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आपको मेरे सिर की सौगन्ध है। कृपया इस बात को एकदम गुप्त रखियेगा। बाबू मेहरचन्द को भी पता नहीं लगने पावे कि ये बातें आप के कानों तक पहुंच चुकी हैं।"

लक्ष्मी—'आप निश्चिन्त रहें। आपकी इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं हो सकेगा। लेकिन अपने कथन की सत्यता पर क्या आपको विश्वास है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इसमें विश्वास की कौन सी बात है। सभी बातें मेरे सामने ही होती है।"

लक्ष्मी—"क्या उन्होंने ही हड़ताल कराने का बन्दोबस्त किया है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"यह बात पहले उनके ध्यान में नहीं थी। लेकिन रामकुमार प्रसाद ने उन्हें अपने चंगुल में फँसा कर इस काम के लिये तैयार कर लिया है। अब तो वे उसे आर्थिक सहायता भी देना चाहते हैं।"

हाथ से सिर पीटते हुए लक्ष्मी ने कहा—"यह क्यों कह रहे हैं आप? क्या उनकी बुद्धि एकदम मारी गयी है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मैं उन्हें समझाने बुझाने के चेष्टा करूँगा। यदि मेरी बात न मानेंगे, तो यह सर्वनाश तो मुझसे न देखा जायगा। मैं तो कहीं अन्यत्र चला जाऊँगा।"

बिलखती हुई लक्ष्मी ने कहा—"इस विपत्ति के समय आप हम लोगों को छोड़ कर कहां चले जायंगे? ऐसी बात भूल कर भी जबान पर नहीं लाइये। आपके रहने से मुझे बड़ा सहारा मिलता है, दुख को दुख नहीं समझती हूँ।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आप विश्वास रखें, मैं कहीं भी रहूंगा, आप की ही सेवा करता रहूंगा। दया तथा प्रेम के द्वारा आप लोगों ने मुझे अपना गुलाम बना लिया है।"

लक्ष्मी—"आप से मुझे बड़ी आशा है। कृपया समझा बुझाकर उनका दिमाग दुरुस्त कीजिये।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आप लोगों की भलाई के लिये अपनी शक्ति भर क्या मैं कोई बात उठा रखूंगा। मैं आखिरी दम तक आप लोगों के कल्याण की चेष्टा करता रहूंगा।" इतना कहते हुए लक्ष्मी से बिदा लेकर वे बाहर चले गये।

संयोगवश उस समय रामकुमार प्रसाद भी पहुंचे हुए थे और हड़ताल के सम्बन्ध में बाबू मेहरचन्द से बातें हो रही थीं। फिर क्या था? भूखे शेर को शिकार मिल गया। रत्नेश्वर प्रसाद ने निश्चय कर लिया कि बाबू मेहरचन्द चाहे बुरा ही क्यों न मानें, इस दुष्ट से आज छेड़छाड़ अवश्य करूँगा।

रत्नेश्वर प्रसाद के आगमन के कारण चर्चा एकाएक बन्द हो गयी। कमरे में पूरा सन्नाटा छा गया। परन्तु शीघ्र सन्नाटा भंग करते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"आप अपनी बातें जारी रखिये, इनसे पर्दा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। ये हमारे अपने आदमी हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"हाँ, मैं खर्चे का जिक्र कर रहा था। हड़ताल प्रभावपूर्ण बनाने के लिये आप को कम से कम दस हजार रुपया अवश्य देना पड़ेगा।"

बाबू मेहरचन्द—"यह तो बहुत बड़ी रकम है। इतना तो मैं नहीं दे सकूँगा।"

रामकुमार प्रसाद—"दस हजार के बिना तो हड़ताल होना सम्भव नहीं है।"

जरा रुखाई के साथ बाबू मेहरचन्द ने कहा—"तो जाने दीजिये इस चर्चा को। मुझे हड़ताल कराने की कोई आवश्यकता नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—"कुछ कम रुपये में भी काम चल सकता है। पर उस दशा में मुझे बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। दौड़ धूप कर दूसरे लोगों से भी चन्दा इकट्ठा करने की आवश्यकता पड़ेगी। लेकिन जिस काम में आप जैसे बड़े आदमी का हाथ हो, उसमें दूसरे से सहायता लेनी पड़े, यह आप की ही प्रतिष्ठा के खिलाफ है।"

अब रत्नेश्वर प्रसाद से न रहा गया। उन्होंने क्रोधित होते हुए कहा—"महाशय! दाल भात में मूसरचन्द की तरह बीच में कूदने के लिये मुझे क्षमा करेंगे। आप की बातें सुन कर अब मुझ से बोले बिना नहीं रहा जाता है।"

रामकुमार प्रसाद—"क्या आप का इशारा मेरी ओर है ? मैंने कौन सी अनर्गल बात कही है ?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आप की तो सभी बातें अनर्गल होती है ।"

रामकुमार प्रसाद—"यह तो आपने अच्छी कही ! आप की दृष्टि में मैं क्या अनर्गल बातें करने वाला हूं ?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"और नहीं तो क्या ? दूसरे के घर में आग लगा कर आप उसमें हाथ सेकना खूब जानते हैं । चाहे कुछ भी हो, अपनी कला के आप पारंगत जरूर हैं ।"

बाबू मेहरचन्द की ओर इशारा कर रामकुमार प्रसाद ने कहा—"देखिये ! आप के सामने यह मेरा अपमान कर रहे हैं । आप इन्हें अपना विशेष विश्वासपात्र समझते हैं । बड़े ही आश्चर्य की बात है कि ये साधारण शिष्टाचार भी नहीं जानते ।"

आंखे लाल करते हुए रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"आप शिष्टाचार सिखलाइये बाबू मेहरचन्द को, जिनके घर में उन्हीं से सलाई मांग कर आप आग लगाना चाहते हैं । मुझे शिष्टाचार सिखलाना नहीं होगा । कितने बड़े आश्चर्य की बात है कि इन की मील में हड़ताल कराने के लिये आप इन से ही रुपया लेना चाहते हैं । ऐसी बात तो कभी सुनी भी नहीं गयी होगी । बाबू मेहरचन्द भी प्रतिहिन्सा के भाव में इतने उन्मत्त हो गये हैं कि इन्हें अपनी भलाई बुराई कुछ भी नहीं सूझती है । आप जैसे ढोगियों···"

बीच में ही बात काटते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"आपके इस उग्र रूपका मैंने स्वप्न में भी अनुमान नहीं किया था । आप देखते ही देखते इतने उत्तेजित क्यों हो गये ?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"देखते ही देखते मैं उत्तेजित नहीं हुआ हूं। यह उत्तेजना नहीं है; यह है कलेजे की जलन। सप्ताहों से मेरे कलेजे में जो ज्वाला धधक रही थी, वही असह्य हो जाने पर आज फूटकर बाहर निकली है। बाबू मेहरचन्द! इस दुनियां में मैं सभी कुछ देख सकता हूं, लेकिन आपका अमंगल नहीं देख सकता। घर का कलह घर ही में दूर कर लिया जाता है। बुद्धिमान आदमी होकर भी आप किस तरह इन लोगों के पेरे में पड़ गये हैं, इसका मुझे आश्चर्य है।"

बाबू मेहरचन्द—"मेरी बात मानकर क्या आप इस समय इस प्रसङ्ग को समाप्त करेंगे?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"अवश्य! आपकी आज्ञा मैं अमान्य नहीं कर सकता। लेकिन आपको स्वयं इन बातों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिये।"

बाबू मेहरचन्द—"अभी इस समय इनसे बातें कर लेने दीजिये। फिर मैं आपसे बातें करता हूं।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"बहुत अच्छा। मेरे रहने से शायद आप लोगों को कुछ विघ्न पड़े, इसलिये मैं बाहर चला जाता हूं।" इतना कहकर वे कमरे के बाहर चले गये।

उनके चले जाने पर बाबू मेहरचन्द ने रामकुमार प्रसाद से कहा—"ये जरा चिरचिरे आदमी है। इनकी बातों पर आप कोई ध्यान नहीं देंगे।"

मुस्करा कर रामकुमार प्रसाद ने कहा—"इनकी बातों पर मैं क्यों ध्यान देने लगा? मुझे तो आपसे मतलब है। हां, हमलोग खर्चे का अन्दाजा लगा रहे थे।"

बाबू मेहरचन्द—"इस समय बीचमें कुछ गोलमाल मच जाने के कारण चित्त कुछ उद्विग्न हो गया है। दूसरे दिन हमलोग इस बात की फिर चर्चा करेंगे।"

ये बातें सुनकर रामकुमार प्रसाद दो-एक इधर उधर की बातें कर वहाँ से चल पड़े और बाबू मेहरचन्द विश्राम करने के कमरे में चले गये।

———

बारहवाँ अध्याय

बाबू रत्नेश्वर प्रसाद को लापता हुए ६ महीने व्यतीत हो गये। इस बीच में उनके भाई साहब ने पता लगाने की भरपूर चेष्टा की। कई जगहों की दौड़धूप भी लगायी, पर कोई फल न हुआ। ग्राम में कोई आन्दोलन शहरों की अपेक्षा अधिक तेजी के साथ फैलता है। शहरवालों की किसी बाहरी बातकी ओर ध्यान देने का समय कहां? वे तो रात-दिन अपने काम में व्यस्त रहते हैं। पर ग्रामवासियों के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं है। मजदूरों को छोड़ कर मध्य श्रेणी के मनुष्य के पास बहुत अधिक फिजुल समय रहा करता है, उसे वे गप्प-शप्प तथा भिन्न भिन्न विषयों की आलोचना में लगाते हैं। इस कारण उन लोगों के बीच कोई नयी बात बहुत जल्द फैल जाती है। उस की आलोचना प्रत्यालोचना भी बहुत जल्द हो जाती हैं। कभी कभी तो इन बातों को लेकर उनके बीच दलबन्दी भी हो जाती है और भयंकर काण्ड उठ खड़ा होता है।

एकबार एक गांव के स्टेशन पर दो सज्जन एक व्यक्ति के व्यवसाय के विषय की आलोचना करने लगे। एक उसके व्यवसाय को उचित तथा लाभदायक बतलाते थे, और दूसरे उसे अनुचित तथा हानिकारक घोषित करते थे। इसी विषय पर कुछ देर तक गर्मागर्म बहस होती रही। दोनों सज्जन दलीलों के द्वारा अपने कथन का समर्थन कर रहे थे। धीरे धीरे यह बात इतनी बढ़ी कि दो एक सज्जन बीच में पड़ कर निपटारा न करा देते तो मार पीट की नौबत आ जाती। आलोच्य सज्जन के व्यवसाय तथा उसके हानि लाभ से दो में किसी का भी सम्बन्ध नहीं था। फिर भी दोनों इस तत्परता से बहस करने लगे जैसे उनके व्यक्तिगत हानि लाभ का प्रसंग उठ खड़ा हुआ हो।

यह बात शहर वालों के सम्बन्ध में लागू नहीं है। वे दूसरों की बातों में न अधिक दिलचस्पी लेते हैं और न उन्हें आवश्यकता से अधिक महत्व ही देते हैं। समयाभाव इस मनोवृति भिन्नता का प्रधान कारण है। लेकिन इसके साथ ही इसका एक और कारण बतलाया जा सकता है। ग्रामवाले इस प्रकार की चर्चा तथा आलोचना आमोद प्रमोद के रूप में करते हैं। आमोद-प्रमोद का उनके पास कोई विशेष साधन भी नहीं रहता है। इस कारण दूसरों की आलोचना कर वे लोग किसी प्रकार अपना समय आमोद-प्रमोद के साथ बिताते हैं। परन्तु शहर वालों के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं है। उनके पास आमोद-प्रमोद का काफी साधन रहता है। कुछ पैसे खर्च कर थियेटर बायस्कोप आदि के द्वारा वे अपना दिल बहला लेते हैं। इस कारण आमोद प्रमोद के लिये दूसरे की हँसी उड़ाने की उन्हें आवश्यकता नहीं पड़ती।

बाबू रत्नेश्वर प्रसाद का ग्राम दिलदारपुर भी एक साधारण श्रेणी का ग्राम था। ग्राम के सभी गुण-दोष इस में मौजूद थे। रत्नेश्वर प्रसाद के गुप्तवास ने लोगों के हृदय में काफी दिलचस्पी पैदा करदी। सभी कोई उन के भाई कामेश्वर प्रसाद की निन्दा करने लगे। उन के लिये तो बाहर निकलना भी मुश्किल हो गया। उन्हें देखते ही लोग सहानुभूति का पुल बांध देते थे। पर कुछ दूर आगे बढ़ते ही वे लोग ही उनकी हँसी उड़ाने लगते थे। अपने काम से फुर्सत मिलते ही लोग इनकी आलोचना करने में व्यस्त हो जाते थे। उन्हें इस में अपूर्व आनन्द मिलता था। आनन्द के सिवा उन की आलोचन का कोई दूसरा उद्देश्य नहीं था।

एक दिन बाबू कामेश्वर प्रसाद के हृदय को बड़ी चोट लगी। संध्या के समय एक आदमी से मुलाकात कर वे अपने घर लौट रहे थे। रास्ते में कई आदमियों के मुख से उन्होंने अपनी चर्चा सुनी। अपना जिक्र सुन कर एक पेड़ की ओट में वे सभी बातें सुनने लगे। आवाज साफ साफ उन्हें सुनाई दे रही थी। आवाज से वे बोलने वाले को पहचान भी रहे थे। जोर से हंसते हुए हरिकिशन ने कहा—"देखो न कैसा स्वार्थी है! हिस्सा हड़पने के लिये अपने भाई को घर से निकाल दिया और उसकी अब कोई सुध बुध भी नहीं लेता है। पता नहीं बेचारा रत्नेश्वर इस समय तक जिन्दा है या भटकता भटकता कहीं मर गया।"

गर्व के साथ राममनोहर ने कहा—"तुम लोग भी पूरे मूर्ख हो। अजी दोनों के दोनों ही चालाक हैं। ये समझते हैं कि हम हिस्सा हड़प कर बैठ गये हैं और उधर वह कहीं रुपया पैदा करता होगा। वह पढ़ा लिखा चालाक आदमी है, कोई मूर्ख थोड़े ही है। उसे चिन्ता किस बात की है। शादी

ब्याह तो उसने किया ही नहीं है। मौज से रुपया पैदा कर कुछ दिनों के बाद लौट आवेगा और तब कामेश्वर की सारी अक्लमन्दी हवा हो जायगी।"

मुस्कराते हुए दीनदयाल ने कहा—"किसी बात की दुम उखाड़ने में राममनोहर दादा अपनी शानी नहीं रखते। देखो न कितनी गहराई की कौड़ी निकाली है। सुनते हैं कि सरकारी सी० आई० डी० बड़े चालाक होते हैं। पर उनके बाप भी इस तरह की बातें नहीं सोच सकते हैं। कैसी अनोखी सूझ है! वाह!! वाह!!! बलिहारी है दादा तुम्हारी! अफसोस! अंग्रेजी नहीं जानते हो, नहीं तो लाट साहब जरूर मुलाकात करने के लिये तुम्हें बुलाते।" इतना कहकर वह जोर से हंसने लगा।

कुछ बिगड़ते हुए राममनोहर ने कहा—"ज्यादे बक बक करोगे तो एक चपेटे में लड़कपन भुला दूँगा। यहां हम लोग काम की बात कर रहे हैं और इसे सी० आई० डी० तथा उनके बाप दिखलाई दे रहे हैं। अंग्रेजी का एक लब्ज सीख लिया; बस बन गये बाबू! क्या तुम्हारे बाप ने कभी सी० आई० डी० का नाम सुना था? जहां देखो वहीं लड़कपन! हत्तोरे लड़के की!

दीनदयाल—"माफ कीजियेगा, आप लोग काम की बात कर रहे थे, बीच में बाधा दे दी! खूब सोच विचार लीजिये, कल ही इस मामले का फैसला है कि रत्नेश्वर प्रसाद तथा कामेश्वर प्रसाद में कौन खोटा है। इस बात के फैसले पर ही तो आप लोगों का जीवन मरण निर्भर करता है।"

राममनोहर—"यही मार खाने की निशानी है। विषबुझी तीर छोड़ने में तो यह लौंड़ा अपनी शानी नहीं रखता। देखो न, कैसी मर्म की बात कह दी!"

हरिकिशुन—"अभी लड़कपन है। जाने दो इन बातों को। इस उमर में हमलोग भी ऐसे ही अनाप शनाप बका करते थे।"

राममनोहर—"लेकिन लड़कपन की भी सीमा होती है।"

वार्तालाप का रूख पलटने के उद्देश्य से हरिकिशुन ने कहा—"इस की कोई सीमा नहीं है। रत्नेश्वर की ही बातें लीजिये। क्या कोई अक्लमन्द आदमी इतने दिनों तक बिना कोई खबर दिये घर के बाहर रह सकता है?"

राममनोहर—"तुम्हारी इस राय से मैं सहमत नहीं हूं। रत्नेश्वर उतना सीधा सादा नहीं है, जितना आप उसे समझते हैं। वह जरूर कहीं कोई काम करता होगा। वह देहाती लड़का थोड़े ही है! पढ़ लिख कर पूरा चतुर हो गया है।"

हरिकिशुन—"हृदय में विषाद उत्पन्न होने पर आदमी क्या नहीं कर बैठता है? कामेश्वर ने उसे बहुत परेशान किया था। मैं उन बातों को जानता हूं। अपने भाई की रूखाई के कारण ही उसने घर छोड़ दिया। उन्हें सोचना चाहिये कि जन्म भूमि का प्यार कितना अधिक होता है। किसी साधारण कारण को लेकर कोई जन्म-भूमि की ममता नहीं छोड़ सकता है। हृदय में भीषण शूल उत्पन्न होने पर ही रत्नेश्वर ने घर द्वार छोड़ा है। ऐसी दशा में वह जो न कर गुजरे थोड़ा है। मेरा तो अनुमान है कि अवश्य ही वह किसी भीषण विपत्ति में फंसा है। मुझे तो उसके जीवित रहने में भी सन्देह है। बिना किसी विशेष कारण के वह लड़का इतने दिनों तक घर के बाहर नहीं रह सकता था।"

राममनोहर—"सम्भव है कि आप का अनुमान ठीक हो। निश्चित रूप से इस सम्बन्ध में कुछ कहना बहुत ही कठिन है। कामेश्वर की दुष्टता

में कौन सा सन्देह है। उसके कारण ही तो उस बेचारे पर इतनी आफत पड़ी। वह चाहता था कि किसी तरह रत्नेश्वर कोई नौकरी कर इतना रुपया पैदा कर ले, जिससे वह इस गांव का सब से धनी आदमी समझा जाने लगे।"

हरिकिशुन—"बस, बस, असल बात अब आप समझ गये। वह तो रत्नेश्वर को रुपया पैदा करने की मेशीन समझता था। कई साल पहले से ही वह मुझ से बार बार कहा करता था कि भाई साहब! अब क्या चिन्ता है, शीघ्र ही रत्नेश्वर पढ़ लिखकर तैयार हो जाता है, उसे अवश्य ही कोई न कोई बढ़िया सरकारी नौकरी मिल जायगी।"

राममनोहर—"इस जमाने में नौकरी मिलना क्या कोई आसान काम है? बड़े बड़े पढ़े लिखे आदमी पेड़ की डालियां गिना करते हैं। रत्नेश्वर की कौन सी गिनती है?"

हरिकिशुन—"यह बात आप नहीं कहिये। रत्नेश्वर ने तो पढ़ने का अन्त ही कर दिया था। लोगों का कहना है कि बैरिस्टरी के सिवा उसने और सब पढ़ाई पढ़ ली है।"

राममनोहर—"क्या कलक्टरी, जजी की पढ़ाई भी उसने पढ़ी है?"

हरिकिशुन—"यह तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन मैंने सुना है कि हाकिम बन कर वह इजलास पर बैठ सकता है।"

राममनोहर—"खैर, इन बातों से उनका क्या मतलब? भाई की दुष्टता के कारण उस बेचारे की तो मिट्टी ही पलीद हो गयी।" इतना कह कर वे वहां से चलने के लिये तैयार हुए। उन्हें चलने के लिये प्रस्तुत देख कर दीनदयाल ने कहा—"दादा जी! काम की बातें क्या खतम हो गयी? थोड़ी और सलाह कर लीजिये। सत निकाल कर ही किसी बात को खतम करना चाहिये।"

राममनोहर—"हुँह ! फिर इस की शरारत शुरू हुई ? इसके मारे तो मैं परेशान हो गया हूं ।"

मुस्कुराते हुए दीनदयाल ने कहा—"परेशान तो आप रत्नेश्वर प्रसाद तथा कामेश्वर प्रसाद के भाग्य का फैसला करते करते हो गये हैं। देखिये न, सिर से पसीना टपक रहा है ।"

राममनोहर—"बस, अब चपत के द्वारा मैं तुम्हारी बातों का जवाब दूंगा ।"

दीनदयाल—"चपत के सिवा आप की खोपड़ी में और है ही क्या ?"

राममनोहर—"चलो ! अभी मैं तुम्हारे पिता जी से सभी बातें कहता हूँ ।"

दीनदयाल—"भगवान ने मुझे भी मुँह दिया है। मैं भी कामेश्वर प्रसाद से यह बतला सकता हूँ कि किस तरह पानी पी पी कर आप उनकी शिकायत करते हैं ।"

राममनोहर—"अब मैं तुम्हें पीटूंगा जरूर !" इतना कह वे दीनदयाल की ओर लपके। वह पूरा चालाक लड़का था। पांच-सात कदम पहले ही पीछे हट गया था। उन्हें लपकते देख, वह जोर से ताली पीट कर भागा। बेचारे राममनोहर ने उसे भला बुरा कहते हुए अपने घर का रास्ता लिया।

कामेश्वर प्रसाद अन्त तक बड़े धैर्य के साथ इन लोगों की बातें सुनते रहे। इनकी विपत्ति की मजेदार आलोचना करने में इन लोगों को कितना आनन्द मिलता है, यह सोचकर वे दंग रह गये। उन लोगों के चले जाने पर उन्होंने भी अपने घर का रास्ता लिया। पर रास्ते भर अपनी

आलोचना तथा ग्रामवासियों की दुष्ट प्रवृति पर विचार करते रहे। घर पहुँचने पर भी उन्हें चैन नहीं मिला। घंटों तक विवेचना करने के बाद वे इस तथ्य पर पहुँचे कि अपने भाई की विपत्ति के वे ही सबसे बड़े कारण है। उनके कारण ही वह बेचारा आज रास्ते का भिखारी हो रहा होगा।

ये बातें सोचकर लज्जा से उनका सिर झुक गया। उन्होंने पूरी शक्ति लगा कर रत्नेश्वर को ढूढ़ निकालने का निश्चय किया। इस कार्य में अपना घर द्वार बेच कर भी वे लगा देने के लिये तैयार हो गये। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि रत्नेश्वर का पता लगाकर, अवश्य ही इस कलंक को अपने सिर से धोना पड़ेगा।

दूसरे दिन उन्होंने अपने कई शुभचिन्तकों से भी इस सम्बन्ध में परामर्श किया। उन लोगों ने भी उन्हें प्रोत्साहन दिया। सब लोगों से परामर्श कर नामी नामी अखबारों में ढूढ़ निकालने वाले को पांच सौ रुपये इनाम देने का विज्ञापन छपाने का निश्चय किया गया। इसके साथ बड़े बड़े शहरों में ढूढ़ने के लिये आदमी भेजने की बात भी सोची गयी।

तेरहवां अध्याय

किस मनुष्य का जीवन किस समय किस दिशा की ओर अग्रसर होगा, इस सम्बन्ध में निश्चय के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता है। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर भिन्न भिन्न प्रकार की शक्ति छिपी रहती है। समय आने पर,

प्रदर्शन का अवसर मिलने पर वह विकसित होती है। शक्ति के विकाश के लिये अवसर की आवश्यकता होती है। कभी कभी ऐसा देखा गया है कि विकाश के उपयुक्त अवसर तथा साधन न मिलने के कारण मनुष्य को वास्तविक शक्ति छिपी रहती है और अपनी अन्य छोटी छोटी शक्तियों को ही वह प्रधान शक्ति समझ कर किसी प्रकार अपना जीवन व्यतीत करता है। बहुत दिनों के बाद उचित अवसर मिलने पर उसकी वास्तविक शक्ति का विकाश होता है। उस समय वह अपने असली रूप में दिखलायी देता है। यदि कोई लेखक बननेकी शक्ति रखता है, तो यह आवश्यक नहीं है कि आरम्भ से ही वह लेखक के रूप में जनता के सामने आवे। जिस तरह तोपखानेका बारूद आग की एक छोटी सी चिनगारी के बिना कोई काम नहीं कर सकता है, उसी तरह मनुष्य की प्रकाण्ड शक्ति, उचित साधन तथा प्रोत्साहन मिले बिना विकसित नहीं हो सकती है। कोई व्यक्ति लेखक के रूपमें, उस समय तक जनता के सामने नहीं आ सकता, जब तक उसे उसके उपयुक्त साधन न मिले। सम्भव है कि लेखन शक्ति के बदले प्रारम्भ में उसकी बुरी शक्तियों का विकाश हुआ हो और जनता के सामने उसका बुरा रूप हो। परन्तु इससे वह अपनी वास्तविक शक्ति प्रदर्शन का अधिकार नहीं खो बैठता। यदि सौभाग्यवश साधन प्राप्त होने पर वह अपने वास्तविक रूप में जनता के सामने आया तो मानव विज्ञान के मर्मज्ञ उसका सम्मान करने में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं करेंगे। यह तो अभी बदनाम आदमी था, लेखक किस प्रकार बन गया, इस प्रकार की दलील मूर्ख और मर्मज्ञहीन ही पेश कर सकते हैं। साधनों की अनुकूलता तथा प्रतिकूलता का वास्तविक शक्ति के विकाश पर

कितना अधिक प्रभाव पड़ता है, यह बात इङ्गलैंड के सुप्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय एडगर वालेस की जीवनी से स्पष्ट हो जाती है। एडगर वालेस महोदय मृत्यु के समय डेढ़ करोड़ की सम्पत्ति छोड़ गये और उसका एक एक पैसा उनकी कलम की कमाई थी। लोगों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि संसार में लेखन कला द्वारा सबसे अधिक धन पैदा करने वाला यह व्यक्ति प्रारम्भ में एक अदना सिपाही था, फौज में भर्ती होते समय, दूसरे की कौन कहे उसने स्वयं स्वप्न में भी नहीं सोचा होगा कि कभी वह संसार का सबसे धनी लेखक होगा। पीछे समय और अवसर मिलने पर वही एडगर वालेस इस सम्मान पूर्ण पद पर पहुँचा।

खैर, हमारे कथन का अभिप्राय यह है कि संसार के सामने वास्तविक रूपमें प्रकट होने के लिये मनुष्य को उपयुक्त अवसर तथा साधन की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। यही बात पं रामदयाल शर्मा के सम्बन्ध में भी लागू हुई। उनके प्रारम्भिक जीवन से परिचित रहने वालों ने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा होगा कि किसी समय मजदूरों की भलाई के लिये अपना सर्वस्व अर्पण करने का तैयार हो जांयगे। शानदार मकान, मखमली गद्दा, बढ़िया मोटर आदि इनके साधारण उपयोग की चीजें थी। गर्मी के दिनों में काश्मीर अथवा शिमला की यात्रा भी एक अपनी बात थी। आराम के साथ दिन बिताना इनके जीवन का एक खास प्रोग्राम था। अवस्था भी अधिक नहीं थी। अभी मुश्किल से तीस गर्मी जाड़ा इन्होंने बिताया होगा। आठ-दस लाख के आदमी थे। किसी बात की परवा नहीं थी। दो-एक व्यवसाय भी चलता था। सूद के रुपये से भी काफी आमदनी थी।

उस दिन एक छोटी सी घटना को लेकर उनके जीवन में मार्के का परिवर्तन हो गया। संध्या समय हवाखोरी के लिये लेक रोड जा रहे थे। रास्ते में पेट्रोल के लिये मोटर एक दूकान पर रुकी। वहां एक दरिद्र नवयुवक उनसे कुछ भिक्षा मांगने लगा। देखने में वह हृष्ट पुष्ट था। उन्होंने उसे यह कह कर फटकार दिया कि नौकरी कर क्यों नहीं दिन बिताता है? क्या भीख मांगने में ही आराम मिलता है? परन्तु इस फटकार को सुनकर भी उसने जान नहीं छोड़ी। उस समय तक ड्राइवर तेल ले चुका था। मालिक की भिक्षुक के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है, यह बात वह उनकी फटकार से ही समझ गया था। इस कारण उसने गाड़ी धीरे धीरे चलायी। उसका अनुमान था कि गाड़ी चलते ही वह हट जायगा। परन्तु उसकी धारणा गलत निकली। भिक्षुक टस से मस नहीं हुआ। इस कारण गाड़ी आगे बढ़ते ही, वह उसके नीचे आ गया। परन्तु इस समय तक गाड़ी की चाल बहुत धीमी थी। चतुर ड्राइवर ने तुरत गाड़ी रोक ली। फिर भी भिक्षुक तो घायल हो ही चुका था। चक्के के नीचे दब जाने के कारण उसके बांये पैर की हड्डी टूट गयी थी। फिर भी जानका कोई खतरा नहीं था। शर्माजी ने उसे तुरत अपनी गाड़ी पर बिठला लिया। बेचारा भिक्षुक तो दर्द के मारे परेशान था। शीघ्र ही गाड़ी अस्पताल के फाटक पर जा लगी। स्वयं पं० रामदयाल शर्मा ने अपने सामने उसकी मलहम पट्टी करायी। डाक्टरों ने विश्वास दिलाया कि मामला संगीन नहीं है। पैर काटने की भी नौबत नहीं आवेगी। ८-१० दिनों में वह भला चंगा हो जायगा। डाक्टरों के मुख से ये बातें सुन कर वे सन्तोष पूर्वक अपने घर लौट आये। उस दिन फिर उन्हें हवाखोरी की सुध बुध नहीं रही।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही उसे देखने के लिये वे फिर अस्पताल पहुँचे। उसे स्वस्थ्य पाकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। उसके परिवारवालों को खबर देने के लिये वे बहुत उत्सुक हो रहे थे। परन्तु कल शामको तो दर्द से वह इतना परेशान था कि एक शब्द भी बोलना उसके लिये सम्भव नहीं था। आज उसे स्वस्थ्य पाकर उन्होंने उसका परिचय पूछा। आंखों से आंसू गिराता हुआ उस भिक्षुक ने कहा—"हुजूर! मैं भिक्षुक नहीं हूं। काम काज करने की ताकत रखने वाले के लिये भीख मांगना मैं भयंकर पाप समझता हूं। लेकिन इतना समझते हुए भी परिस्थिति ने मुझे भीख मांगने के लिये मजबूर किया। मैं एक मील में मजदूरी करता था।"

बीच में ही बात काटते हुए शर्माजी बोले—"क्या तुम मजदूर हो?"

घायल—"जी हां।"

रामदयाल शर्मा—"कल तुमने अपना नाम क्या बतलाया था?"

घायल—"हुजूर मेरा नाम रामपलट है।"

रामदयाल शर्मा—"हां, तो मजदूरी छोड़ कर तुम भीख किस तरह मांगने लगे?"

रामपलट—"वह दुखपूर्ण कहानी मैं हुजूर को सुनाता हूं।" इतना कह कर रामपलट ने अपने कष्ट की सारी कहानी कह सुनायी। रुपये के लोभ में पड़कर किस प्रकार मेटने उसे काम से खारिज कर दिया, बाबू रामकुमार प्रसाद की सहायता से काबुली से कर्ज लेकर उसने किस प्रकार मेट को घूस देकर फिर काम पाया तथा अपने छोटे भाई हरिहर के आगमन और शराब आदि में रुपये नष्ट करने की सारी कहानी उसने विस्तार पूर्वक सुना दी।

उसकी बातें सुन कर सहानुभूति दिखलाते हुए पं० रामदयाल शर्मा बोले—"तुम्हारे भाई ने तो तुम्हें बड़ा कष्ट दिया।"

रामपलट—"क्या कहूं हुजूर! उसके कारण ही तो हमारी यह दशा हुई है।"

रामदयाल शर्मा—"हां, तो नेवाजी के साथ मारपीट होने के बाद क्या हुआ?"

आंखों से आंसू गिराते हुए रामपलट ने कहा—"उसके बाद जो होना था, वही हुआ। भूखों मरने की नौबत आई। मेट से नेवाजी की बड़ी दोस्ती थी। उसने शिकायत कर दूसरे दिन ही फिर मुझे काम से बर्खास्त कर दिया। बर्खास्त करने पर फिर बहाली के रुपये की मांग होने लगी। मैं रुपये कहां से देता हुजूर! उस दिन से भीख मांग कर किसी तरह बाल-बच्चों के साथ एक शाम भोजन कर लिया करता था। पता नहीं कल से उनकी क्या दशा हुई होगी?" इतना कह कर वह बच्चे की तरह फूट-फूट कर रोने लगा।

उसे धैर्य देते हुए पं० रामदयाल शर्मा ने कहा—"घबराने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे परिवार की हर प्रकार से सहायता करूँगा। आज ही खर्चे के लिये उन लोगों के पास दस रुपये भेज देता हूँ।"

रामपलट—"तब तो बड़ी मेहरबानी होगी, हुजूर की! उन लोगों को मौत के मुख से बचाने का पुण्य आप को प्राप्त होगा।"

रामदयाल शर्मा—"कितने दिनों तक तुम ने भीख मांग कर अपना गुजारा चलाया?"

रामपलट—"लगभग बीस दिनों तक।"

रामदयाल शर्मा—"इस बार क्या अपने नेता से तुम्हें कोई सहायता नहीं मिली?"

रामपलट—"क्या आप बाबू रामकुमार प्रसाद की बात पूछते हैं ?"

रामदयाल शर्मा—हाँ।"

रामपलट—"दूसरा कोई रास्ता न देख कर मैंने उनका दरवाजा एक बार फिर खटखटाया था। पर उन्होंने साफ साफ जवाब दे दिया। यदि सहायता देने से केवल इन्कार ही कर देते तो मुझे बहुत दुख नहीं होता। लेकिन उन्होंने मुझे बड़ी कड़ी फटकार बतलायी।"

रामदयाल शर्मा—"मुझे दुख है कि मेरे ड्राइवर की असावधानी के कारण तुम इस दुखपूर्ण अवस्था में पहुँचे हो। लेकिन घबराने की कोई बात नहीं है। मैं हर प्रकार से तुम्हारी सहायता करूंगा। तुम लोगों का जीवन इतना दुख-पूर्ण है इसका मुझे कोई ज्ञान नहीं था। तुम लोगों की अवस्था सुधारने की वास्तव में बड़ी आवश्यकता है।"

रामपलट—"हुजूर! हम लोगों की अवस्था तो भेड़ बकरी से भी गयी बीती है। उन्हें तो जीते जी भर पेट भोजन दिया जाता है, लेकिन हम लोग तो उसके भी अधिकारी नहीं समझे जाते है।"

आवेश के साथ पं० रामदयाल शर्मा ने कहा—'भगवान देश के पूंजी-पतियों को सबुद्धि दे, जिस से वे मजदूरों के साथ सुन्दर बर्ताव कर सकें। तुम्हारी कहानी सुनकर तो मेरे हृदय पर बड़ा ही गहरा असर पड़ा है।"

थोड़ी देर तक रामपलट के सम्बन्ध में डाक्टर से बातें कर पं० राम-दयाल शर्मा वहां से चलने के लिये उद्यत हुए। उन्हें चलने के लिये तैयार देख कर रामपलट ने बड़ी नम्रता के साथ कहा—"जब इस गरीब पर हुजूर को इतनी मेहरबानी है तो मेरी एक प्रार्थना पर ध्यान दिया जाय।'

रामदयाल शर्मा—"बोलो, तुम्हें क्या कहना है ?"

रामपलट—"मेरी स्त्री मुझ से मिलने के लिये बड़ी व्याकुल होती होगी। कृपया उसे तथा मेरे छोटे भाई को मिलने के लिये बुला दिया जाय।"

रायदयाल शर्मा—"अच्छा, अभी मैं इस का प्रबन्ध करता हूँ।" इतना कह कर वे बाहर चले गये।

घर लौटते ही उन्होंने एक आदमी के द्वारा रामपलट के परिवार वालों के लिये कुछ सहायता भेज दिया। उस के साथ ही उस आदमी के द्वारा उन्होंने उसकी स्त्री तथा भाई को भी बुला भेजा।

रामपलट की दुखपूर्ण कहानी का सचमुच पं० रामदयाल शर्मा पर बड़ा गहरा असर पड़ा। वे मजदूरों की सहायता में अपना जीवन व्यतीत करने का कार्यक्रम सोचने लगे। इनकी आत्मा ने स्पष्टतः कहा कि गरीब मजदूरों के उद्धार के लिये यदि तुम कुछ कर सके तो सचमुच तुम्हारा जीवन सार्थक होगा। आगे चल कर हम देखेंगे कि सभी प्रकार के आन्दोलन से सदा दूर रहने वादे शर्मा जी किस प्रकार प्राणप्रण से मजदूरों की सेवा करने लगे।

चौदहवाँ अध्याय

लोगों का ध्यान नयी चीजों तथा बातों की ओर जल्दी आकर्षित होता है। यदि कोई नयी किताब अथवा अखबार निकले तो उसके गुण दोष पर विचार किये बिना ही प्रत्येक आदमी एक बार उसे अवश्य देखना चाहता है। भले ही पसन्द लायक नहीं होने पर पीछे वह उसे निकम्मा समझ कर

छोड़ दे; पर एक बार उसका ध्यान वह जरूर आकर्षित कर लेता है। अन्य वस्तुओं तथा बातों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू है। नवीनता की ओर ध्यान आकृष्ट होना मानव स्वभाव का एक आवश्यक अंग है। यही कारण है कि फतेहचन्द काटन मील्स के मजदूरों में हड़ताल की चर्चा बहुत शीघ्र छिड़ गयी। एक रविवार को कुछ प्रमुख मजदूरों को बाबू रामकुमार प्रसाद ने अपने घर पर बुलाया था। उन लोगों को उन्होंने हड़ताल की पूरी आवश्यकता बतलायी। एक छोटे-से व्याख्यान के द्वारा उन्होंने हड़ताल की आवश्यकता स्पष्टतः बतला दी। मजदूर के अगुओंने भी उनके हाँ में हाँ मिलाया। हड़ताल की बात पक्की हो गयी। उसी समय बारह अगुओं की एक कमेटी बनी और हड़ताल के लिये मजदूरों को तैयार कराने का भार उनके जिम्मे सुपुर्द किया गया। इसके साथ ही यह भी निश्चय हुआ कि कुछ प्रचार हो जाने के बाद मजदूरों की एक विराट सभा में बाबू रामकुमार प्रसाद का भाषण होगा और उसमें हड़ताल की आवश्यकता पर पूर्णरूप से प्रकाश डाला जायगा।

सभी बातों की दीक्षा लेकर मजदूरों के अगुआ घर लौटे। जो हड़ताल कमिटी के मेम्बर बने थे, उनके उत्साह का तो कोई ठिकाना ही न था। वे तो अपने को पूरा लीडर समझने लगे थे। जिस तरह जेल आज कल नेता बनाने की फैक्टरी समझी जाती है, उसी तरह वे अपनी कमेटी को अगुआ बनाने की फैक्टरी समझने लगे। उन्हें अनुभव होने लगा, जैसे वे किसी फैक्टरी के द्वारा मजदूर के बदले नेता बन कर निकले हों।

खैर, कहने का तात्पर्य यह कि वे लोग मजदूरों के बीच खूब उत्साह के

साथ अपने उद्देश्य का प्रचार करने लगे। जहाँ दस-पाँच आदमी इकट्ठे होते कि हड़ताल की बात छिड़ जाती थी। एकाएक यह चर्चा आरम्भ हुई थी, इस कारण लोगों का ध्यान इस ओर विशेष रूप से आकर्षित हुआ।

आठ दस दिनों तक लगातार हड़ताल की चर्चा चलने पर मजदूरों में दो दल हो गया। एक हड़ताल का समर्थक था और दूसरा विरोधी। कभी कभी इस बात को लेकर लोगों में गर्मागर्म बहस भी हो जाती थी। धीरे धीरे विरोधियों की संख्या कम होने लगी। तीन-चार दिन पहले से ही यह घोषित कर दिया गया था कि रविवार को बाबू रामकुमार प्रसाद का भाषण होगा।

रविवार के दिन सभा की खूब तैयारी हुई। हड़ताल कमेटी ने खासा प्रबन्ध कर लिया था। कुछ स्वयंसेवकों की भी भर्ती की गयी थी। संध्या को निर्धारित समय पर बाबू रामकुमार प्रसाद मोटर के द्वारा पहुँचे। उनके आगमन के साथ ही सभास्थल जय जयकार की ध्वनि से गूँज उठा। रामकुमार बाबू की जय जयकार की आवाज आकाश में प्रतिध्वनित होने लगी। लोगों ने मालों से उनका शरीर लाद दिया।

सभास्थल में शान्ति स्थापित होने पर मंगलाचरण के बाद बाबू रामकुमार प्रसाद की अध्यक्षता में सभा की कार्यवाही आरम्भ हुई। दो-एक लोगों के छोटे-मोटे ब्याख्यान के बाद बाबू रामकुमार प्रसाद का ब्याख्यान आरम्भ हुआ। उन्होंने अपने ब्याख्यान में हड़ताल की आवश्यकता का पूरा पूरा दिग्दर्शन कराया। मजदूरों की अवस्था का खाका खींचते हुए उन्होंने यह बतलाने की चेष्टा की कि किस प्रकार उन लोगों की अवस्था सुधर सकती है। अन्त में उन्होंने बतलाया कि हड़ताल के सिवा उनके परित्राण का कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

वे व्याख्यान दे ही रहे थे कि सभा के बीच से एक सज्जन ने पूछा—"हड़ताल के दिनों में मजदूरों के खाने-पीने का प्रबन्ध किस प्रकार होगा ?"

रामकुमार प्रसाद—"इसका प्रबन्ध हड़ताल कमेटी करेगी।"

प्रश्नकर्त्ता—"क्या कमेटी के पास काफी धन है ?"

रामकुमार प्रसाद—मालूम पड़ता है कि आप मुझ से जिरह करना चाहते हैं। खैर, अपने व्याख्यान के बाद मैं आप को प्रश्न करने का समय दे दूँगा। बीच में रुकावट डालना ठीक नहीं है।" वे इतना बोल ही रहे थे कि चारों ओर से आवाज आने लगी—"मारो, मारो यह सी० आई० डी० का आदमी मालूम पड़ता है। सभा की कार्यवाही में विघ्न डालना चाहता है। इस आवाज को सुन कर उसे मारने के लिये कई आदमी लपके और सभा में खासा गोलमाल मचने का सामान हो गया। पर बीच में लोगों को शान्त कर बाबू रामकुमार प्रसाद ने अपना व्याख्यान फिर आरम्भ किया।

उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा कि आप लोगों को उत्तेजित नहीं होना चाहिये। इतनी छोटी सी बात को लेकर जब आप लोग इतना अधिक उत्तेजित हो जाते हैं, तो हड़ताल की कठिनाइयां किस प्रकार सह सकेंगे ? बिना कठिनाइयां बर्दाश्त किये कोई अपने अधिकार को प्राप्त नहीं कर सकता। अधिकार प्राप्ति, न्याय तथा सत्य प्राप्ति को कहते हैं। सत्य के लिये लोगों को जान तक भी अर्पण करना पड़ता है। आज आप लोग भी सत्य प्राप्ति की ओर अग्रसर हो रहे हैं। सम्भव है कि हड़ताल के दिनों में आपको बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़े। आप लोगों को तो गोली खाने के लिये भी तैयार रहना चाहिये। इसलिये प्यारे भाइयों ! उत्तेजना को अपने हृदय से दूर कर दो।

इसके बाद उन्होंने हड़ताल की आवश्यकता का एक बार फिर संक्षिप्त दिग्दर्शन कराया। किन किन मांगों की पूर्ति के बाद वे अधिकारियों से समझौता कर सकते हैं, इसकी भी थोड़ी चर्चा उन्होंने की। अन्त में हड़ताल के लिये मार्मिक अपील करते हुए उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

उनके बैठते ही प्रश्नकर्त्ता सज्जन निर्भीकतापूर्वक उठ कर फिर बोले—"क्या अब मैं आप से दो एक प्रश्न पूछ सकता हूं।"

रूमाल से पसीना पोछते हुए रामकुमार प्रसाद ने कहा—"हां, निःसंकोच आप सवाल पूछ सकते हैं।"

प्रश्नकर्त्ता—"उस समय मैं आप से यह पूछ रहा था कि आपने हड़ताल कमेटी के द्वारा मजदूरों को सहायता प्रदान करने की जो बात कही है, उसके लिये कमेटी के पास कितना रुपया है?"

रामकुमार प्रसाद—"आपको पूरी तालिका बतलाने की तो मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता। हां, आपको इस बातका विश्वास दिला सकता हूं कि मजदूरों को सहायता देने की शक्ति कमेटी रखती है।"

प्रश्नकर्त्ता—"क्या आपका विश्वास है कि हड़ताल के दिनों में मजदूरों को कोई कष्ट नहीं होगा?"

रामकुमार प्रसाद ने मुस्कराते हुए कहा—"मैंने यह कब कहा कि हड़ताल के दिनों में मजदूर मखमली गद्दे पर सोयेंगे। कष्ट तो होगा ही। अपने व्याख्यान में यह स्पष्टतः बतला चुका हूं कि कष्ट प्राप्ति के बिना कोई अपना अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता है। संसार का इतिहास हमारे इस कथन का साक्षी है। अधिकार प्राप्ति के लिये प्रत्येक देश तथा समाज को

कठिनाइयां उठानी पड़ी हैं। कांग्रेस का कार्यक्रम क्या कठिनाइयों से खाली होता है? क्या कांग्रेस इस बात की ग्राण्टी करती है कि उसके कार्यक्रम का पालन करनेवालों को किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा? ऐसी दशा में हम किस तरह मजदूरों को मखमली गद्दे की ग्राण्टी कर सकते हैं। हमारी लड़ाई तो सत्य और न्याय की है। सत्य और न्याय का मार्ग ही संकटपूर्ण होता है। मैंने तो पहले ही मजदूरोंको चेतावनी दे दी है कि कठिनाइयां सहने के लिये तैयार रहो।"

प्रश्नकर्त्ता—"आपकी बातों का मैं कायल हूं। परन्तु इसके साथ ही आपको भी यह मानना पड़ेगा कि कठिनाइयां लाभ के लिये सही जाती है। क्या आपको विश्वास है कि हड़ताल के द्वारा मजदूरों को लाभ होगा?"

रामकुमार प्रसाद—"लाभ नहीं तो क्या हानि होगी?"

प्रश्नकर्त्ता—"क्या गत वर्ष की हड़ताल का अनुभव आपके सामने नहीं है? गत वर्ष किस तरह भूखों मरने का प्रसंग उपस्थित हुआ था, क्या आप इस बातको भूल गये?"

रामकुमार प्रसाद—"मुझे सभी कुछ मालूम है और मैं कुछ भी नहीं भूला हूं। लेकिन एक बार की असफलता से डरकर क्या हमें फिर दूसरी बार चेष्टा नहीं करनी चाहिये? १९२१ ई० का आन्दोलन असफल होने पर क्या कांग्रेस ने फिर दूसरा आन्दोलन आरम्भ नहीं किया?"

प्रश्नकर्त्ता—"आप बार बार कांग्रेस का क्यों जिक्र करते हैं?"

रामकुमार प्रसाद—"मजदूरों की सभा में कांग्रेस का नाम लेना भी क्या गुनाह है? आज निःसन्देह कांग्रेस पूंजीपतियों के हाथों में हैं; एक दिन वह समय आवेगा जब मजदूर उसका सचालन करेंगे। किसी के

अधिकार को कोई अधिक दिनों तक नहीं कुचल सकता है। मजदूर भी पूंजीपतियों के जूते के नीचे अधिक दिनों तक नहीं दबे रह सकते हैं।"

इतने में चारो ओर से आवाज आने लगी—"इन क्लाब जिन्दावाद! इनक्लाब जिन्दावाद!! रामकुमार बाबू की जय!!! रामकुमार बाबू की जय!!!!

सभामें खासी गड़बड़ी मच गयी। बड़ी कठिनाई से रामकुमार बाबूने लोगों को शान्त किया। शान्ति स्थापित होने पर उन्होंने प्रश्नकर्त्ता महोदय से पूछा—"मैं आशा करता हूं कि अब आपको कोई सवाल पूछना नहीं है।"

प्रश्नकर्त्ता—"मैं दो एक प्रश्न और पूछना चाहता हूं।"

रामकुमार प्रसाद—"मुझे खेद है कि अब मैं आपको अधिक समय नहीं दे सकूंगा।"

इतने में चारो ओर से आवाज आई—"बैठ जाओ सी० आई० डी० के पुतले! बैठ जाओ!!"

लोगों को शान्त करते हुए रामकुमार प्रसाद बोले—"खैर, मैं आपको पांच मिनट का समय और देता हूं।"

प्रश्नकर्त्ता—"क्या आप सभी मीलों के मजदूरों की अवस्था सुधारना चाहते हैं?"

रामकुमार प्रसाद—"जरूर! प्रत्येक मजदूर के अधिकार के लिये लड़ना मेरे जीवन का प्रधान उद्देश्य है।"

प्रश्नकर्त्ता—"फिर सभी मीलों में हड़ताल न करा कर आप केवल फतेहचन्द काटन मिल्स में क्यों हड़ताल कराना चाहते हैं?"

रामकुमार प्रसाद—"यहाँ के मजदूरों की अवस्था अन्य मील के मजदूरों की अवस्था से भी खराब है।"

प्रश्नकर्त्ता—"लेकिन पहले तो आप सभी मीलों में एक साथ हड़ताल कराना चाहते थे?"

रामकुमार प्रसाद—"इस से यह प्रमाणित नहीं होता कि अब हमको केवल एक मील में हड़ताल कराने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये।"

प्रश्नकर्त्ता—"क्या फतेहचन्द काटन मिल्स के मजदूरों के साथ सहानुभूति दिखलाने के लिये अन्य मीलके मजदूर हड़ताल नहीं कर सकते?"

रामकुमार प्रसाद—"आप विवाद करना चाहते हैं। बहस करने के लिये मेरे पास समय नहीं है। मैं समझता हूं कि मैंने आपके सभी प्रश्नों का उत्तर दे दिया है। अब आप अपने स्थान पर बैठ जांय।

यह उत्तर पाकर प्रश्नकर्त्ता महोदय बैठना ही चाहते थे कि ५-७आदमी उनकी ओर लपक पड़े। लोगोंने बेचारे को खूब खबर ली। विशेष गोलमाल मचते देख कर रामकुमार प्रसाद ने सभा की कार्यवाही भंग कर दी। कुछ लोगों ने बीच में पड़कर उसकी रक्षा की। पर उस समय तक उस बेचारे पर काफी मार पड़ चुकी थी। रामकुमार प्रसाद ने अपनी मोटर पर उसे उसी समय अस्पताल भेज दिया और इस घटना पर बड़ा ही खेद प्रकट किया।

दूसरे रविवार को आवश्यक परामर्श करने के लिये हड़ताल कमेटी के सदस्यों को अपने घर पर बुला कर वे भी लौट आये। बेचारे मजदूर छोटी छोटी जमात बांध कर रामकुमार बाबू के भाषण तथा हड़ताल की चर्चा करने लगे।

———

पन्द्रहवाँ अध्याय

रामपलट की दुर्घटना ने पं० रामदयाल शर्मा के जीवन में वस्तुतः एक मार्के का परिवर्तन कर दिया। वे मजदूरों की सेवा को अपने जीवन का एक प्रधान उद्देश्य समझने लगे। रामपलट के लिये उनके हृदय में विशेष स्नेह उत्पन्न हो गया था, उसे आराम पहुँचाने के लिये वे हर प्रकार की चेष्टा करते थे। डाक्टरों को भी रुपया पैसा देने में किसी प्रकार की ममता नहीं की। उसी दिन उनके आदमी के द्वारा उसका भाई तथा स्त्री अस्पताल पहुँचायी गयी थी। शर्मा जी स्वयं प्रतिदिन अस्पताल जा कर उसकी देखरेख करते थे। डाक्टरों को हिदायत कर दी थी कि अवस्था में कोई विशेष परिवर्तन होनेपर टेलीफोन के द्वारा उन्हें जरूर खबर दी जाय।

समाचार पत्र पढ़ने का उन्हें विशेष अभ्यास था। प्रतिदिन प्रातःकाल दो-तीन घन्टे का समय वे अखबार पढ़ने में व्यतीत करते थे। अन्य दिनों की तरह आज भी वे अखबार पढ़ने लगे। इन दिनों मजदूरों के प्रति विशेष प्रेम रहने के कारण, उनसे सम्बन्ध रखने वाले समाचारों को वे बड़े ध्यान से पढ़ते थे। आज के पत्रों में उन्हें मजदूरो की सभा की रिपोर्ट मिली। बाबू रामकुमार प्रसाद के भाषण का भी सारांश छपा था। मार-पीट की खबर शीर्षक के रूप में खूब मोटे अक्षरों में छपी थी। सारी बातें पढ़ने के बाद उन्हें पता लगा कि फतेहचन्द काटन मील्स में हड़ताल कराने का जोरदार आयोजन किया जा रहा है। रामकुमार प्रसाद के सम्बन्ध में उन्हें थोड़ी बहुत खबर मिल चुकी थी। वे उनके कार्यों से बहुत कुछ परि-

चित हो चुके थे। दो-एक आदमियों के द्वारा उन्हें यह भी मालूम हुआ था कि शीघ्र ही किसी हड़ताल का वे आयोजन करेंगे। आज की रिपोर्ट पढ़कर उन्हें सन्देह होने लगा कि शायद स्वार्थवश ही वे उस मोल में हड़ताल कराने की चेष्टा करते हों। हड़ताल के सम्बन्ध में पूछताछ करने वाले व्यक्ति के पीटे जाने की खबर पढ़कर उन्हें बहुत दुख हुआ। फिर भी अपना ज्ञान अधूरा रहने के कारण किसी निश्चय पर पहुंचने की उन्होंने जल्दीबाजी नहीं की।

अखबार की रिपोर्ट की बातों पर वे विचार कर ही रहे थे कि इतने में टेलीफोन की घन्टी जोर से टनटना उठी। चोंगा उठा कर कान के समीप रखते ही उन्हें पता लगा कि रामपलट के सम्बन्ध में बातें करने के लिये डाक्टर साहब उन्हें बुला रहे हैं। उसी समय उन्होंने ड्राइवर को गाड़ी निकालने के लिये कहा। पांच मिनट के भीतर ही वे कपड़ा पहन कर गाड़ी पर जा बैठे।

अस्पताल पहुँचते ही वे बड़े डाक्टर के कमरे में जा पहुँचे। कुर्सी पर बैठने का आग्रह करते हुए डाक्टर साहब ने उनसे कहा—"आज रामपलट के सम्बन्ध में मैंने बड़ा साहब से परामर्श किया था। उनका कहना है कि पैर काटे बिना उसका बचना कठिन हो जायगा।"

आश्चर्य के साथ पं० रामदयाल शर्मा ने कहा—"क्या उस गरीब का पैर काट देना पड़ेगा?"

डाक्टर—"जी हां।"

रामदयाल शर्मा—"क्या इसके सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं?"

डाक्टर—"नहीं, पैर काटना आवश्यक है।"

रामदयाल शर्मा—"लेकिन पहले तो आपने मामला इतना संगीन नहीं बतलाया था।"

डाक्टर—"बाहर से वास्तव में मामला संगीन नहीं मालूम पड़ता था। पर एक्सरे परीक्षा करने से आज पता लगा कि भीतर की हड्डी सड़ गयी है और धीरे धीरे उसका प्रसार हो रहा है। यदि शीघ्र ही उतना भाग काट नहीं दिया जायगा तो समूचे शरीर के सड़ जाने की सम्भावना है।"

रामदयाल शर्मा—"ओफ! उस बेचारे गरीब की अवस्था क्या इतनी भयंकर हो गयी है?"

डाक्टर—"जी हाँ! मुझे भी कई दिनों से इसका सन्देह हो रहा था। आज तो एक्सरे द्वारा सभी बातें स्पष्ट ही हो गयीं। बड़ा साहब की आज्ञा है कल तक जरूर उसका एक पैर काट देना चाहिये।"

रामदयाल शर्मा—"आपकी बातें सुन कर मुझे तो रोमांच हो रहा है।"

डाक्टर—"इसमें रोमांच की कौन सी बात है? एक पैर काट देने से यदि किसी की जान बच जाय तो इसे सौभाग्य की बात समझना चाहिये।"

रामदयाल शर्मा—"आप लोग भला इसे रोमांच किस प्रकार समझेंगे। रात दिन लोगों के हाथ पैर काटते काटते आप लोगों की दृष्टि में यह एक मामूली बात हो गयी है। लेकिन हम लोग तो इसकी कल्पना कर ही घबरा जाते हैं।"

डाक्टर—"खैर, कुछ भी हो। कल भोर के समय उसका पैर काट दिया जायगा।"

विनीत भाव से रामदयाल शर्मा ने कहा—"क्या उसका पैर बचाने का कोई रास्ता नहीं है? यदि किसी तरह उसका पैर बच सके तो हम उसके लिये कुछ रुपये खर्च करने में भी हिचकिचाहट नहीं करेंगे।"

डाक्टर—"यह बात तो मुझे मालूम है। लेकिन आपके रुपये का असर सड़ी हुई हड्डियों पर नहीं पड़ सकता है। रुपया तो मनुष्यों पर शासन कर सकता है। मौत तथा बीमारी पर उसका कोई अधिकार नहीं है। दवा तथा इलाज से लाभ होना संयोग पर निर्भर करता है। किसी इलाज के द्वारा निश्चय ही लाभ होगा, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। यदि ऐसा हो तो रुपये वाले आदमी मरे ही क्यों? रुपये के बल पर वे बराबर मौत को टालते रहें।"

रामदयाल शर्मा—"तो आपके कहने का अभिप्राय यह है कि पैर कटे बिना उसके बचने का कोई रास्ता नहीं है।"

डाक्टर—"जी हाँ! सड़ी हुई हड्डियों को काटना ही पड़ेगा।"

रामदयाल शर्मा—"क्या आपने मरीज से इस सम्बन्ध में बातें की है?"

डाक्टर—"नहीं।"

रामदयाल शर्मा—"क्या वह पैर कटाने के लिये तैयार होगा?"

डाक्टर—"यह मैं कैसे बतला सकता हूं?"

रामदयाल शर्मा—"खैर, चल कर उससे इस सम्बन्ध में बातें करूं।" इतना कह कर वे रामपलट से मिलने चले गये।

उस समय यह बेचैनी से बिस्तरे पर अपना हाथ पटक रहा था। पहुँचते ही शर्माजी ने उससे तबीयत का हाल पूछा।

बन्दगी करते हुए रामपलट ने जवाब दिया—"बाबूजी! बेचैनी तो बहुत मालूम पड़ती है। रात भर नींद नहीं आई है।"

दुखित भाव से शर्माजी ने कहा—"तुम्हारा जख्म कुछ अधिक बढ़ गया है। अच्छा होने में कुछ अधिक समय लगेगा।"

रामपलट—बाबूजी ? मैं तो बड़े कष्ट में हूं। इस कष्ट से तो मरना ही अच्छा है।"

रामदयाल शर्मा—"घबराने की कोई बात नहीं है। तुम शीघ्र ही अच्छे हो जाओगे। डाक्टरों की राय है कि....."

वे अधिक न बोल सके। कुछ रूक कर उन्होंने कहा—"क्या डाक्टर साहब ने कोई विशेष बात कही है ?"

रामपलट—"जी नहीं; ।"

रामदयाल शर्मा—"अभी तुम्हारे सम्बन्ध में बातें करने के लिये उन्हों ने टेलीफोन के द्वारा मुझे बुलाया था।"

रामपलट—"किस तरह की बातें ?"

रामदयाल शर्मा—"उनका कहना है कि एक पैर काटे बिना तुम अच्छे नहीं हो सकते हो।"

सिर पर हाथ पटकते हुए रामपलट ने उत्तर दिया—"क्या मेरा पैर काट दिया जायगा ?"

रामदयाल शर्मा—"डाक्टरों की तो यही राय है।"

रामपलट—"बापरे ! पैर कट जाने पर मैं जिन्दा किस तरह रह सकूँगा ? नहीं, नहीं, यह हरगिज न हो सकेगा। पैर कटाने की अपेक्षा मैं फांसी पर चढ़ जाना अच्छा समझूँगा। यही न, कि डाक्टरों की बात नहीं मानने पर मुझे मार दिया जायगा। मैं इसके लिये तैयार हूं !"

रामदयाल शर्मा—"इस में मरने की कोई बात नहीं है। पैर कट जाने पर निश्चय ही तुम्हें कुछ कष्ट होगा, लेकिन जान तो बच जायगी।"

रामपलट—"बाबू जी ! इस जिन्दगी से तो मौत ही अच्छी है।

बिना पैर के मैं जी कर ही क्या करूँगा ? जन्म भर मुझे खाने को कौन देगा।

रामदयाल शर्मा—"इसकी चिन्ता न करो। बेकार हो जाने पर तुम्हें किसी तरह का आर्थिक कष्ट नहीं होगा, आजन्म मैं तुम्हारी सहायता करूँगा।"

रामपलट—"आप की बातें मैं मानता हूं। लेकिन पैर कट जाने पर तो मैं एक दिन भी जिन्दा न रह सकूंगा। उस कष्ट से तो मरना ही ठीक है। हाथ पैर कट जाने पर अमीर आदमी किसी तरह अपनी जिन्दगी बिता सकते हैं, रात दिन मखमली गद्दे पर पड़े रहे, नौकर सेवा करता रहा। रुपये के बलपर आराम की सभी चीजें उन्हें मिल जाती हैं। लेकिन मेरे जैसे गरीब को तो उस दशा में भयंकर नर्क का कष्ट भोगना पड़ेगा। इसलिये मुझे तो मरने दीजिये। मैं किसी भी अवस्था में पैर नहीं कटाऊंगा। बापरे ! पैर कटा दूंगा ? ओफ !"

रामदयाल शर्मा—"डाक्टर साहब से मैंने बहुत कहा कि पैर काटे बिना वे किसी तरह तुम्हें अच्छा कर दें। इसके लिये मैं कुछ रुपया भी खर्च करने के लिये तैयार था। लेकिन उन्होंने एकदम इन्कार कर दिया।"

रामपलट—"यह सब डाक्टरों की बदमाशी है। मैं क्या कभी अस्पताल आता ? मुझे तो इनकी बातों की पूरी पूरी जानकारी है। अस्पताल आने पर लोगों का प्राण और भी संकट में पड़ जाता है। यदि किसी तरह जान बच गयी तो अंग भंग तो जरूर हो जाता है। हाथ पैर काट देने का तो डाक्टरों को मर्ज होता है। इस में वे अपनी बहादुरी समझते है।"

रामदयाल शर्मा—"मेरा विचार है कि बिना कुछ सोचे बिचारे तुम डाक्टरों की राय के अनुसार चलो। इसी में बुद्धिमानी है।"

रामपलट—"पैर कट जाने पर मुझे बड़ा कष्ट होगा।"

रामदयाल शर्मा—"इस की कोई चिन्ता न करो। अपनी शक्ति भर मैं तुम्हें कष्ट से दूर रखने की चेष्टा करूंगा। मुझे दुख है कि मेरी मोटर के कारण तुम्हारी यह अवस्था हुई, यदि जिद्के कारण तुम पर कोई खतरा आया तो इस का बहुत बड़ा दुख मुझे आजीवन रहेगा। इस लिये यदि अपने लिये नहीं, तो मेरा दुख कम करने के लिये तुम डाक्टरों की राय मान लो।"

कुछ सोच कर रामपलट बोला—"मेरी आत्मा पैर कटाने की राय नहीं देती है। लेकिन मैं अपने को आप की मर्जी पर छोड़ देता हूं। मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण आप को किसी प्रकार का दुख हो।"

रामदयाल शर्मा—तुम मेरी बात मान गये, इस की मुझे बड़ी प्रसन्नता है।"

रामपलट—"कब मेरा पैर काटा जायगा?"

रामदयाल शर्मा—"डाक्टर साहब की राय है कि कल ही यह कार्य कर दिया जाय। क्योंकि देर होने से सड़ी हुई हड्डी का विस्तार होता जायगा।"

रामपलट—"पैर कटने के पहले मैं अपनी स्त्री तथा भाई से मिलना चाहता हूं।"

रामदयाल शर्मा—"आज ही मुलाकात करने का प्रबन्ध मैं कर दूँगा।"

रामपलट–"एक निवेदन और है। उस समय हुजूर भी यहां आने का कष्ट करेंगे। आप के न आने से मैं जिन्दा नहीं रहने पाऊंगा। डाक्टर लोग मेरी जान ले लेंगे।"

रामदयाल शर्मा—"तुम कोई चिन्ता नहीं करो। मैं स्वयं उपस्थित रहूंगा।" इतना कह कर वे बाहर चले गये। घर लौटने के पहले उन्हों ने एक बार फिर डाक्टर साहब से मिल लेना आवश्यक समझा। संयोगवश बरामदे पर ही उन से मुलाकात हो गयी। उन्हें देखते वे ही बोले—"मैंने उसे तैयार कर लिया है।"

डाक्टर—"बड़ी अच्छी बात है।"

रामदयाल शर्मा—"आपरेशन में जान का तो कोई खतरा नहीं है।"

डाक्टर—"काट छाँट का कोई भी काम खतरे से खाली नहीं होता। लेकिन आप चिन्ता न करें, ऐसे मामलों में कोई डर नहीं रहता है।"

उनकी ये बातें सुन आपरेशन के समय स्वयं उपस्थित होने की बात कह पं० रामदयाल शर्मा अपने घर लौट आये।

सोलहवां अध्याय

लगभग एक सप्ताह से रत्नेश्वर प्रसाद का कोई पता नहीं है। हड़ताल के प्रश्न को लेकर बाबू मेहरचन्द के साथ उनका गहरा मतभेद हो गया था। वे रामकुमार प्रसाद से मिलकर अपनी मील में हड़ताल कराना चाहते थे। चाचा साहब को नीचा दिखाना ही, इस समय उनका एकमात्र उद्देश्य था। चाहे जिस उपाय से हो, अपने उद्देश्य की पूर्ति वे अवश्य चाहते थे। इस

कारण वे रामकुमार प्रसाद को सहायता देने के लिये हर प्रकार से तैयार थे। सच्चे शुभचिन्तक रहने के कारण रत्नेश्वर प्रसाद को यह बात किसी प्रकार मान्य नहीं थी। वे जानते थे कि प्रतिहिन्सा की भावना के कारण बाबू मेहरचन्द उचित अनुचित का निर्णय करने की शक्ति खो बैठे हैं। प्रतिहिन्सा की भावना दूर कर वे उनके हृदय में कर्त्तव्य की मूर्त्ति प्रतिष्ठित करना चाहते थे। बाबू मेहरचन्द की स्त्री लक्ष्मीका भी ऐसा ही अनुरोध था। लक्ष्मी को वे बहन की तरह प्यार करते थे; वह भी उन्हें भाई की तरह मानती थी। उसके सामने वे बाबू मेहरचन्द का अन्धकार दूर करने के लिये प्रतिज्ञा—बद्ध थे।

एक दिन इसी बात को लेकर एक बड़ा ही अप्रिय प्रसंग उपस्थित हो गया। रत्नेश्वर प्रसाद बाबू मेहरचन्द को प्रति दिन पारस्परिक वैमनस्य दूर करने की सलाह देते थे। हड़ताल के सहयोग के सम्बन्ध में तो उनका विरोध स्पष्ट तथा जोरदार था ही। बाबू मेहरचन्द भी रत्नेश्वर प्रसाद से विशेष प्रेम रखते थे। पता नहीं, उनके हृदय में क्यों उनके प्रति एक विशेष प्रेमकी उत्पत्ति हो गयी थी? वे उन्हें दिल से चाहते थे, अपना अभिन्न मित्र समझते थे। ऐसा न होने पर घर वालों का बिरोध सहते हुए भी वे किस प्रकार दृढ़ता पूर्वक उन्हें परिवार में एक निकट सम्बन्धी की तरह रखते? रत्नेश्वर प्रसाद के हृदय पर किसी बात की चोट न लगे इसका वे सदैव ख्याल रखते थे। परिवार वालों के विरोध को भी वे यथा सम्भव उनसे छिपाने की चेष्टा करते थे। ऐसी दशा में कौन कह सकता था कि स्वयं बाबू मेहरचन्द के ही किसी कार्य से रत्नेश्वर प्रसाद के हृदय पर गहरी चोट लगेगी। परन्तु हुआ ऐसा ही।

एक घटना विशेष के कारण बाबू मेहरचन्द अपने चाचा साहब पर अधिक उत्तेजित होकर बैठे थे। उनके हृदय में प्रतिहिंसा की प्रबल ज्वाला धधक रही थी। उसी समय रत्नेश्वर प्रसाद ने हड़ताल की चर्चा छेड़ दी और उनकी नीति का तीव्र विरोध किया। इस विरोध ने ज्वाला में घी का काम किया। वे तो जल भुनकर खाक हो गये, उन्होंने गर्म होते हुए कहा—"मैं आप पर अधिक प्रेम रखता हूं, इसका यह अर्थ हरगिज नहीं हो सकता है कि प्रत्येक बात में आप मुझसे बहस किया करें और मुझे दबाया करें।

नम्रता पूर्वक रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"बहस करने की भावना से मैं किसी समय कोई चर्चा नहीं छेड़ता हूं। आपका प्रेम मुझे आपको उचित सलाह देने के लिये बाध्य करता है।"

बाबू मेहरचन्द—"लेकिन मेरा प्रेम आपको मुझे दुखित करने के लिये तो प्रेरित नहीं करता होगा।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"हरगिज नहीं। आपको दुखित करने का तो कोई प्रसंग ही नहीं उठता।"

बाबू मेहरचन्द—"फिर जानबूझ कर आप ऐसी बात क्यों करते हैं, जिससे मुझे दुखित होना पड़े।

रत्नेश्वर प्रसाद—"किसी भी बातसे आपको दुखित करना मेरा उद्देश्य नहीं रहता। आपको सुखी बनाने की भावना से ही प्रेरित होकर मैं आपसे कभी कभी कुछ निवेदन कर दिया करता हूं।"

बाबू मेहरचन्द—"मुझ को ऐसे सुख की आवश्यकता नहीं है। आप कृपया सुखका नुस्खा अपने पास ही रखा कीजिये।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मेरे सामने ही आप का अनिष्ट हो और मैं चुपचाप देखता रहूं, यह किस प्रकार सम्भव है?"

कुछ उत्तेजित होकर बाबू मेहरचन्द ने कहा—"मैं आप से बहस करने के लिये तैयार नहीं हूं और मुझसे बहस करने का आपको कोई अधिकार भी नहीं है। मैं आपको अन्तिम चेतावनी देते हुये कहता हूं कि भूलकर भी आप इस तरह की चर्चा कभी मेरे सामने न किया करें।"

अन्तिम चेतावनी की बात सुनकर रत्नेश्वर प्रसाद चुप हो गये। उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि बाबू मेहरचन्द उनके प्रति कभी ऐसे कठोर शब्दका प्रयोग करेंगे। उनके हृदय ने कहा कि क्या उनके हृदय में उनके प्रति मित्रके बदले आश्रित का भाव है? आश्रित का भाव रहना तो स्वाभाविक ही था। लेकिन बाबू मेहरचन्द के गत कई मासों के व्यवहार ने यह सिद्ध कर दिया था कि वे उनके प्रति एक अभिन्न मित्रका भाव रखते हैं। ऐसी दशामें स्वभावतः ही रत्नेश्वर प्रसाद उन्हें आश्रयदाता के बदले मित्र के रूप में देखने लगे थे। आश्रयदाता की कड़ी बात कोई भले ही बर्दाश्त कर ले, लेकिन मित्र की कड़ी बात सहने की शक्ति बहुत कम लोगों में रहती है। रत्नेश्वर प्रसाद के पास भी ऐसी शक्ति नहीं थी। इस कारण उपरोक्त बातों से उनके हृदय पर बज्राघात हुआ।

कई घंटों के बाद दिमाग की गर्मी कम होने पर बाबू मेहरचन्द को भी अपनी बातों की कठोरता का पता लगा, अपनी कठोर बातों को याद कर वे बड़े ही लज्जित हुए। यदि वे जानते कि इसका परिणाम इतना भीषण होगा, तो वे अवश्य प्रतिकार की चेष्टा करते। परन्तु उन्हों ने इसे आवश्यकता से अधिक भयंकर नहीं समझा। इस कारण मन ही मन लज्जित होकर वे चुप रह गये।

दूसरे दिन ही उसकी वास्तविक भयंकरता उनकी आंखों के सामने नाचने लगी। प्रातःकाल ही उन्होंने रत्नेश्वर प्रसाद को मकान से अनुपस्थित पाया। बहुत थोड़े लोगों के साथ हिले मिले रहने के कारण वे शायद ही कभी बाहर निकलते थे। यदि किसी से मिलना भी हुआ तो संध्या समय वे लोगों के साथ मुलाकात करने के लिये जाया करते थे। आज प्रातःकाल ही उन्हें अनुपस्थित पाकर बाबू मेहरचन्द के हृदय में कुछ सन्देह हुआ। कल की बातों की स्मृति ने उनके सन्देह को और भी पुष्ट कर दिया। फिर भी वे उनके लौटने की प्रतीक्षा करते रहे। उन्हों ने सोचा कि शायद उनकी पत्नी का कोई विशेष काम करने के लिये बाहर गये हों। उन्हें मालूम था कि वह अपना खास काम उनके द्वारा ही कराती है। कई स्थलों पर तो उन्हें इस बातका भी प्रमाण मिला था कि उनकी अपेक्षा वह रत्नेश्वर बाबू पर ही अधिक विश्वास रखती है। इन बातों से वे किसी प्रकार असन्तुष्ट नहीं थे। रत्नेश्वर प्रसाद के प्रति सच्चा प्रेम रहने के कारण अपनी स्त्री पर उनके प्रभाव की वृद्धि देखकर वे जलते नहीं थे।

खैर, वे घंटों तक उनके आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। इस बीच में उन्होंने स्त्री से भी उनके सम्बन्ध में पूछताछ की। पर उसे भी कोई पता न था। प्रतीक्षा में समूचा दिन व्यतीत हो जाने पर उन्हें विश्वास हो गया कि कल की बातों से रुष्ट होकर वे कहीं चले गये हैं। यदि प्रारम्भ में ही उन्हें इस बातका पता लग जाता तो समूचा दिन उन्हें प्रतीक्षा की भयंकर अग्नि में जलना नहीं पड़ता। कल आवेशवश उन्हों ने रत्नेश्वर प्रसाद को दो-एक कड़ी बात कह दी थी यह एक दूसरी बात है; पर इस से यह प्रमाणित नहीं हो सकता कि उनके हृदय में उनके प्रति

वास्तविक प्रेम नहीं था। दिन भर उनकी प्रतीक्षा में उन्हें भयंकर कष्ट सहना पड़ा। अनुभवी व्यक्ति जानते है कि प्रतीक्षा का मर्ज कितना बुरा होता है और खास कर उसकी भयंकरता तो और भी बढ़ जाती है, जब किसी ऐसी व्यक्ति की प्रतीक्षा करनी हो, जिसके लिये उसके हृदय में सच्चा प्रेम हो। इस दशा में तो एक घंटा भी एक युग सा मालूम पड़ने लगता है। बाबू मेहरचन्द को समूचा दिन प्रतीक्षा की उसी भयंकर अग्नि में जलना पड़ा।

संध्या समय उनके चले जाने का विश्वास हो जाने पर उन्हें अपार कष्ट हुआ। वे अपने आवेश को बार बार धिक्कारने लगे। पर उस से लाभ ही क्या हो सकता था? उन्हों ने पता लगाने की बड़ी चेष्टा की; पर कोई फल न हुआ। इस प्रकार एक सप्ताह व्यतीत हो गया। डाक का पुलिन्दा खोलने पर आज उन्हें एक लिफाफा मिला। ऊपर के अक्षर से ही वे पहचान गये कि यह रत्नेश्वर प्रसाद का लिखा हुआ है। बड़ी उत्सुकता के साथ उसे खोल कर वे पढ़ने लगे। वह इस प्रकार था :—

प्रिय बाबू मेहरचन्द,

इस संसार में यदि मैं किसी के उपकार से दबा हुआ हूं तो वह आपका ही उपकार है; इस ससार में यदि मैं किसी को अपना समझता हूं तो वे आप ही हैं; और इस संसार में यदि किसी के हुंकार पर मैं जान तक दे सकता हूं तो वह आप का ही हुंकार है। ऐसी दशा में आप की आज्ञा के बिना आप से अलग होना मेरे लिये दुर्भाग्य और कलंक की बात है। आप समझते होंगे कि उस दिन की बातों के कारण मैं एकाएक आपके यहां से गायब हो गया। आपका अनुमान होगा कि जिस व्यक्तिको मैंने मौत के मुँह से

बचाया, जीवन दान दिया, वह मेरी एक कड़ी बात बर्दाश्त नहीं कर सका। केवल एक बातको लेकर वह मुझ से अलग हो गया। सचमुच इस स्थल पर असहनशीलता की पराकाष्ठा हो जाती है। अपने ऊपर इस प्रकार के इल्जाम की बातें सोच कर मेरा सिर लज्जा से नीचे झुक जाता है।

निश्चय ही उस दिन की बातों ने कुछ अंशों में प्रत्यक्ष कारणका काम किया। परन्तु आप से कुछ दिनों के लिये अलग होने के लिये वह छोटा सा कारण पर्याप्त नहीं हो सकता है। यदि मैं शरीर हूं तो आप मेरी आत्मा हैं। आत्मा के बिना शरीर नहीं रह सकता है। ऐसी दशा में किस तरह सम्भव है कि आप की आज्ञा के बिना मैं आप से अलग होता और वह भी आपको सूचित किये बिना।

मेरे प्रति आपके हृदय में कितना अगाध प्रेम है, इस बात से मैं अपरिचित नहीं हूं। बहन लक्ष्मी का स्नेह तो मेरे अस्तित्व को सदा के लिये आपके अस्तित्व में मिला देता है। शब्द और आवेशपूर्ण शब्द में क्या इतनी शक्ति हो सकता है कि वह हम लोगों के इस भाव पर पानी फेर दे। इस स्थल पर मैं यह भी स्पष्टतः स्वीकार कर लेना चाहता हूँ कि यदि आप लोग मेरे प्रति एक अलौकिक प्रेम का परिचय न देते तो हम लोगों का वास्तविक सम्बन्ध एक आश्रित तथा आश्रयदाता का रहता। उस दशा में भी वह सम्बन्ध बड़ा ही पवित्र तथा महत्वपूर्ण होता। परन्तु आपके अकथनीय प्रेम ने तो हम लोगों के सम्बन्ध में स्वर्गीय विभूतो और चमत्कार का सयोग कर दिया है। आपके यहां हम आश्रित के रूप में नहीं, एक सच्चे प्रेम-पात्र के रूप में रहे हैं। हमारे कारण आपको परिवार वालों के विरोध का सामना करना पड़ता था। इस बात को आप हम से सदा दूर

रखने की चेष्टा करते थे। यह भावना, मेरे प्रति, आपके स्वर्गीय स्नेह का स्पष्ट प्रमाण है।

इतनी बातें मैंने केवल यह बतलाने के उद्देश्य से लिख दीं, जिस से आप इस भ्रम में न रहें कि मैं आपके प्रेम की परख न कर सका और इस प्रकार एक अनजान की तरह आप से अलग हो गया।

हाँ, बिना सूचना दिये आप के यहां से प्रस्थान करने के कारण की चर्चा कर रहा था। मैं इस बात को स्वीकार कर चुका हूं कि उस दिन की बातों ने ही प्रत्यक्ष कारण का काम किया। फिर उसे हम कारण मानने के लिये तैयार नहीं हैं। अधिक से अधिक हम उसे क्षणिक कारण कह सकते हैं। केवल क्षणिक और प्रत्यक्ष कारण के आधार पर ही संसार का कोई काम नहीं होता है। प्रत्येक प्रत्यक्ष कारण के पीछे स्थायी कारण छिपे रहते हैं। आप जानते हैं कि गत प्रथम यूरोपीय-महासमर का प्रत्यक्ष और क्षणिक कारण अस्ट्रिया में सरबिया के राजकुमार की हत्या था। परन्तु इसके पीछे जर्मनी के साम्राट कैसर की विश्व विजय करने की लालसा छिपी हुई थी। और उस लालसा की आत्मा ने ही हत्याकाण्ड के क्षोभ में प्रवेश कर महासमर का श्रीगणेश कराया। इतिहास लेखक और इतिहास के विद्यार्थी महासमर के श्रीगणेश का दोष हत्याकाण्ड पर न मढ़ कर कैसर की लालसा पर मढ़ते हैं। इससे यह स्पष्ट हुआ कि किसी कार्य का दायित्व क्षणिक कारण पर न रह कर उसके पीछे काम करने वाले स्थायी कारण पर रहता है। अधिक से अधिक आप की बातों ने क्षणिक कारण की सृष्टि की थी। आप से कुछ दिनों के लिये मेरे अलग होने का एक बड़ा कारण है और उसका जिक्र मैं आगे करूंगा। इस स्थल पर मैं यह निवेदन कर

देना आवश्यक समझता हूँ कि यदि उस दिन की बातों के लिये आप को किसी प्रकार का दुख हो तो वह व्यर्थ और निराधार है। क्यों कि अधिक से अधिक क्षणिक कारण होने के सबाब से मेरे अलग होने का दोष उस पर नहीं लगाया जा सकता है। इस कारण आप इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का दुख न करेंगे।

अब मैं वास्तविक कारण की चर्चा करता हूँ। आप जानते हैं कि किसी भी व्यक्ति का सच्चा शुभचिन्तक अपने सामने उसे क्षतिग्रस्त होते नहीं देख सकता है। इस स्थल पर मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि आप की शुभचिन्तना ही मेरे जीवन का एक पवित्र तथा प्रधान उद्देश्य है। यदि मैं आप के प्रेम का कायल हूँ तो कभी न कभी आप भी मेरे प्रेम के कायल होंगे, इसका मुझे विश्वास है। जब आप मेरे सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझते हैं, तो मेरे लिये बड़ी कृतघ्नता होगी, यदि मैं भी आपके प्रति वैसी भावना नहीं रखूँ। बेअदबी के लिये माफी मांगता हुआ मैं आप से यह भी निवेदन कर देना चाहता हूं कि इस समय प्रतिहिंसा की भावना ने आप को पागल बना दिया है। उसके चक्कर में पड़ कर आप अपने हानि-लाभ को भूल गये हैं। गुण और दोष मनुष्य में ही होते हैं। यदि चाचा साहब में ही कुछ दोष हैं, तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कही जा सकती। एक मनुष्य ही दूसरे मनुष्य के दोष को क्षमा करता है और उससे उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों को सहता है। हम चाचा साहब के दोषों को स्वीकार कर लेते हैं। हम यह भी मान लेते हैं कि उन्होंने आपके साथ आदर्श तथा सुन्दर व्यवहार नहीं किया है। लेकिन इससे यह प्रमाणित नहीं होता कि आप भी उनके साथ बुरा बर्ताव करें। एक को

बुराई से दूसरे की बुराई का समर्थन इस दुनिया में आज तक नहीं हुआ है। आपके सम्बन्ध में भी किसी तरह ऐसा नहीं हो सकता है। अनुनय-विनय तथा अन्य उपायों के द्वारा आप चाचा साहब की बुराइयों का निराकरण कर सकते थे। परन्तु आपने ऐसा नहीं किया। उसके बदले आपने एक ऐसी नीति का आश्रय लिया, जिसका समर्थन किसी भी अवस्था में नहीं हो सकता है। दूसरों को कौन कहे, बहन लक्ष्मी भी आप के इस कार्य का समर्थन नहीं करती। आप की नीति से चाचा साहब के साथ साथ आप को भी क्षतिग्रस्त होना पड़ेगा। अपनी नाक काट कर दूसरों की यात्रा में विघ्न डालने की नीति का समर्थन भला आप का कोई शुभचिन्तक कैसे कर सकता है?

माफ कीजियेगा, ऊपर के शब्दों की उग्रता के लिये। हृदय की स्पष्टता ने वैसा लिखने के लिये बाध्य किया। आपके अकृत्रिम प्रेम ने वैसा लिखने के लिये प्रोत्साहित किया। मैं आरम्भ से ही आप की नीति का विरोध करता आया हूं। जहां तक मेरे पास शक्ति थी; जहां तक मेरे पास दलील थी; मैंने आपको समझाया बुझाया। परन्तु उसका कोई फल न हुआ। मेरी शक्ति से आपको किसी प्रकार का लाभ न हो सका। ऐसी दशा में मेरा दुःखित और निराश होना स्वाभाविक था। धीरे धीरे निराशा की भयंकरता बढ़ती गयी। मैं अपने को निःसहाय तथा शक्तिहीन समझने लगा।

इस दुनियां में मैंने बहुत कुछ देखा है और बहुत कुछ देखने के लिये तैयार हू, परन्तु अपनी आंखों के सामने आप की बुराई देखने की शक्ति मुझ में नहीं है। आप इसे मेरी कमजोरी कह सकते हैं। परन्तु मैं विवश हूं। दुख के समय भी साथ रहना संसार की नीति है। अपने आदमी दुख

में भी साथ नहीं छोड़ते। परन्तु मैंने ऐसा ही किया है। शायद आप आश्चर्य करेंगे, यदि अपनी इस नीति का समर्थन मैं इस स्थल पर करूं।

समीप रह कर मैं अपने को आपके लिये उपयोगी प्रमाणित नहीं कर सका। मेरा अनुमान है कि शायद दूर रह कर मैं आपके उपयोग के लायक हो सकूं। केवल इस अनुमान की वास्तविकता का अन्दाजा लगाने के लिये मैं इस समय आप से अलग हुआ हूं। देखूं, यदि आपके लिये अपने को उपयोगी प्रमाणित कर सकूं। भगवान मुझे शक्ति दे। बस, केवल उपयोगिता के आधार पर ही मैं अपनी वर्तमान नीति का समर्थन कर सकता हूं। इसके सिवा मेरे पास और कोई दलील नहीं है।

मैं जानता हूं कि मेरे इस व्यवहार से आप दुखित तथा असन्तुष्ट हुए होंगे। इसके साथ ही मुझे यह भी मालूम है कि मेरे इस कार्य में आपने शायद एक झूठे आत्माभिमान की बू पायी होगी। इसके साथ ही मैं यह भी कह सकता हूं कि इस स्थल पर यदि मैं आप की नीति का समर्थन करता, तो मेरा बहुत कुछ स्वार्थ सिद्ध हो सकता था। उसका अन्तिम फल चाहे जो होता, वर्तमान समय में मेरे स्वार्थ की बहुत कुछ सिद्धी हो जाती। परन्तु दुनियां इसे विश्वासघात तथा भयंकर कृतघ्नता के सिवा और कुछ नहीं कह सकती थी। ऐसा होने पर स्वार्थ का नग्ननृत्य स्पष्टतः दिखलायी देने लगता और किसी कवि के ये अमर शब्द बार बार मुझे धिक्कारते हुए नजर आते :—

दोस्ती, और किसी गरज़ के लिये,
यह तिजारत है, दोस्ती ही नहीं।

बाबू मेहरचन्द! आप की दया से, आप के प्रेम की कृपा से, इन

कमजोरियों के लिये मैं यथेष्ट शक्तिशाली हूं। कहीं भी और किसी भी अवस्था में आप का शुभ चिन्तक बन कर ही रहूंगा। किसी कवि के शब्दों में—"कहीं भी रहूंगा, रावरे ही कहाऊंगा।" ईश्वर वह दिन फिर शीघ्र लावे जब आपके चरणों का फिर दर्शन करने का सुख मिल सके।

पत्र लम्बा होता जा रहा है। अब कुछ अधिक लिखने की मैं आवश्यकता नहीं समझता। आप स्वयं बुद्धिमान हैं। परिस्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर अपने कर्तव्य का निर्णय कीजिये। रामकुमार प्रसाद बहुत ही खतरनाक आदमी है। आप जैसे बुद्धिमान आदमी का उसकी बातों के चक्कर में आ जाना बड़े ही आश्चर्य की बात है। हड़ताल के कार्य में सहयोग देने से बहुत बड़ी हानि की सम्भावना है। आर्थिक हानि के सिवा आप को नैतिक हानि भी अवश्य उठानी पड़ेगी। पीछे लोगों को सभी बातों का पता अवश्य लगेगा। उस दशा में आप के प्रभाव को बहुत बड़ा धक्का लगेगा। लोग आप को अदूरदर्शी समझने लगेंगे।

सभी बुराइयों की दवा होती है। इसकी भी दवा हो सकती है। अपने दो-चार सम्बन्धियों को इकट्ठा कर आप किसी प्रकार इस कलह का अन्त कर कर लीजिये। आपस की लड़ाई के कारण शत्रु से मिलना बुद्धिमानी का कार्य नहीं कहा जा सकता है। भगवान अब भी आप के क्रोध को शान्त करें।

मुझे अधिक दुख बहन लक्ष्मी के लिये होता है। आप जानते हैं कि वह आप की बदनामी सुनकर कितना दुखित होती है। आपकी बदनामी सुन कर उसका भी कलेजा किस प्रकार टुकड़े टुकड़े हो जाता है इस का प्रत्यक्ष ज्ञान मुझे है, वह बराबर मुझे से आपको समझाने बुझाने का

आग्रह करती थी। आपके विरोध में मुझे उसका पूरा सहयोग प्राप्त था। यदि बहन लक्ष्मी के प्रति आपका कुछ भी प्रेम हो तो उसके नाते आप इस कलह को किसी प्रकार शान्त कर लीजिये।

अपने सम्बन्ध में मैं क्या लिखूं ? आप के बिछोह का बड़ा दुख है। भगवान ने परिस्थिति के लिये ही इस बिछोह का प्रसंग उपस्थिति किया है। उपयुक्त परिस्थिति उत्पन्न होने पर मैं शीघ्र आप से मिलूंगा।

आप का—

रत्नेश्वर

सतरहवाँ अध्याय

बाबू मलूकचन्द भी वर्तमान वायुमण्डल से अपरिचित नहीं थे। वे अपने भतीजे की प्रवृति से परिचित हो गये थे। वे जानते थे कि मेहरचन्द इस समय उनके खून का प्यासा हो रहा है। किसी प्रकार उन्हें नीचे गिराना ही उसका एक मात्र उद्देश्य है। मील सम्बन्धी बातों से भी वे परिचित थे। रामकुमार प्रसाद से मिल कर मेहरचन्द मील में हड़ताल कराना चाहते हैं, इस बात का भी उन्हें पता लग चुका था। पर कोई प्रमाण नहीं रहने के कारण इस बात की प्रत्यक्ष चर्चा करने का उन्हें साहस नहीं होता था।

उनकी चुप्पी का एक कारण और था। इधर कई मासों से उन्हें भयंकर घाटा लगा था। लाखों रुपये की हानि उठानी पड़ी थी। इस कारण

उनका मस्तक स्वतः नीचा था। बाबू मेहरचन्द इस बात से अपने को अधिक से अधिक लाभान्वित करने की चेष्टा करते थे।

घाटे के कारण बाबू मल्लूकचन्द के कलेजे पर भयंकर आघात लगा था। इधर मील में हड़ताल होने की चर्चा जोरों से चल पड़ी थी। इस कारण वे और भी विचलित हो चले थे। पहले उन्होंने चाहा कि रामकुमार प्रसाद को कुछ ले दे कर मामला तय कर लें। परन्तु बाबू मेहरचन्द के यहां उनका आना जाना देख कर उन्हें वैसा करने का साहस नहीं हुआ।

इधर पं० रामदयाल शर्मा भी मजदूर आन्दोलन का विशेष अध्ययन करने लगे थे। सच्ची भावना को लेकर वे मजदूरों की सेवा करना चाहते थे। फतेहचन्द काटन मिल्स की हड़ताल की चर्चा वे भी सुन चुके थे। उस दिन समाचार पत्रों में उन्होंने बाबू रामकुमार प्रसाद का व्याख्यान आदि भी पढ़ा था। वे इस पक्ष में थे कि अधिकार रक्षा के लिये हड़ताल आवश्यक है। परन्तु वास्तविकता का पता लगाये बिना बाबू रामकुमार प्रसाद की वर्तमान नीति का समर्थन नहीं कर सकते थे। उन के समम्बन्ध में वे पहले ही बहुत कुछ सुन चुके थे। रामपलट के मुंह से भी उन्होंने उनकी कठोरता की कहानी सुनी थी। इस कारण उनके प्रति उनका भाव अच्छा नहीं था।

एक दिन साधारण आदमी के रूप में उन्होंने मजदूरों की अवस्था की जानकारी प्राप्त करने के लिये कई मोलों का चक्कर लगाया। उस सिलसिले में वे फतेहचन्द काटन मिल्स में भी गये। भिन्न भिन्न मिलों के मजदूरों की दशा पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर उन्होंने फतेहचन्द काटन मिल्स के मजदूरों को किसी विशेष असुविधा जनक अवस्था में नहीं पाया।

मजदूरों की दशा देख कर उनका हृदय दुखित अवश्य हुआ, उन्हें यह बात जरूर स्वीकार करनी पड़ी कि मजदूरों के साथ पशुतुल्य वर्ताव किया जाता है। उनकी अवस्था सुधारने की अत्यन्त आवश्यकता है। लेकिन वे यह न समझ सके कि अन्य मीलों को छोड़ कर केवल फतेहचन्द काटन मिल्स में ही हड़ताल का आयोजन क्यों किया जा रहा है?

वर्तमान परिस्थिति में फतेहचन्द काटन मिल्स की अवस्था का विशेष रूप से अध्यन करना वे आवश्यक समझते थे। इस कारण उस मील के मजदूरों के ठहरने के स्थान में उन्होंने ३—४ घंटे का समय लगाया। साधारण पहिरावे में रहने के कारण वे मजदूरों से खूब हिल मिल कर बातें करते थे। कई स्थानों पर मजदूरों से उन्होंने दिल खोल कर बातें की। उन्हें विशेष दिलचस्पी के साथ बातें करते देख कुछ मजदूरों को कौतूहल भी हुआ। एक ने उनसे पूछा—"बाबू! क्या आप किसी नौकरी की खोज में घूमते हैं?"

कुछ सोचकर रामदयाल शर्मा ने उत्तर दिया—"हाँ, उद्देश्य तो कुछ ऐसा ही है।"

मजदूर—"क्या इस मील में कोई काम करना चाहते हैं?"

रामदयाल शर्मा—"हाँ।"

मुस्कराकर मजदूर ने उत्तर दिया—"हम लोग लगा हुआ काम छोड़ना चाहते हैं और आप काम खोजने के लिये यहां आये हैं, यह बड़े ही आश्चर्य की बात है।"

रामदयाल शर्मा ने अनजान की तरह उत्तर दिया—"तुम लोग काम क्यों छोड़ना चाहते हो?"

मजदूर ने गर्व के साथ कहा—"बहुत शीघ्र ही मील में हड़ताल होगी।"

रामदयाल शर्मा—"हड़ताल होने का कारण क्या है?"

मजदूर—"इसका पूरा पूरा पता हम लोगों को नहीं है। लेकिन हम लोगों की भलाई के लिये ही हड़ताल होगी। हड़ताल के बाद हम लोगों की मजदूरी बढ़ेगी और काम करने का समय कम कर दिया जायगा।"

रामदयाल शर्मा—"लेकिन बिना वास्तविक कारण जाने तुम लोग हड़ताल करने के लिये क्यों तैयार हो गये हो?"

मजदूर—"हमारे नेता की ऐसी आज्ञा है।"

रामदयाल शर्मा—"तुम्हारे नेता कौन हैं?"

आश्चर्य का भाव दिखलाते हुए मजदूर ने कहा—"क्या आपको इतना भी नहीं मालूम है?"

रामदयाल शर्मा—"मैं तो नया आदमी हूँ। मुझे क्या पता इन बातों का।"

मजदूर—"सुप्रसिद्ध देशभक्त बाबू रामकुमार प्रसाद हम लोगों के नेता हैं। उन्होंने हम लोगों की भलाई के लिये अपनी नौकरी पर भी लात मार दी।"

रामदयाल शर्मा—"तब तो वे बड़े ही त्यागी आदमी हैं।"

मजदूर—"इसमें क्या सन्देह है?"

रामदयाल शर्मा—"यदि हड़ताल में तुम लोग सफल नहीं हुए तो फिर तुम्हारी कैसी अवस्था होगी?"

मजदूर—"वह लम्बी कहानी है बाबू! उसे सुन कर आप क्या करेंगे?"

रामदयाल शर्मा—"मैं भी तो इस मील में काम करने वाला हूं। यदि पहले से ही जानकार रहूंगा तो ठीक होगा।"

मजदूर—"हड़ताल फेल होने पर हम लोगों की हालत बड़ी खराब हो जाती है। कोई किसी को पूछता ही नहीं।"

रामदयाल शर्मा—"फिर बिना विशेष कारण के तुम लोग हड़ताल करने के लिये क्यों तैयार हो गये हो? क्या अन्य मील के मजदूरों से तुम लोगों की हालत विशेष खराब है?"

मजदूर—"सभी मीलों के मजदूरों का भाग्य ब्रह्मा ने एक ही लकड़ी से लिख दिया है। उनकी हालत समान ही है।"

रामदयाल शर्मा—"फिर केवल इस मील के मजदूर क्यों हड़ताल करना चाहते हैं?"

मजदूर—"क्या किया जाय? नेता की ऐसी ही आज्ञा है?"

रामदयाल शर्मा—"क्या सभी मजदूर हड़ताल के पक्ष में हैं?"

कुछ रुक कर मजदूर ने कहा—"हड़ताल के पक्ष में तो बहुत कम आदमी हैं। लेकिन दबाव में पड़ कर सब लोगों को हाँ में हाँ मिलाना पड़ता है।"

रामदयाल शर्मा—"यदि मील के मालिक तुम लोगों को कुछ सुविधा देने के लिये तैयार हो जांय तो क्या हड़ताल रुक सकती है?"

मजदूर—"मालिकों की ओर से इस बात की चर्चा चली थी। मैनेजर साहब कई मांगें मंजूर करने पर तैयार थे। लेकिन हमारे नेता बाबू रामकुमार प्रसाद ने कहा कि हड़ताल के पहले किसी बात का फैसला नहीं हो सकता है?"

रामदयाल शर्मा—"उन्होंने ऐसा क्यों कहा?"

मजदूर—"उनके कहने का मतलब यह था कि हड़ताल के बाद हम

लोगों को बहुत ज्यादा सुभीता मिल सकता है, फिर केवल थोड़ी सुविधा लेकर हम लोग अधिक सुविधा का रास्ता क्यों बन्द कर दें ?"

रामदयाल शर्मा—"तो हड़ताल अवश्य होगी।"

मजदूर—"इसमें क्या सन्देह है। शायद ५-७ दिनों में ही हड़ताल आरम्भ हो जाय। आप व्यर्थ ही नौकरी के लिये दौड़ धूप लगाकर समय नष्ट न करें।"

रामदयाल शर्मा—"हाँ, जब सभी आदमी काम छोड़ना चाहते हैं, तो मैं ही क्यों काम करने के लिये तैयार होऊंगा। मुझे हड़ताल की कोई खबर नहीं थी, इस कारण काम के लिये चक्कर लगाया करता था।"

मस्ती के साथ मजदूर ने कहा—"अब तो पता लग गया। किसी दूसरी जगह काम का सिलसिला लगाइये। यहां परेशान होना बेकार है।"

रामदयाल शर्मा—"हाँ, ऐसा ही करूंगा।" इतना कहते हुए वे आगे बढ़ गये।

उपरोक्त बातों से उन्हें फतेहचन्द काटन मिल्स की आगामी हड़ताल के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हो गयी। उन्हें पहले से ही सन्देह था कि रामकुमार प्रसाद किसी स्वार्थ की भावना से प्रेरित होकर इसका आयोजन कर रहे हैं। अब उनका सन्देह विश्वास के रूप में परिणत होने लगा। हृदय से मजदूरों का सच्चा हितैषी होते हुए भी वे किसी तरह हड़ताल का समर्थन न कर सके। उन्हें विश्वास होने लगा कि अपने स्वार्थ के लिये रामकुमार प्रसाद व्यर्थ ही हजारों मजदूरों तथा मील मालिकों को कष्ट में डालेंगे।

अब वे इस भयंकर परिस्थिति से सब लोगों को बचाने का मार्ग सोचने

लगे। सबसे पहले उन्होंने बाबू मलूकचन्द से मिलना आवश्यक समझा। उन्होंने सोचा कि उनसे मिलने पर शायद रक्षा का कोई मार्ग निकल आवे। अधिक घनिष्टता न होने पर भी वे उनसे थोड़ा बहुत परिचित थे।

उसी दिन सन्ध्या समय वे बाबू मलूकचन्द के यहां जा पहुंचे। बड़े सत्कार के साथ उन्होंने उनका स्वागत किया। थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें होने के पश्चात मील की चर्चा आरम्भ हुई। उसकी बात छिड़ते ही दुख के साथ बाबू मलूकचन्द ने कहा—"क्या कहूं पण्डित जी! इन दिनों हमारा भाग्य ही खराब है। भाग्यशाली तो भाई साहब थे। अपने पुण्य प्रताप से बहुत कुछ पैदा कर चले गये। हम लोगों के हिस्से में तो उसे केवल गंवाना ही है।"

रामदयाल शर्मा—"हाँ, आपके घाटे की बात मैंने सुनी है। इसके साथ ही मील में भी तो हड़ताल कराने की बड़ी चेष्टा हो रही है।"

सिर पर हाथ देते हुए बाबू मलूकचन्द ने कहा—"घर फूटे गंवार लूटे, वाला मसला इन दिनों हमारे ऊपर ही सवार है। हड़ताल कराने की किस की ताकत थी! लेकिन क्या किया जाय!"

कुछ आश्चर्य के साथ रामदयाल शर्मा ने उत्तर दिया—"घर की फूट से हड़ताल का क्या सम्बन्ध है?"

बाबू मलूकचन्द—"सम्बन्ध तो बहुत बड़ा है। मेहरचन्द की कृपा से ही तो यह सब काण्ड हो रहा है।"

रामदयाल शर्मा—"यह आप क्या कह रहे हैं?"

बाबू मलूकचन्द—"मैं बिलकुल ठीक कह रहा हूं। रामकुमार प्रसाद नामक व्यक्ति से मिल कर वह मुझे मूर्ख साबित करने के लिये हड़ताल की योजना कर रहा है।"

रामदयाल शर्मा—"क्या वे ऐसे नादान हैं? वे तो बड़े बुद्धिमान आदमी मालूम पड़ते हैं। अखबारों में मैं उनके कई लेख पढ़ चुका हूं। उनके लेखों से बुद्धिमत्ता स्पष्ट रूप से झलकती थी।"

बाबू मलूकचन्द—"लेख छपने से क्या किसी को बुद्धिमानी की सार्टि-फिकेट मिल जाती है? बुद्धिमानी की परीक्षा तो कोई काम सम्हालने में होती है। किसी को तारीफ या शिकायत में कलम चला देनी आसान काम है। कठिनाई का सामना तो अपने को शिकायत से बचा कर तारीफ के योग्य बनाने में करना पड़ता है।"

रामदयाल शर्मा—"आपका कहना बहुत अंशों में ठीक है। लेकिन आप लिखने पढ़ने की चेष्टा करने वाले की योग्यता अस्वीकार नहीं कर सकते हैं। कितने ही अयोग्य व्यक्ति भी लिखते लिखते योग्य बनते देखे गये हैं। लेख आदि लिखने से मनुष्य स्वभावतः ही एक प्रकारके उत्तरदायित्व के बोझ से दब जाता है। यह उत्तरदायित्व उसे उन्नति की ओर अग्रसर होने के लिये बाध्य करता है। खैर, यह एक विस्तृत प्रश्न है। इस समय इस सम्बन्ध में मैं कुछ अधिक कहना सुनना नहीं चाहता। मुझे तो यह बात सुन कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि बाबू मेहरचन्द भी हड़ताल के पक्ष में हैं।"

बाबू मलूकचन्द—"आश्चर्य की बात तो है ही।"

रामदयाल शर्मा—"हड़ताल से उनकी भी हानि होगी, क्या वे इस बात को नहीं समझते?"

बाबू मलूकचन्द—"समझता है क्यों नहीं? लेकिन यहां तो मुझे मूर्ख बनाना उसके लिये सबसे अधिक आवश्यक है।"

रामदयाल शर्मा—"यदि यह आपका भ्रम न होकर वस्तुतः ठीक हो तो

बड़े ही दुख की बात है। भगवान करे कि यह भ्रम प्रमाणित हो। खैर, इस समय विशेष कर मैं आप से हड़ताल के सम्बन्ध में ही बातें करने आया हूँ।"

कुछ संदिग्ध भाव से बाबू मलूकचन्द ने कहा—"बोलिये, क्या आज्ञा है ?"

रामदयाल शर्मा—"मुझे भी विश्वास हो गया है कि रामकुमार प्रसाद स्वार्थवश यह हड़ताल कराना चाहता है। इन दिनों मजदूर आन्दोलन से मेरी भी कुछ विशेष दिलचस्पी हो गयी है। इस कारण मैंने इस सम्बन्ध में विशेष अनुसन्धान किया है।"

बाबू मलूकचन्द—"रामकुमा प्रसाद की स्वार्थ परायणता में क्या सन्देह हो सकता है ? हमारी मील में पूरी शान्ति है और वहां के मजदूर पूर्ण सुखी हैं।"

मुस्कराते हुए रामदयाल शर्मा ने कहा—"आप ऐसा तो नहीं कह सकते हैं। आपके मजदूरों की दुरावस्था मैं अपनी आंखों देख आया हूं। फिर भी इस आन्दोलन के मूल में व्यक्तिगत स्वार्थ है। इस कारण मैं इसका जोरदार विरोधी हूं और मैं चाहता हूं कि किसी प्रकार हड़ताल न हो।"

कृतज्ञता का भाव दिखलाते हुए बाबू मलूकचन्द ने कहा—"बड़ी दया होगी आपकी, यदि हड़ताल को आप किसी तरह रोक सकें। हड़ताल होने पर मेरी स्थिति और भी खराब हो जायगी।"

रामदयाल शर्मा—"यदि हड़ताल के पहले ही कोई समझौता हो जाय तो क्या आप मजदूरों को कुछ सुविधा देने के लिये तैयार होंगे ?"

बाबू मलूकचन्द—आप जैसे दो विचारशील आदमी जो कह देंगे, उसे

मानने के लिये मैं हर समय तैयार हूं। हड़ताल से मजदूरों को विशेष लाभ नहीं हो सकता है। यह जरूरी है कि कुछ दिनों तक काम बन्द रहने के कारण मुझे हानि उठानी पड़ेगी। लेकिन इससे मजदूरों को कोई लाभ नहीं हो सकता है। मजदूरों की कोई कमी नहीं है। एक के बदले दस बहाल किये जा सकते हैं।"

रामदयाल शर्मा—"इन बातों में कोई तथ्य नहीं है। इस तरह की बातें ही पूंजीपतियों और मजदूरों में वैमनस्य पैदा करती है। ऐसी बातें आप तभी तक कहने का साहस कर सकते हैं, जब तक मजदूर असंगठित हैं। उनकी संगठित शक्ति के सामने किसी न किसी दिन अन्याय और अत्याचार का अवश्य ही नतमस्तक होना पड़ेगा।"

बाबू मलूकचन्द—"शायद आप मेरा अभिप्राय नहीं समझ सके। मेरे कथन का कोई बुरा अभिप्राय नहीं था। मैं तो केवल मजदूरों के अन्याय का जिक्र करना चाहता था।"

रामदयाल शर्मा—"मजदूरों के अन्याय का जिक्र कर आप किसी तरह अपने को अछूता नहीं कह सकते। खैर, इस सम्बन्ध में मैं कोई विवाद करना नहीं चाहता हूँ। इस समय तो मैं केवल यह जानने आया हूं कि हड़ताल को रोक कर यदि किसी सम्मानपूर्ण समझौते कि चेष्टा की जाय तो उससे आप सहमत होंगे या नहीं।"

बाबू मलूकचन्द—"इस सम्बन्धमें तो मैं पहले ही स्वीकृति दे चुका हूं।"

रामदयाल शर्मा—"इसके लिये आपको धन्यवाद है।"

थोड़ी देर तक हड़ताल के सम्बन्ध में और बातें कर पं० रामदयाल शर्मा प्रसन्नतापूर्वक अपने घर लौट गये।

अठारहवां अध्याय

मील के मजदूरों के बीच सन्यासी जी की काफी धूम मच गयी। संन्यासी महोदय के कार्य भी बड़े आश्चर्यपूर्ण के थे। अभी ५—७ दिन पहले तो वे नीम के वृक्ष के नीचे आये थे। इतने दिनों में ही इन्होंने कई करामात कर दिखाये। रोग दूर कर देना तो इनके लिये बांये हाथ का खेल था। बड़े बड़े असाध्य रोगियों को इन्होंने सैकड़ों आदमी के सामने अच्छा किया था। इनके पदार्पण के ठीक तीसरे ही दिन एक अन्धा इनके सामने आया। साथ में उसका बुड्ढा बाप तथा छोटा भाई भी था। पहले तो संन्यासी महाराज उसकी बातें सुनना ही नहीं चाहते थे। बड़ी आरजू के बाद वे प्रसन्न होकर बोले—"तुम किस उद्देश्य से यहां आये हो?"

बुड्ढा बाप बोला—"कई वर्ष हुए एक डाइन की दुष्टता के कारण मेरे लड़के की आंख मारी गयी। हम लोग मेहनत मजदूरी के द्वारा कमाने खाने वाले आदमी ठहरे। बड़े कष्ट में पड़ गया हूं। इस विपत्ति से हम लोगों की जान बचाइये।"

सन्यासी—"क्या तुम आंख की दवा कराना चाहते हो?"

बुड्ढा—"जी हां!"

मुस्कुराकर संन्यासी बोले—मैं संन्यासी हूं, डाक्टर नहीं।"

बुड्ढा—"डाक्टर भला क्या कर सकता है? आपके आशीर्वाद से ही हमारा कष्ट दूर हो सकता है।"

संन्यासी—"तुम्हें यह कैसे पता लगा कि मैं बीमारी की दवा भी करता हूं?"

बुड्ढा—"कल आपने कई लोगों को अच्छा किया है। उनके मुंह से उनकी बड़ाई सुनकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूं।"

संन्यासी—"मैं गुरू महाराज की आज्ञा से बीमारियों को दूर अवश्य करता हूं; लेकिन ईश्वर के पक्के भक्त ही उस आज्ञा से लाभ उठाने पाते हैं?"

बुड्ढा—"महाराज हम लोग साधु सेवक आदमी हैं। ईश्वर की भक्ति के सिवा हमारे पास और है ही क्या?"

संन्यासी—"तुम्हारी बातों की सत्यता का प्रमाण?"

बुड्ढा—"मैं कौन सा प्रमाण दूं? जिस तरह चाहें, आप परीक्षा ले लें।"

सन्यासी—"अच्छा तुम्हारे लिये मैं एक काम कर सकता हूं।"

बुड्ढा—"बोलिये वह कौन सी कृपा है?"

संन्यासी—"यदि तुम्हें स्वीकार हो तो इसका रोग मैं तुम्हारे छोटे लड़के पर ला सकता हूं। बड़े लड़के की आंख तो उसी समय अच्छी हो जायगी, लेकिन उसका छोटा भाई अन्धा हो जायगा।"

दुखपूर्ण आश्चर्य के साथ बुड्ढे ने कहा—"महाराज! आपकी कृपा से तो सभी कुछ हो सकता है, लेकिन एक की बीमारी दूसरे पर लादने से फिर लाभ क्या होगा?"

संन्यासी—"यह बात तो तुम सोचो।"

कातर भाव से बुड्ढे ने कहा—"महाराज! आप मेरी रक्षा कीजिये। बड़े लड़के के बदले छोटे को अन्धा बनाने से लाभ क्या होगा?"

संन्यासी—"तर्क और विवाद करने की कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे जो कुछ कहना था मैंने कह दिया।"

बुड्ढा—"ऐसा करने से क्या छोटा लड़का जन्म भर अन्धा रहेगा?"

संन्यासी जी ने कुछ सोच कर कहा—"मेरे बतलाये हुए मँत्र को दो वर्ष तक भगवान पर पूरी श्रद्धा और भक्ति रख कर जपने से उसका अन्धापन भी जाता रहेगा।"

प्रसन्नता का भाव दिखलाता हुआ वृद्ध बोला—"मैंने तो अपने को आप की मर्जी पर छोड़ दिया। अब आप को जैसी आज्ञा हो, उसे मैं मानने के लिये तैयार हूं।

संन्यासी—"प्रयोग के द्वारा क्या बड़े लड़के के बदले मैं तुम्हारे छोटे लड़के को अन्धा बना दूं?"

बुड्ढा—जब दो वर्ष के बाद उसका भी रोग दूर हो जायगा, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

संन्यासी—"लेकिन जरा उस लड़के से भी पूछ लो! यदि वह अपने भाई का रोग अपने ऊपर लेना नहीं चाहे तो मैं अन्धा बना कर उस पर अन्याय नहीं कर सकता हूं।"

यह बात सुनकर वह पन्द्रह वर्षीय लड़का बोला—"मुझे भाई के लिये दुख सहने में कोई आपत्ति नहीं है।"

इतने में अन्धा बोल बठा—"नहीं नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है। अपने स्वार्थ के लिये मैं अपने छोटे भाई को अन्धा नहीं बना सकता हूं।"

लड़के ने अपने बड़े भाई की बातों का खंडन करते हुए कहा—"इसमें आप क्यों आपत्ति कर रहे हैं? मुझे तो केवल दो वर्ष तक ही कष्ट सहना पड़ेगा। उसके बाद तो मंत्र प्रयोग के द्वारा मेरी भी आँख ठीक हो जायगी। क्या आपके लिये मैं दो वर्ष तक कष्ट नहीं सह सकता हूं?"

बेचारा वृद्ध बड़े असमंजसमें पड़ा। एक लड़के की अन्धता दूर कर

दूसरे को अन्धा बनाने का सवाल था। थोड़ी देर तक सोच कर उसने बड़े लड़के से कहा—"इसमें आपत्ति करने की तो कोई बात नहीं है। जन्म भर के लिये तुम्हें अन्धता से छुटकारा मिल जाता है। इसके बदले उसे केवल दो वर्ष तक अन्धा रहना पड़ेगा। स्वामीजी की कृपा से तो उसकी आंखें फिर ठीक हो हो जायगी।"

अन्धे ने उत्तर दिया—"आंख तो उस अवस्था में ठीक होगी, जब वह भगवान पर पूरी भक्ति के साथ मंत्र जाप करेगा। अब प्रश्न यह उठता है कि वैसा वह कर सकेगा या नहीं।"

आवेश के साथ लड़के ने उत्तर दिया—"क्या मैं नास्तिक हूं? भक्ति-पूर्वक मैं मंत्र जाप क्यों नहीं कर सकता हूं? आप किसी बात की चिन्ता न करें। मैं स्वामीजी की कृपा से अवश्य अच्छा हो जाऊंगा!'

अन्धे ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर सन्नाटा रहने के बाद बृद्धने संन्यासी महाराजसे कहा—"हमलोग आप की आज्ञा मानने में एकमत हैं। किसी को भी कोई आपत्ति नहीं है।"

प्रसन्नतापूर्वक सन्यासी महाराज ने कहा—"मैं इस बातको जानकर बहुत ही प्रसन्न हुआ कि तुम लोग भगवान में पूर्ण भक्ति रखनेवाले आस्तिक हो। एक के बदले दूसरे को अन्धा बताने की बात कह कर मैं तुम लोगों की परीक्षा ले रहा था। छोटे भाई के अन्धा बनाने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे बड़े लड़के की आंख ठीक कर देता हूं।"

सैकड़ों मजदूर स्वामीजी को घेर कर बड़ी उत्सुकता के साथ उनकी बातें सुन रहे थे। उनकी यह उदारता देख कर उन लोगों ने प्रसन्नतापूर्वक जयजयकार किया। जय-ध्वनि बन्द होने पर स्वामीजी फिर बोले—"बिना

परीक्षा लिये मैं कुछ नहीं करता, हमारे गुरू की आज्ञा है कि परीक्षा लेकर ही योग्य आदमियों को अपने से लाभान्वित करो। अयोग्यों को लाभ पहुंचाना संसार में नास्तिकता का प्रचार करना है।"

सभी मजदूर प्रसन्नतापूर्वक बोल उठे—"इसमें क्या सन्देह है महाराज! आप लोगों के पुण्य प्रताप से ही तो यह ससार किसी प्रकार कायम है।"

संन्यासी महाराज ने सभी लोगों को एकदम शान्त हो जाने के लिये कहा और थोड़ी देर तक वहां एकदम निःशब्दता रही। निःशब्दता हो जाने पर वे मंत्र जाप करने लगे। लगभग दस मिनटतक मंत्र जाप करने के बाद उन्होंने अन्धे को अपने पास बुलाया। दो एक मंत्रों का प्रयोग कर उन्होंने उसकी आंख मल दी। साथ ही झोली से कुछ भस्म निकाल कर उसकी आंखोंपर लगाया। भस्म लगाने के बाद उन्होंने पट्टी बांध दी। लगभग दस मिनट तक पट्टी बँधी रही। पट्टी बाँधने के बाद उन्होंने वृद्ध से कहा—"अब तुम्हारे लड़के की आंख एकदम ठीक हो गयी। पट्टी खुलने पर वह सभी कुछ देखने लगेगा।"

कृतज्ञतापूर्वक वृद्धने कहा—"सब आप की दया है महाराज!"

सचमुच सन्यासीजी की बातें ठीक निकली। अपने शंख को जोर से फूंकते हुए उन्होंने उसकी आंख की पट्टी खोल दी। पट्टी खुलने पर उस अन्धे को सभी कुछ दिखलायी देने लगा। सन्यासीजी के इस चमत्कार को देख कर लोगों के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा।

लोगों के शान्त होने पर वृद्ध ने अपने बड़े पुत्र को दस रुपये दे स्वामी जी के चरणों पर रुपया चढ़ा कर प्रणाम करने के लिये कहा। उसने वैसा ही किया। रुपये देखते ही तो स्वामीजी के बदन में आग लग गयी।

उन्होंने क्रोधित होते हुए कहा रुपया देकर तुम मेरी सिद्धि कम क्यों करना चाहते हो? मैं क्या रुपये का गुलाम हूं। मैं तुम लोगों के यहां से मधुकरी मांग कर अपना पेट भरने वाला संन्यासी हूं, लोगों की बीमारी दूर कर उनसे रुपये लेने वाला डाक्टर नहीं। रुपया देकर तुमने मेरा बड़ा अपमान किया है। तबीयत होती है कि अभी श्राप देकर तुम्हें फिर अन्धा बना दूं।

इतने में वृद्ध ने उनके पैर पर गिर कर कहा—"माफ कीजिये! अनजान में यह कसूर हो गया। हम लोग तो आपकी कृपा के द्वारा अपनी जिन्दगी सार्थक कर सकते हैं। यदि क्रोधित होकर आप श्राप देंगे, तब तो हम लोग कहीं के भी नहीं रहेंगे। इस अपराध को क्षमा करने की कृपा कीजिये। हम लोग मूर्ख आदमी ठहरे।"

क्रोध को कम करते हुए संन्यासी महाराज ने कहा—"खैर, इस अपराध को मैं माफ करता हूं। फिर कभी रुपया दिखलाकर किसी साधु संन्यासी का अपमान करने की चेष्टा नहीं करना।"

कान पर हाथ रखते हुए वृद्ध ने कहा—"नहीं महाराज! ऐसा अपराध अब फिर कभी नहीं होगा।"

संन्यासी—"अच्छा, अब तुम अपने घर लौट जाओ, इस समय मैं एकान्त में मन्त्र जाप करूंगा।" उनकी आज्ञा पाकर वृद्ध अपने दोनों पुत्रों के साथ लौट गया। उन लोगों के लौट जाने पर अन्य लोग भी लौटने लगे। इतने में एक व्यक्ति बोल उठा—"महाराज! हम लोग आगामी हड़ताल के सम्बन्ध में आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहते हैं।"

गम्भीरतापूर्वक स्वामीजी ने कहा—"इस समय मुझे जाप करना है। मैं

किसी प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता हूं। संध्या समय मुझसे प्रश्न पूछ सकते हो।" उनकी यह आज्ञा सुन कर सभी मजदूर शान्तिपूर्वक लौट आये।"

लौट कर उन लोगों ने अपने साथियों से स्वामीजीके आश्चर्यपूर्ण वृतान्त की चर्चा की। अन्धे की कहानी सुन कर तो वे दंग रह गये। इसके साथ ही यह जानकर वे बड़े प्रसन्न हुए कि ऐसे सिद्ध सन्यासी संध्या समय आगामी हड़ताल के सम्बन्ध में प्रश्नों का उत्तर देंगे। बड़ी उत्सुकता के साथ उन लोगों ने दिन व्यतीत किया। सन्ध्या होते ही लगभग पांच सौ मजदूरों की जमात ने स्वामीजी को घेर लिया। उस समय वे ध्यान कर रहे थे। लोगों के कोलाहल से उनका ध्यान भग हुआ। सब लोगों ने बड़ी भक्ति के साथ उन्हें प्रणाम किया। लोगों को आशीर्वाद देते हुए वे बोले—"तुम लोग कौन सा प्रश्न पूछना चाहते हो? संक्षेप रूप से दो-एक सवाल पूछ लो। विस्तारपूर्वक पीछे बतलाऊँगा। अभी मुझे मन्त्र जाप करना है।"

उनकी बातें सुन कर एक मजदूर बोला—"महाराज हम लोगों की जो हड़ताल होने वाली है, उसमें हमारी जीत होगी या नहीं?"

कुछ सोचकर स्वामीजी बोले—"इसमें तुम लोगों की हार होगी।"

यह उत्तर सुनकर तो मजदूरों को काठ मार गया। सभी लोग सन्न रह गये। एक ने साहसपूर्वक फिर पूछा—"हम लोगों की हार का क्या कारण होगा?"

संन्यासी—"तुम्हारे नेता की विश्वासघातकता के कारण तुम लोगों की पराजय होगी।"

मजदूर हड़ताल के सम्बन्ध में और भी कई प्रश्न पूछना चाहते थे। लेकिन उस समय उत्तर देना स्वामीजी ने स्वीकार नहीं किया। किसी दूसरे दिन अधिक समय देने का वचन देकर उन्होंने उन लोगों को विदा किया। मजदूरों के चले जाने पर स्वामीजी फिर ध्यान में मग्न हो गये।

उन्नीसवाँ अध्याय

बदनामी सहना कोई नहीं चाहता है। बाबू मेहरचन्द को भी बदनामी सहने का कोई हौसला न था। धीरे धीरे कुछ लोग इस बात को जान गये कि हड़ताल के आन्दोलन से बाबू मेहरचन्द का सम्बन्ध है। इससे उन्हें अपने शुभचिन्तकों की मण्डली में झेंपना पड़ता था। इसके साथ ही उनकी स्त्री का भी पूरा आग्रह था कि वे इन झमेलों में न पड़ें। इस मामले को लेकर ही बाबू रत्नेश्वर प्रसाद उलग हुए थे। उनके प्रति इनका स्वाभाविक प्रेम था। इस कारण उनके वियोग का इन्हें बहुत अधिक दुख था। उनके पत्र की बातें बारबार इन्हें विचलित कर देती थी। वे उस पत्र को कई बार पढ़ चुके थे और अन्त में उनकी आत्मा को यह स्वीकार करना पड़ा था कि पत्र के एक-एक शब्द उचित तथा शुभेच्छापूर्ण है।

इन बातों पर विचार कर वे रामकुमार प्रसाद से अलग होना चाहते थे। उनसे अधिक बातें करने के बाद उन्हें उनकी गहराई का पता लग गया था। वे समझ गये थे कि उन में कितनी स्वार्थपारायणता भरी हुई है। परन्तु बहुत आगे बढ़ कर तुरत पीछे हटने में भी बड़ी कठिनाई होती है। कभी-कभी इच्छा करने पर भी मनुष्य पीछे हटने में अपने को असमर्थ पाता है। यही बात बाबू मेहरचन्द के सम्बन्ध में भी हुई। बहुत से मोल-जोल के पश्चात उन्होंने हड़ताल के लिये रामकुमार प्रसाद को पांच हजार रुपया देनेका निश्चय किया था। बात पक्की हो जाने पर उन्होंने एक हजार रुपया दिया भी था। शेष रुपया हड़ताल के आरम्भ के समय देने की

बात थी। पर रामकुमार प्रसाद ने अभी से उसके लिये तकाजा जारी कर रखा था।

वास्तविक स्थिति का उन्हें ज्ञान था। उन्हें हड़ताल की पूरी सफलता में स्वयं सन्देह था। ऐसी दशा में लेने देने का कार्य पहले ही कर लेना उन्होंने ठीक समझा। मि० रावर्ट के यहां से भी वे दो हजार रुपये ले आये। सब मिला कर उनसे पन्द्रह हजार लेने की बात थी। दो हजार तो वे पहले ही दे चुके थे। पांच हजार हड़ताल के प्रारम्भ में देने की बात थी और शेष आठ हजार रुपया हड़ताल के सफल होने पर वे देते।

हड़ताल के लिये आन्दोलन करने में भी खर्चे की आवश्यकता पड़ती थी। दस-पन्द्रह रुपये रोज का खर्च था। हैंडबिल आदि काफी संख्या में छाप कर बांटे जाते थे। मोटर गस्तो में भी कुछ खर्च होता ही था। इस प्रकार बाबू रामकुमार प्रसाद हड़ताल के प्रश्न को लेकर बड़े ही व्यस्त हो गये। अब उन्होंने निश्चय कर लिया कि बाबू मेहरचन्द से सभी रुपया ले लेना ठीक है। उन्हें भय था कि सुबुद्धि का संचार होने पर कहीं वे रुपया देना अस्वीकार न कर दें। इस कारण जहां तक जल्द हो सके वे उनसे रुपया ले लेना चाहते थे।

इसी प्रकार की भावना से प्रेरित होकर वे आज मेहरचन्द से मिलने आये। उनके बाहर रहने के कारण थोड़ी देर तक उन्हें प्रतीक्षा करनी पड़ी। बाहर से लौटने पर थके मांदे रहने के कारण वे तुरत उनसे मुलाकात न कर सके। इसे उन्होंने अपना अपमान समझा। उनके दिल में यह विचार उत्पन्न हुआ कि मुझ में मिलने की इच्छा नहीं रहने के कारण वे बहानाबाजी कर रहे हैं। पर वे भी पूरे उस्ताद थे। फंसी हुई चिड़ियां को वे

कब जाल से निकलने दे सकते थे। किसी प्रकार हृदय के भावों को दबा कर चुपचाप बैठे रहे।

लगभग एक घंटे के बाद बाबू मेहरचन्द से उनकी मुलाकात हुई। पर आज न पहले की तरह दिलचस्पी ही थी और न आदर का भाव ही। साधारण शिष्टाचार दिखलाते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"मैं थका मांदा बाहर से आया था, इस कारण आप को कुछ देर तक इन्तजार करना पड़ा। मैं इसके लिये दुखित हूँ।"

रामकुमार प्रसाद ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—"आपस में यह शिष्टाचार कैसा? इस प्रकार का शिष्टाचार तो बाहर वालों के साथ दिखलाया जाता है। मैं तो इसे अपना घर समझता हूँ। यहां कुछ देर तक रुक जाना कोई कष्ट की बात नहीं है।"

बाबू मेहरचन्द—"यह आपकी मेहरबानी है।"

दूसरे दिन रामकुमार प्रसाद को देखते ही बाबू मेहरचन्द हड़ताल की बात छेड़ देते थे। पर आज अभी तक उन्होंने इसकी चर्चा न छेड़ी, इसका उन्हें बड़ा दुःख हुआ। फिर भी अपने भावको छिपाते हुए वे उनसे अन्य विषयोंपर बार्तालाप करने लगे। वे स्वयं हड़तालकी चर्चा छेड़ना नहीं चाहते थे। उनका अनुमान था कि कुछ देर के बाद वे अवश्य ही हड़ताल की बात छेड़ेंगे। इस प्रकार १५-२० मिनट व्यतीत हो गये। पर हड़ताल की कोई बात न छिड़ी। अन्त में वाध्य होकर रामकुमार प्रसाद को स्वयं यह प्रसंग छेड़ना पड़ा। यह चर्चा आरम्भ करते हुए वे बोले—"अब तो दो-एक दिनों में हड़ताल का श्रीगणेश होने वाला है।"

बाबू मेहरचन्द हाँ हूँ कर इस प्रसंग को टालना चाहते थे। पर

रामकुमार प्रसाद कब मानने लगे ? उन्होंने अपनी बात पर जोर देते हुए कहा—"अब शीघ्र ही आप की इच्छा पूरी होगी। मील में हड़ताल हो जाने पर आपके चाचा साहब की अवश्य बदनामी फैलेगी।"

बाबू मेहरचन्द—"देखिये क्या होता है।"

स्टीम तेज करने की आशासे रामकुमार प्रसाद ने कहा—"मैंने जोरदार हड़ताल का आयोजन कर रखा है।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद बाबू मेहरचन्द बोले—"आप से एक निवेदन है। यदि आप बुरा न मानें तो मैं कह सुनाऊँ।"

गम्भीरतापूर्वक रामकुमार प्रसाद ने उत्तर दिया—"बोलिये, क्या आज्ञा है ? भला आपकी कोई बात किस तरह मुझे बुरी लग सकती है ?

बाबू मेहरचन्द—"आपके यहां आने जाने से लोगों का सन्देह बेतरह बढ़ रहा है। कुछ लोगों को विश्वास हो गया है कि मैं भी इस षड़यंत्र में सम्मिलित हूँ।"

रामकुमार प्रसाद—"ऐसा होना तो स्वाभाविक ही है।"

बाबू मेहरचन्द—"इसलिये मैं आप से अनुरोध करना चाहता हूँ कि यहां स्वयं न आकर आप किसी आदमी या पत्र के द्वारा अपना काम निकाल लेंगे।"

रामकुमार प्रसाद—"आप का सोचना बहुत ठीक है। मैं भी इसी तरह की बात सोच रहा था। ऐसे मामलों में पत्र भेजना तो ठीक नहीं है। किसी विश्वास पात्र आदमी के द्वारा मैं काम निकाल लिया करूँगा।"

बाबू मेहरचन्द को आशा थी कि उनकी यह बात रामकुमार प्रसाद को बहुत बुरी लगेगी और इस प्रकार मनमुटाव हो जानेके कारण उनसे छुटकारा

मिल जायगा। पर अपनी आशा को निराशा के रूप में परिणत होते देख कर वे कुछ संकोच के साथ बोले—"इस स्थान पर मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिये था। लेकिन आपको अपना समझ कर मैंने ऐसा कहा। आप बुरा न मानेंगे।"

प्रसन्नता का भाव दिखलाते हुए रामकुमार प्रसाद ने उत्तर दिया—"इसमें बुरा मानने की कोई बात नहीं है। मैं तो स्वयं इस प्रकार का निवेदन करने वाला था। बुद्धिमानी पूर्वक ही कोई काम कर लेने में शाबाशी है। हमलोगों को इस प्रकार काम करना चाहिये जिसमें सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे।"

बाबू मेहरचन्द—"आपका कहना बिलकुल ठीक है।"

रामकुमार प्रसाद—"आज मैं आपके पास एक विशेष कार्यवश आया हूं।"

बाबू मेहरचन्द—"बोलिये, क्या कहना है!"

रामकुमार प्रसाद—"मैं आपसे पहले ही बतला चुका हूं कि दो-एक दिनों में हड़ताल का श्रीगणेश होनेवाला है। अब उसके लिये रुपये की आवश्यकता है। आप शेष चार हजार दे देने की कृपा कीजिये।"

बाबू मेहरचन्द—"रुपये की आवश्यकता तो आपको अवश्य होगी। लेकिन इस समय रुपया देने में मैं सर्वथा असमर्थ हूं।"

रामकुमार प्रसाद ने मुस्कराते हुए कहा—"जब आप ऐसे बड़े आदमी रुपया देने में असमर्थ होंगे तो फिर समर्थ कौन हो सकता है?"

बाबू मेहरचन्द—"यह सब कहने की बात है।"

रामकुमार प्रसाद—"रुपये के बिना तो बड़ी तंगी है। आपको इसका तो कोई प्रबन्ध करना ही पड़ेगा।"

बाबू मेहरचन्द —"मैं सर्वथा असमर्थ हूं"

रामकुमार प्रसाद—"यदि आप रुपया देने के लिये तैयार न होंगे तो कुछ दिनों के लिये मुझे हड़ताल का कार्यक्रम स्थगित कर देने लिये बाध्य होना पड़ेगा। क्योंकि हड़ताल के पहले धन संग्रह कर लेना जरूरीहै।"

बाबू मेहरचन्द—"मैं भी इसे ही अच्छा समझता हूँ। यदि आप कुछ दिनों के लिये वर्तमान कार्यक्रम स्थगित कर रुपये का प्रबन्ध कर लें तो अच्छा है।"

रामकुमार प्रसाद—"लेकिन उस दशा तो इस समय तक खर्च किया हुआ रुपया भी व्यर्थ चला जालगा। आपका भी तो एक हजार लग चुका है।"

बाबू मेहरचन्द —"जो गया उसे जाने दीजिये। हजार रुपये के श्राद्ध में चार हजार लगाना मैं अच्छा नहीं समझता हूँ।"

आश्चर्य के साथ रामकुमार प्रसाद ने कहा—"क्या आपके विचार में कुछ परिवर्तन हुआ है?"

बाबू मेहरचन्द—"परिवर्तन होना स्वाभाविक है। अपने पैर में ही कुल्हाड़ी मारने के तर्क पर कोई कितने दिनों तक खड़ा रह सकता है?"

रामकुमार प्रसाद—"अब शायद आप हतड़ाल को हानिकारक समझने लगे हैं।"

बाबू मेहरचन्द--"जी हाँ।"

घृणापूर्ण मुस्कुराहट के साथ रामकुमार प्रसाद ने कहा—"यह बात यदि आपको पहले ही सूझ जाती तो इतने दिनों तक मुझे आपके पीछे परेशान

नहीं होना पड़ता।"

बाबू मेहरचन्द—"क्या किया जाय? इसमें दोनों आदमियोंके दुर्भाग्यकी बात है। यदि यह बात मुझे पहले ही सूझ जाती तो आप परेशानी से बच जाते और मैं हजार रुपये की नुकसानी तथा इतनी बदनामी से बच जाता।"

रामकुमार प्रसाद—"क्या अपनी प्रतिज्ञाओं का आप कोई मूल्य नहीं समझते?"

बाबू मेहरचन्द—"मुझ से यह प्रश्न पूछने का आप को कोई अधिकार नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—"अधिकार क्यों नहीं है? आप की बात पर विश्वास कर के मैंने इतना बड़ा काम उठाया। अब आप मुझे निराश कर रहे हैं। यह कहां की मनुष्यता है?"

बाबू मेहरचन्द—"माफ किजिये! मुझ से गलती हो गयी। मैं आपसे बहस करना नहीं चाहता हूं! इस समय आप मेरे घर में हैं। मेरा धर्म आप की दो कड़ी बातें सहने के लिये भी मुझे बाध्य करता है।"

रामकुमार प्रसाद—"लेकिन इससे आप का भला न होगा। आप हरगिज यह ख्याल न करें कि आप से रुपया नहीं मिलने पर हड़ताल का काम रुक जायगा। रुपया प्राप्त करने के लिये कई मार्ग खुले हैं। अब आपकी मील में और भी भयकर हड़ताल होगी। पहले तो आप से मिले रहने के कारण आप की बातों का मुझे ख्याल करना पड़ता। लेकिन अब विश्वास रखें, आप की मील को नष्ट करके ही मैं दम लूँगा। मुझे देखना है कि विश्वासघातकता कहां तक आपका साथ देती है?"

बाबू मेहरचन्द—"मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मेरा धर्म चुप रहने के लिये मुझे बाध्य करता है।"

रामकुमार प्रसाद—"क्या विश्वासघातियों का भी कोई धर्म होता है?" इतना कहकर वे क्रोध से कांपते हुए उन के यहां से बिदा हुए।

—*—

बीसवां अध्याय

कुछ मनुष्यों का स्वभाव ऐसा होता है कि वे जल्दी किसी काम में नहीं पड़ते, दुनियां के झंझटों से अलग रह कर ही वे जिन्दगी बिताना चाहते हैं। परन्तु इस श्रेणी के मनुष्य जब किसी काम को अपने हाथ में ले लेते हैं, तो वे यथा-शक्ति उसे पूरा करने की चेष्टा करते हैं। इस का कारण भी स्पष्ट ही है। प्रत्येक काम में हाथ लगाने वाले व्यक्ति के लिये सफलता असफलता एक अपनी बात हो जाती है। दर्जनों काम में उन्हें स्वभावतः किसी न किसी प्रकार सफलता मिलती ही है। इसलिये सफलता के गौरव का सुख उन्हें अवश्य मिला रहता है। ऐसी दशा में यदि किसी कार्य में वे असफल हुए तो उस से वे अधिक दुखित नहीं होते हैं। जनता की दृष्टि में भी उनका मूल्य अधिक नहीं घटता। जो व्यक्ति उनको सफलता से लाभ उठा चुके हैं, वे स्वभावतः ही उनकी असफलता से होने वाली हानि सहने के लिये तैयार रहते हैं। इस कारण उन की दृष्टि में असलता अधिक भयावह वस्तु नहीं रह जाती है। असफल होने की दशा में वे स्वयं, जो घोड़ा पर चढ़ता है वही गिरता है, आदि कहावत के सहारे दुख तथा उत्साहहीनता को अपने पास फटकने नहीं देते हैं। परन्तु जिस व्यक्तिने कभी किसी उत्तर दायित्वपूर्ण काम को अपने हाथ में नहीं लिया, यदि वह कोई काम अपने हाथ में ले, तो सफलता के लिये उसका अधिक चिन्तित तथा व्यस्त रहना स्वाभाविक ही है। उसके लिये वह काम कसौटी का रूप

धारण कर लेता है। उसकी सफलता तथा असफलता में ही वह अपने जीवन की सफलता अथवा असफलता की झलक देखता है।

पं० रामदयाल शर्मा के सम्बन्ध में भी यही बात लागू थी। इस समय तक उन्होंने किसी सार्वजनिक काम में भाग नहीं लिया था। एकाएक राम-पलट की दुर्घटना ने उनका ध्यान मजदूरों की दुर्दशा की ओर आकर्षित कर दिया था और वे उनके आन्दोलन से सहानुभूति रखने लगे थे। इसके बाद ही मजदूरों की दशा का भी उन्होंने अच्छा अध्ययन किया। मीलों में घूमने आदिके बाद वे इस निश्चय पर पहुंचे कि रामकुमार प्रसाद का आन्दोलन सर्वथा स्वार्थपूर्ण है, इस कारण उसे किसी न किसी प्रकार दबाना पड़ेगा। फतेचन्द काटन मिल्स में हड़ताल की योजना हो ही रही थी। प० रामदयाल शर्मा की दृष्टि में उसका विरोध करने में भी मजदूरों का हित था। इसी उद्देश्य को सामने रख कर वे कार्यक्षेत्र की ओर अग्रसर हुए। अपने जीवन में इसके पहले उन्होंने कोई सार्वजनिक काम अपने हाथ में नहीं लिया था। इस कारण वे स्वभावतः ही पूरी शक्ति तथा उत्साह के साथ अपने कार्यक्रम को सफल बनाने का चेष्टा करने लगे।

बेचारा रामपलट अभी तक अस्पताल में ही पड़ा था। पैर कट जाने के कारण उसके जीवन की कोई चिन्ता तो नहीं रही थी, पर वह बराबर खिन्न रहा करता था। शर्माजी प्रति दिन उससे मिल कर उसे ढाढ़स दिया करते थे। वहां जाने पर वे उससे हड़ताल के सम्बन्ध में भी बातें करते थे। उसके द्वारा उन्हें मजदूरों की वास्तविक अवस्था का पूरा पूरा पता लग गया था। रामपलट की साधारण बुद्धि के अनुसार भी हड़ताल से मजदूरों को कोई लाभ न था।

पं० रामदयाल शर्मा मील के समीप पधारने वाले संन्यासी महाराज की चर्चा सुन चुके थे। उनकी सिद्धता तथा मजदूरों के ऊपर उनके अपार प्रभाव का भी पता उन्हें लग गया था। इसके साथ ही उन्हें यह भी मालूम था कि आगामी हड़ताल की विफलता के सम्बन्ध में उन्होंने भविष्यवाणी की। ऐसे सिद्ध महापुरुष का दर्शन करने के लिये शर्माजी बड़े ही उत्सुक हुए। इसके साथ ही उन्होंने उन से हड़ताल के सम्बन्ध में परामर्श करना भी आवश्यक समझा। यदि सम्भव हो तो वे उनसे इस कार्य में सहायता भी लेना चाहते थे।

इसी भावना से प्रेरित होकर आज रामपलट से मुलाकात करने के बाद वे सीधे मोटर पर मील की ओर चले। वहां पहुँचने पर स्वामीजी का पता लगाने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। वे काफी प्रसिद्ध थे। बच्चा बच्चा उन्हें जानता था। तुरत वे उस पेड़ के समीप जा पहुंचे, जिसके नीचे उन्होंने अपना आसन जमा रखा था। उस समय स्वामीजी दो-तीन आदमियों से बातें कर रहे थे। उन्हें देख कर ही वे समझ गये कि किसी सज्जन आदमी ने उनके यहां पधारने का कष्ट किया है। बड़े प्रेम से उनके प्रस्ताव के उत्तर में आशीर्वाद देते हुए उन्होंने बगल के एक आसन पर बैठने का इशारा किया। थोड़ी देर तक वे पहले आये हुए लोगों से बातें करते रहे। उन लोगों के चले जाने पर पं० रामदयाल शर्मा से उन्होंने उनके पधारने का कारण पूछा। बड़ी नम्रता के साथ शर्माजी ने उत्तर दिया—"आप जैसे महात्मा का दर्शन करने के लिये किसी विशेष उद्देश्य की कौन सी आवश्यकता है। आप लोगों के दर्शन से पुण्य होता है, उससे बढ़ कर लाभप्रद दूसरा कौन सा उद्देश्य हो सकता है?"

संन्यासीजी—"आप कहां रहते हैं ?"

रामदयाल शर्मा—"शामबाजार में मेरा मकान है ।"

संन्यासीजी—"क्या आप शामबाजार से आ रहे हैं ?"

रामदयाल शर्मा—"जी हां ।"

संन्यासीजी—"मेरा पता वहां आपको किस प्रकार लगा ?"

रामदयाल शर्मा—"मजदूरों से कुछ सहानुभूति रहने के कारण मुझे आपकी सिद्धता का पता लगा ।"

संन्यासी—"आपका शुभनाम ?"

रामदयाल शर्मा—"लोग मुझे रामदयाल शर्मा कहते हैं ? आपकी सिद्धि को तो मैंने बड़ी कहानी सुनी है, लेकिन इस समय तक आपका नाम सुनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ । क्या आप···।"

बीच में ही बात काट कर संन्यासीजी बोले—"ज्ञानानन्द कह कर लोग मुझे पुकारते हैं ।"

रामदयाल शर्मा—"आपका दर्शन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई ।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपने यहां तक पधारने का कष्ट किया, यह आपकी दया है । यदि मेरे लायक कोई सेवा हो तो कहिये । हम लोग तो धर्म तथा जाति के सेवक मात्र हैं ।"

रामदयाल शर्मा—"आप लोगों को सेवक कौन कह सकता है ? हां, आपलोग समाज के संचालक अवश्य हैं । आपलोगों के पुण्य-प्रताप से ही तो यह दुनियां कायम है ।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"यदि आप गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो सेवक की परिभाषा के अन्दर आप सभी कुछ देख सकेंगे । सेवक की

संकीर्ण परिभाषा को आप छोड़ दीजिये, उदारतापूर्वक विचार करने पर आप सेवक को ही संचालक के रूप में पावेंगे। अपने सम्बन्ध में ही आप विचार कीजिये। यदि ड्राइवर आपकी गाड़ी नहीं चलावे तो सभी साधन रहते हुए भी आप कहीं नहीं जा सकते हैं। यदि रसोईदार भोजन प्रस्तुत नहीं करे तो आप को भूखो रहना पड़ेगा। इन बातों से यह स्पष्ट हुआ कि ड्राइवर तथा रसोईदार सेवक होते हुए भी आपके संचालक हैं। अन्य कार्यों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू है। सच्चा सेवक ही वास्तविक संचालक होता है। सेवक का कर्त्तव्य इतना पवित्र तथा महान है कि उसकी परिभाषा के अन्दर सभी कुछ आ जाता है। किसी भी व्यक्ति को सेवक कहलाने में गौरव का अनुभव करना चाहिये।"

रामदयाल शर्मा—"आपका कहना बिलकुल ठीक है। महाभारत के युद्ध का सचालन श्रीकृष्ण जी सारथी के रूप में ही तो कर रहे थे। परन्तु सचालक के सिवा उन्हें सेवक कौन कह सकता है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—सेवक शब्द की वास्तविक महत्ता का अनुभव नहीं करने के कारण इन दिनों हमारे सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं में गलतफहमी फैल रही है। वे सेवक के बदले संचालक का पद प्राप्त करना चाहते हैं। सेवक के पद को वे अपनी प्रतिष्ठा के खिलाफ समझते हैं। इसका फल यह होता है कि पारस्परिक संघर्ष में उनकी शक्ति नष्ट हो जाती है और उनकी अपार शक्ति से जनता को किसी प्रकार का लाभ नहीं पहुँचने पाता है। परन्तु यदि सचालक के दावे को छोड़ कर वे सेवक का पवित्र पद ग्रहण करें तो सारे सघर्ष तथा वैमनस्य का बातकी बात में अन्त हो जाय और उनकी शक्ति से देश तथा समाज को अपार लाभ हो।"

रामदयाल शर्मा—"सेवाभाव के बदले प्रभुत्व स्थापना की प्रवृत्ति से इस समय देश को बड़ी हानि हो रही है। यदि आपकी व्याख्या के अनुसार सभी आदमी सेवक के पवित्र पद को स्वीकारे करें तो उनकी प्रतिष्ठा भी बहुत अंशों में बढ़ जाय और उनसे देश का भी बहुत बड़ा कल्याण हो।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"गुलामी का मर्ज बहुत बुरा होता है। उसने हमारे मस्तिष्क को विकृत कर दिया है। भगवान शीघ्र ही हमलोगों को सुबुद्धि प्रदान करें।"

रामयदाल शर्मा—"महाराज! आप तो राजनीति के भी पंडित मालूम पड़ते हैं। आप जैसे महात्मा के वचनामृत से मृत जाति में पुनः जीवन का सचार हो सकता है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"क्या आपको भी राजनीति से प्रेम है?"

रामदयाल शर्मा—"पहले तो इससे मेरा अधिक सम्बन्ध नहीं था। लेकिन इधर एक घटना विशेष के कारण मजदूर आन्दोलन से मेरी विशेष दिलचस्पी हो गयी है।" इतना कह कर उन्होंने मोटर दुर्घटना से लेकर इस समय तक की सारी बातें कह सुनायी?

उनकी बातें सुनकर स्वामी ज्ञानानन्द ने कहा—"आप मजदूरों से विशेष सहानुभूति रखते हैं, यह सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। इस समय मजदूरों को सच्चे पथ प्रदर्शकों की बड़ी आवश्यकता है। मजदूरों की सेवा से बढ़कर कोई उत्तम काम नहीं हो सकता है। उनके मेहनत के आधार पर ही भगवान की यह सृष्टि कायम है। उनके पसीने की कमाई पर ही तो सभी कोई मौज से गुलछर्रे उड़ाते हैं। वे ही वास्तव

में जीवित देवता हैं। उनकी सेवा, भगवान की सेवा है। ईश्वर इस पुनीत कार्य में आपकी सहायता करे। मेरा विश्वास है कि आपके द्वारा मजदूरों की बहुत कुछ सेवा हो सकेगी।"

रामदयाल शर्मा—"आप के आशीर्वाद से हम आजन्म अवश्य ही मजदूरों की सेवा करते रहेंगे। आपलोगों की दया चाहिये। हम इसी के भूखे हैं।

स्वामी ज्ञानानन्द—"आप अवश्य सफल होंगे।"

रामदयाल शर्मा—"मैंने सुना है कि आगामी हड़ताल की असफलता के सम्बन्ध में आपने भविष्यवाणी की है।"

स्वामी ज्ञानानन्द...."हाँ, मैं ने तो ऐसा ही कहा है, मेरी धारणा है कि नेता की स्वार्थ परायणता के कारण यह हड़ताल असफल होगी।"

रामदयाल शर्मा—"क्या हड़ताल के सम्बन्ध में मैं आपसे कुछ प्रश्न पूछ सकता है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"बड़ी प्रसन्नता के साथ।"

रामदयाल शर्मा—"क्या चेष्टा करने पर हड़ताल रोकी नहीं जा सकती है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"हमारे अनुमान से तो ऐसा होना सम्भव नहीं है, फिर भी चेष्टा अवश्य करनी चाहिये। प्रत्येक कार्य का कोई न कोई फल अवश्य होता है। यदि इस समय हड़ताल को आप नहीं रोक सके तो सम्भव है कि इस चेष्टा से आगे चल कर आपको लाभ हो। इसके साथ यह भी सम्भव है कि आपके विरोध के कारण पूर्ण हड़ताल न होकर केवल आंशिक हड़ताल हो।"

रामदयाल शर्मा—"इस कार्य में क्या आप मेरी सहायता कर सकते हैं?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"मैं फकीर आदमी ठहरा। मुझे क्यों इन झंझटों में डालियेगा।

रामदयाल शर्मा—"लेकिन पहले जमाने में तो महात्मागण ही उलझन के कार्यों को सुलझाते थे। यदि आप मेरी सहायता करें तो मेरी शक्ति बहुत बढ़ जाय।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपका कहना ठीक है। लेकिन मैं नहीं समझता हूँ कि मुझ से आप कोई लाभ हो सकेगा।"

रामदयाल शर्मा—"आप की सहायता से तो आवश्यकता से अधिक लाभ हो सकता है।"

मुस्कराते हुए स्वामी ज्ञानानन्द ने कहा—"यह भी बुरा है। अति किसी भी अवस्था में छोड़ने की चीज होती है। आवश्यकता से अधिक लाभ को भी तो हानि के सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता है।"

रामदयाल शर्मा—"मुझ जैसे साधारण विद्या बुद्धि के आदमी के शब्दों के अर्थ की ओर ध्यान न देकर भाव की ओर ध्यान देना चाहिये। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि आपके द्वारा हम लोगोंको बहुत लाभ हो सकता है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"खैर, मैं आपको सहायता का वचन देता हूँ। लेकिन मैं कोई व्याख्यान आदि नहीं दूंगा। परामर्श के द्वारा जहां तक सम्भव होगा, मैं आपकी सहायता करने की चेष्टा करूँगा। वर्तमान समय में आपका कार्यक्रम क्या है?"

रामदयाल शर्मा—"अब समय बहुत कम रह गया है। शीघ्र ही वे

लोग हड़ताल की घोषणा करना चाहते हैं। इसलिये कोई खुली सभा के द्वारा मैं हड़ताल का विरोध करना चाहता हूँ। इससे विशेष लाभ होने की सम्भावना है। लेकिन मुझे भय है कि सभा में ये लोग कहीं गोलमाल न मचावें। उनकी शक्ति बहुत कुछ संगठित है। इस स्थल पर मैं आपके प्रभाव से लाभ उठाना चाहता हूँ। यदि आप वहां उपस्थित रहेंगे, तो सम्भव है कि कोई गोलमाल नहीं मचने पावे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपके अनुरोध की रक्षा के लिये मैं सभा में उपस्थित रहूँगा। लेकिन उसकी कार्यवाही में कोई प्रमुख भाग नहीं ले सकूँगा।"

रामदयाल शर्मा—"प्रमुख भाग लेने के लिये मैं आपको बाध्य नहीं करूँगा। आपकी उपस्थिति से शान्तिपूर्वक सभा हो सकेगी, इसे ही मैं आपकी सब से बड़ी कृपा समझूँगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"इसमें कृपा की कोई बात नहीं है। आप जैसे उत्साही कार्यकर्त्ता को सहायता देना हम लोगों का प्रधान कर्त्तव्य है। लेकिन इस स्थल पर मैं आपको बतला देता हूँ कि आप एक पूर्ण संगठित शक्ति से मुकाबला करना चाहते हैं। ऐसी दशा में सभा करने के पहले आप भी निजी संगठन कर लीजिये।"

रामदयाल शर्मा—"जो हाँ, आपका कहना बिलकुल ठीक है।"

इसके बाद वे स्वामीजी के साथ संगठन के कार्यक्रम पर बिचार करते रहे। सभी विचारणीय बातोंका फैसला कर रात्रि के समय फिर मिलने की बात कह कर उस समय वे अपने घर लौट आये।

———

इक्कीसवाँ अध्याय

उसी दिन संध्या समय पं० रामदयाल शर्मा फिर स्वामी ज्ञानानन्द से मिलने के लिये आये। घंटों तक बातें होती रहीं। स्वामीजो ने उन्हें मजदूर हितकारिणी समिति के नाम से मील के कुछ प्रमुख अगुओं की एक समिति कायम करने की राय दी। इसके साथ ही भावी कार्यक्रम को उन्होंने एक व्यवहारिक सांचे में ढाल दिया। पं० रामदयाल सार्वजनिक क्षेत्र में एकदम रंगरूट थे। उन्हें किसी प्रकार का व्यवहारिक अनुभव नहीं था। इस कारण स्वामीजी के परामर्श से उन्हें बहुत कुछ लाभ हुआ।

मजदूरों के कुछ अगुऐ स्वामीजो के विशेष भक्त थे और उनकी भविष्य वाणी के कारण वे हड़ताल के विरोधो भी हो गये थे। वे नहीं चाहते थे कि हड़ताल के द्वारा मजदूरों को लाभ के बदले हानि पहुँचायी जाय। एक आदमी के द्वारा उन्हों ने उस श्रेणी के ५-७ आदमियों को उसी समय बुलवाया और रामदयाल शर्मा से उनका परिचय करा दिया। इसके साथ ही उन्हें यह भो बतला दिया कि ये मजदूरों के सच्चे शुभचिन्तक हैं और इनके द्वारा उनका बहुत कुछ कल्याण होने वाला है। स्वामीजो के मुख से ये बातें सुन कर अगुओं के हृदय में पं० रामदयाल शर्मा के प्रति विशेष भक्ति उत्पन्न हो गयी। उन्होंने स्वामीजी के सामने प्रतिज्ञा की कि हम लोग इनके बतलाये हुए मार्ग पर चलेंगे और आज से इनके सच्चे अनुयायी की तरह काम करेंगे।

इन प्रारम्भिक बातों के बाद स्वामीजी ने अगुओं को पं० रामदयाल

शर्मा का उद्देश्य समझा दिया। उन लोगों ने भी उनकी नीति का समर्थन करते हुए हड़ताल का विरोध करने का निश्चय किया। इस प्रकार अपना उद्देश्य सफल होते देख प्रसन्नता पूर्वक रामदयाल शर्मा ने कहा—"इस पवित्र स्थान पर ही यदि कमिटी का निर्माण हो जाय तो बड़ा ही अच्छा हो।"

अगुओं ने भी इसका समर्थन किया। उन्होंने कहा कि आपके सामने जो कुछ तय हो जाय वह अच्छा है। आप पर हम लोगों की अपार श्रद्धा है। इस कारण आपके सामने तय हो जाने से हम लोगों को विशेष सन्तोष होगा। इन बातों को सुन कर स्वामीजीने कहा—"कमिटी बनाने का काम बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है। उसके निर्माण के समय कई बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा। इस खुली जगह में सभी बातों का विवेचन करना ठीक नहीं है। यहां हर प्रकार के आदमी आते हैं। किसी को यहां आने से मैं रोक तो सकता ही नहीं हूँ।"

यह बात प्रायः सभी लोगोंको जँच गयी। कुछ सोच कर रामदयाल शर्मा ने कहा—"आपका कहना ठीक है। लेकिन उस समय आपको भी मेरे घर तक पधारना पड़ेगा। आशा है कि इस निराधिकार आग्रह के लिये आप कृपापूर्वक क्षमा करेंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"मैंने आपको सहायताका बचन दिया है। आपके यहां जाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आप कल का कोई समय ठीक कर लीजिये। उस समय मैं इन लोगों के साथ चला आऊँगा।"

रामदयाल शर्मा—"आपकी बड़ी कृपा है। यदि आप लोगोंको सुविधा हो तो कल प्रात: काल आठ बजे के समय मैं आपके पास मोटर भेज दूँ। ५-७ भाइयों के साथ आप उस पर मेरे यहां चले आयेंगे।"

सभी लोगों ने उस समय को सुविधाजनक बतलाया और दूसरे दिन आठ बजे चलने की बात पक्की हो गयी। इस प्रकार सभी बातों का निश्चय कर पं० रामदयाल शर्मा अपने घर लौट आये। कलके लिये कुछ परामर्श करने के बाद मजदूरों के अगुए भी वहाँ से विदा हुए।

दूसरे दिन साढ़े सात बजे के समय ही मोटर स्वामीजी के स्थान के समीप आ लगी। थोड़ी देर में निमंत्रित सभी आदमी आ गये। सात आदमियों को स्वामीजी ने बुलाया था। उनके साथ वे मोटर पर सवार हो गये। लगभग आधे घँटे में गाड़ी पं० रामदयाल शर्मा के फाटक पर जा लगी।

उनके विशाल भवन को देख कर मजदूर इशारे से एक-दूसरे के प्रति प्रसन्नता जताने लगे। उनके धनवैभव को देख कर मजदूरों का उनके प्रति और भी विश्वास बढ़ गया। उनके हृदय ने कहा कि इतना बड़ा आदमी अपने स्वार्थ के लिये किसी तरह उन्हें गलत रास्ते पर नहीं ले जा सकता।

खैर, पं० रामदयाल शर्मा ने बड़ी सहृदयता के साथ उनका स्वागत किया। एक मखमली कुर्सीपर स्वामीजी को बिठलाते हुए वे अन्य लोगों से भी बगल की कुर्सियों पर बैठने का आग्रह करने लगे। पर लाख चेष्टा करने पर भी वे कुर्सी पर न बैठ सके। स्वामीजी के समीप ही वे फर्श पर बैठ गये। थोड़ी देर तक इधर उधर की चर्चा होनेके बाद काम की बातें आरम्भ हुईं। हड़ताल की चर्चा छेड़ते हुए स्वामीजी ने कहा—"आपके अनुरोध से मैं इन लोगों के साथ आपके यहां उपस्थित हुआ हूँ। इन गरीब भाइयों की मुझ पर असीम कृपा है। ये लोग मेरी बातों पर बहुत अधिक विश्वास

करते हैं। इस कारण इन लोगों ने आपके साथ पूर्ण सहयोग करने का निश्चय किया है। मैं चाहता हूँ कि आप कोई ऐसा कार्यक्रम बना लें, जिसके आधार पर आप लोगों के उद्देश्य की पूर्ति होती रहे। इस स्थल पर मैं यह भी बतला देना चाहता हूँ कि मैं भी मजदूरों के अधिकारों का एक प्रबल समर्थक हूँ। मुझे मालूम है कि मजदूरों पर नाना प्रकार के अत्याचार होते हैं। इस कारण मैं भी चाहता हूँ कि मजदूर अपना उचित अधिकार प्राप्त करें, फिर भी आगामी हड़ताल में मेरा विश्वास नहीं है। इस कारण मैं उसका विरोधी हूँ। मुझे विश्वास हो गया है कि आप भी सद्-भावना से प्रेरित होकर ही हड़ताल का विरोध करना चाहते हैं। लेकिन इस स्थल पर मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि कोई ऐसा कार्य न हो, जिस से मजदूरों के स्वार्थ को अणुमात्र भी धक्का लगे। हम लोगों के उद्योग से मजदूरों को यदि लाभ के बदले हानि हुई, तो हम लोगों के लिये इससे बढ़ कर कलंक की कोई दूसरी बात नहीं हो सकती है। मैं आप से इस प्रकार का आश्वासन चाहता हूँ।"

स्वामी जी की बातें सुनकर गम्भीरता पूर्वक पं० रामदयाल शर्मा ने कहा—"स्वामी जी! मुझे विश्वास है कि हमारे उद्देश्य की सत्यता पर पूर्ण विश्वास होने पर ही आपने यहां तक पधारने का कष्ट किया है। जब आप जैसे महात्मा हमारी सत्यता में विश्वास रखते हैं तो हमारे उद्देश्य की स्वच्छता में अणुमात्र भी सन्देह नहीं किया जा सकता है। यह बात सूर्यो-दय और सूर्यास्त की तरह सत्य और ध्रुव है। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि निःस्वार्थ भाव से ही मैं मजदूरों की सेवा करने के लिये अग्रसर हो रहा हूँ। इस कार्य में किसी भी समय आप स्वार्थ की गंध भी नहीं

पा सकते हैं। इस स्थल पर मैं वर्त्तमान हड़ताल के सम्बन्ध में भी अपनी नीति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मैं यह नहीं चाहता कि हड़ताल का विरोध कर मजदूरों के स्वार्थ को दबा दिया जाय। हड़ताल के प्रबन्धकों की स्वार्थपरायणता का पुष्ट प्रमाण मिलने के कारण ही मैं हड़ताल का विरोध करने के लिये आगे बढ़ा हूँ। यदि मुझे आज विश्वास दिला दिया जाय कि अपना पहला भाव बदल कर वे निःस्वार्थ भाव से हड़ताल का नेतृत्व करने के लिये तैयार हैं, तो मैं सबसे पहले उनका समर्थन करने के लिये तैयार होऊँगा। इस स्थल पर यह प्रश्न मुझसे पूछा जा सकता है कि हड़ताल नहीं करने की अपील करते समय आप मजदूरों के सामने उनके लाभ का कौनसा कार्यक्रम रखेंगे। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि आज से चार-पांच दिन पहले मैं मील के मालिक बाबू मलूकचन्द से मिला था और उन्होंने मुझे विश्वास दिलाया है कि हड़ताल के बदले यदि समझौते के रूप में हमलोग आवश्यक मांगें पेश करेंगे, तो वे उन्हें अवश्य स्वीकार करेंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"तब तो आप पूरे राजनीतिक जीव मालूम पड़ते हैं। मेरा तो अनुमान था कि इस क्षेत्र में आप कोरे रंगरूट हैं और इस कारण मुझे विशेष चिन्ता हो रही थी। मैं इस बात से बहुत प्रसन्न हूँ कि आपने मील के मालिक से भी इस सम्बन्ध में आवश्यक परामर्श कर लिया है। आप इस समय ऐसे लोगों की एक कमेटी बना लें जो मील में आपके उद्देश्य का दृढ़ता पूर्वक प्रचार करें और आगामी रविवार को एक सार्वजनिक सभा का आयोजन करें। इस बीच में हमलोग मांगों के सम्बन्ध में भी निर्णय कर लेंगे। परन्तु हम लोगों को सदा इस बात का ख्याल करना होगा कि हमारी मांग ऐसी हों, जिनसे समझौते का भाव टपकता हो।"

पं० रामदयाल शर्मा तथा अन्य उपस्थित लोगों ने भी इन बातों का समर्थन किया। जो लोग स्वामी जी के साथ आये थे, उन लोगों की एक कमेटी बना दी गयी और उन्हें उद्देश्य आदि भी समझा दिये गये। इसके साथ ही आगामी रविवार को एक सार्वजनिक सभा करने का भार उनके ऊपर सौंपा गया। इस प्रकार मंत्रणा कमिटी की कार्यवाही समाप्त हुई।

बातें खतम होने के बाद अगुओं को प० रामदयाल शर्मा ने खूब भोजन कराया। स्वामी जी से भी भोजन करने का आग्रह करने लगे। पर कई कारण बतला कर उन्होंने भोजन नहीं किया, इसका पं० रामदयाल शर्मा को कुछ खेद भी हुआ।

पं० रामदयाल शर्मा के यहां से लौटने पर नवीन कमिटी के अगुओं ने भी अपना प्रचार आरम्भ किया। स्वामी जी की भविष्यवाणी के कारण हड़ताल के समर्थकों की संख्या तो पहले से ही कम होने लगी थी, नियमित प्रचार का और भी असर पड़ा। लोग रामकुमार प्रसाद का दल छोड़ कर पं० रामदयाल शर्मा के दल में मिलने लगे।

सार्वजनिक सभा की घोषणा पहले ही कर दी गयी थी। रविवार की संध्या को सभा होने की सूचना निकली थी। बाबू रामकुमार प्रसाद को इन बातों की सूचना मिल चुकी थी। समय पर सूचना मिल जाने के कारण वे पूर्ण सजग हो गये थे और विरोधियों की सभा में विघ्न डालने के लिये उन्होंने काफी प्रबन्ध भी कर लिया था।

नियमित समय पर मजदूर सभास्थल में पधारने लगे। पं० रामदयाल शर्मा भी स्वामी जी के साथ उचित समय पर जा पहुंचे। वे दो एक वक्ता भी अपने साथ लाए थे। उनके पक्ष के लोगों को भी विरोध की

पूरी सम्भावना थी। इस कारण वे भी पूर्ण सजग थे। सभा की कार्यवाही आरम्भ होते ही गोलमाल मचने लगा। लोगों ने कोलाहल तथा 'शेम; 'शेम; करना शुरू किया। स्वामी जी की उपस्थिति के कारण अधिकांश शान्त थे और वे सभा की कार्यवाही शान्ति पूर्वक समाप्त करने के पक्ष में थे। परन्तु कोलाहल मचानो ही जिनका उद्देश्य था, जो केवल इस कार्य के लिये ही वहाँ बुलाये गये थे, उनके लिये भला स्वामी जी की उपस्थिति का क्या मूल्य था? स्वामी जी उनके मर्ज की दवा प्रमाणित नहीं हो सके।

इस ओर से कोलाहल शान्त करने की चेष्टा की जा रही थी। थोड़ी शान्ति होने पर एक व्यक्ति बीच से उठकर बोलने लगा—"भाइयों! इस सभा के द्वारा हमलोगों के अधिकारों को दबाने की चेष्टा की जायगी, इस कारण इसका बहिष्कार करो।"

दो चार और आदमियों ने भी 'बहिष्कार करो; बहिष्कार' करो की आवाज लगायी। इस पर फिर भयंकर कोलाहल मच गया। सभा का संचालन असम्भव सा दिखलायी देने लगा। यह अवस्था देखकर सभा के समर्थक विशेष उत्तेजित होने लगे। दो एक जगहों पर लात घूसे भी चले। लक्षणों से ऐसा मालूम पड़ने लगा कि शीघ्र ही दोनों दलों में दंगा हो जायगा। यह अवस्था देख कर स्वामी जी ने पं० रामदयाल शर्माको सभा की कार्यवाही स्थगित कर देने को राय दी। उनको बात मान कर शर्मा जी ने उसी समय सभा भंग कर दी।

सभा भंग होते देख विरोधियों ने ताली बजायी। उन्हें अपनी विजय की खुशी थी। परन्तु वस्तुतः वह उनको विजय नहीं पराजय थी। सभा

में गुंडाशाही का प्रदर्शन कर रामकुमार प्रसाद के दल ने अधिकांश मजदूर की सहानुभूति खो दी। वे उनसे घृणा करने लगे। कार्यवाही भंग होने पर दोनों दलों में दो-एक जगह लात घूसे भी चले। पर लोग शीघ्र ही शान्त कर दिये गये। स्थिति भयंकर नहीं होने पायी।

वहाँ शान्ति स्थापित हो जाने पर अपने दल के प्रमुख लोगों के साथ परामर्श कर पं० रामदयाल शर्मा भी घर लौट आये। वर्तमान परिस्थिति पर शान्तिपूर्वक विचार करने के लिये वे स्वामी जी को भी साथ ले आये थे।

बाईसवाँ अध्याय

बाबू रामकुमार प्रसाद पुराने खिलाड़ी थे। सार्वजनिक आन्दोलन में ही उन्होंने वर्षों व्यतीत किया था। विरोधियों का सामना करना उनके लिये फुटबाल का खेल था। ऐसी परिस्थिति में वे घबराहट को छोड़कर धैर्य से काम लेते थे। पं० रामदयाल शर्मा को अपने विरुद्ध खड़ा होते देखकर वे स्थिति की गम्भीरता अवश्य समझ गये। उन्हें यह भी मालूम हो गया कि हड़ताल के प्रयत्न में सफल हो जाना कोई अदनी बात नहीं है। फिर भी वे अपने प्रयत्न से बाज नहीं आये।

बाज आने की बात भी नहीं थी। हड़ताल कराने के लिये ही वे अब तक मि० रावर्ट से सात हजार रुपया ले चुके थे। एक हजार उन्होंने बाबू

मेहरचन्द से भी लिया था। बाबू मेहरचन्द के स्वतः अलग हो जाने के कारण, अब उनका कोई सवाल तो नहीं था, फिर भी मि० रावर्ट से वे किसी प्रकार छुटकारा नहीं पा सकते थे। आगे भी रुपया मिलने की आशा थी। इस कारण उन्होंने हड़ताल कराना आवश्यक समझा। उनका अनुमान था कि निजी स्वार्थ के साथ साथ मजदूरों को भी हड़ताल से कुछ लाभ हो सकता है। उन्हें थोड़ी बहुत सुविधा प्राप्त हो सकती है।

पं० रामदयाल शर्मा की सभा भङ्ग होने के बाद उन्होंने अधिक विलम्ब करना उचित नहीं समझा। उनका अनुमान था कि अधिक विलम्ब होने पर विरोधियों को अपना दल प्रबल करने का अवसर मिल जायगा। इस कारण विलम्ब को वे एक राजनीतिक भूल समझते थे।

दूसरे दिन ही उन्होंने अपने पक्ष के प्रमुख आदमियों को बुलाया। उन लोगों का भी अनुमान था कि विलम्ब करने पर विरोधियों की संख्या बढ़ सकती है। उन लोगों ने कहा कि हड़ताल कराने का यही सबसे सुन्दर अवसर है। यदि हम लोग अभी चूक जायंगे, तो फिर हमारा सफल होना कठिन है।

उनकी बातों का समर्थन करते हुए रामकुमार प्रसाद ने कहा—"हमारा भी यही मत है। इस समय एक दूसरे को देखकर लोग हड़ताल में सम्मिलित हो जायंगे। भेड़ की तरह एक दूसरे का अनुकरण करना तो मजदूरों का साधारण स्वभाव है। लेकिन इस प्रकार का प्रबन्ध होना चाहिये, जिसमें हड़ताल प्रयत्नपूर्ण हो।"

शिवदयाल नामक अगुआ बोला—"हम लोग भी तो यही चाहते हैं। यदि सभी आदमी काम नहीं छोड़ सके तो हड़ताल करने से लाभ ही क्या होगा?"

रामकुमार प्रसाद—"तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। लेकिन उनके पक्ष के आदमियों को किस प्रकार मिला सकोगे ?"

शिवदयाल—इसकी चिन्ता आप न कीजिये। मैं सब प्रबन्ध कर लूंगा।"

आश्चर्य के साथ रामकुमार प्रसाद ने कहा—"कम से कम मुझे तो वह भेद बतला दो।"

रामकुमार प्रसाद के समीप आकर धीरे से उनके कान में उसने कुछ बातें कहीं। उसकी बातें सुनकर रामकुमार प्रसाद बोले—"तुम्हारा अनुमान बिलकुल ठीक है। इस उपायको काम में लाने से तुम अवश्य सफल होगे। मैं तुम्हारी बुद्धि पर बहुत चकित हूँ।"

शिवदयाल—"हड़ताल की घोषणा कब होनी चाहिये ?"

रामकुमार प्रसाद—"विलम्ब करना ठीक नहीं है। कल ही भगवान का नाम लेकर हड़ताल शुरू कर दो।"

उनकी बातें सुनकर सभी अगुओं ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—"आपकी आज्ञा का पालन अवश्य होगा। भगवान की दया से हम लोग जरूर सफल होंगे।"

थोड़ी देर तक हड़ताल के सम्बन्ध में बातें करके लोग अपने स्थान को लौट आये। चलते समय शिवदयाल ने आवश्यक खर्च के लिए पचास रुपये ले लिये। सन्ध्या समय स्वयं पधारने का वचन देकर रामकुमार प्रसाद ने उन लोगों को विदा किया।

पूर्व निश्चय के अनुसार सन्ध्या समय रामकुमार प्रसाद भी मील के हाते में पहुँचे। वहाँ मजदूरों से मिलकर उन्हें हड़ताल के लिये प्रोत्साहित किया। उनके जाने से लोगों में उत्साह फैल गया। कुछ लोगों ने उसी

समय हड़ताल करने की कसम खाई। लगभग दो घंटे तक दौड़ धूप कर वे अपने घर लौट आये।

दूसरे दिन प्रातःकाल के समय ही हड़ताल की धूम मची। सभी कोई काम छोड़ने का आग्रह करने लगे। झुण्ड के झुण्ड मजदूर एक दूसरे को काम पर जाने से रोकने लगे। हड़ताल का हल्ला मचाकर लोगों के हृदय में उत्साह भर दिया गया था। हड़ताल के प्रबन्धकों को इतनी सफलता की आशा न थी। बात की बात में आधे मजदूर काम पर जाने से रोक लिये गये। भीतर जाने वालों का भी चित्त स्थिर नहीं था। बाहर की अशान्ति ने उनके हृदय की शान्ति को नष्ट कर दिया था। अभी वे काम आरम्भ करने ही वाले थे कि लगभग १६ वर्ष अवस्था का एक लड़का खून से लथपथ कपड़े लिये भीतर चारों तरफ दौड़कर चिल्लाने लगा—"मार दिया! पहरेदारों ने मार दिया!! एक छोटा सा औजार टूट जाने के कारण मेरी जान ले ली। हाय कोई बचाओ! जान गयी!! जान गयी!!!

इतना कह कर वह चारो ओर दौड़ने लगा। उसके शरीर से खून गिर रहा था। उसकी दयनीय दशा देखकर भीतर के मजदूरों में भी उत्तेजना फैली। तीन-चार सौ मजदूर एक स्थान पर इकट्ठे होकर उस लड़के से पूछ ताछ करने लगे। वह उनके पास ही बेचैनी से लेट गया। ऐसा मालूम पड़ने लगा कि उसे मुर्च्छा आ जायगी। शीघ्र ही उसने पीने के लिये जल मांगा। मजदूरों में एक आदमी मलहम-पट्टी बांधना थोड़ा थोड़ा जानता था। उसने उसका घाव बांध दिया, स्थिर होने पर एक मजदूर ने उससे घायल होने का रहस्य पूछा। उसकी बातें सुनकर बड़े ही मर्मभेदी शब्द में लड़के ने उत्तर दिया—"मेरे हाथ से एक औजार टूट कर गिर गया। इसी कारण

पहरेदार ने मारते मारते जान ले ली। वह भुजाली से मुझे काट देना चाहता था। उसने एक बार ही भुजाली चलायी थी कि कई लोगों ने बीच में पड़ कर मेरी जान बचा दी। यह मील नहीं यमपुरी है। तुम लोग ऐसी जगह काम करते हो, धिक्कार है। अभी बाहर तुम्हारे दर्जनों भाई घायल पड़ हैं?"

एक मजदूर ने आश्चर्य से कहा—"क्या गोलमाल करने वालों पर बाहर गोली चली है?"

लड़का—"यह मैं कैसे बतला सकता हूँ? जहां तुम लोग हो, वहीं तो मैं भी हूँ।"

एक मजदूर—"फिर तुम्हें यह कैसे पता लगा कि बाहर दर्जनों आदमी घायल पड़े हैं?"

कराहते हुए लड़के ने कहा—"मुझे घायल करने वाले जमादार ने मारते समय गर्व के साथ कहा था कि बाहर हम लोग दर्जनों आदमी की बोटी बोटी काट आये हैं, तुम्हें काट कर गङ्गाजी में डालते कितनी देर लगेगी?"

एक मजदूर ने सन्देहयुक्त शब्दों में पूछा—"क्या केवल औजार टूट जाने के कारण जमादार ने तुम्हें घायल कर दिया? इस प्रकार की छोटी सी बात के लिये तो ऐसा भयंकर काण्ड कभी नहीं हुआ। अवश्य ही कोई दूसरा कारण होगा।"

क्रोध का भाव दिखलाते हुए लड़के ने कहा—तब मैं झूठ बोलता हूँ। तुम लोगों के विचार से जमादार निर्दोष है और मैं झूठा।"

मजदूर—तुम्हें झूठा कौन कहता है? मेरे कहने का मतलब यह था कि औजार गिरने के साथ साथ हथियार चलाने का कोई कारण और होगा।

दूसरे मजदूर ने उत्तेजित होते हुए कहा—क्या किसी भी कारण के लिये पहरेदार मजदूर की जान ले लेगा ? हम लोगों की जान ऐसी सस्ती नहीं है। बाबू रामकुमार प्रसाद सचमुच बड़े दूरदर्शी नेता हैं। तभी तो ऐसे अत्याचारी मालिकों के दिमाग का पारा ठीक करना चाहते हैं। काम पर आकर हम लोगों ने बड़ी गलती की है। जरूर मील में हड़ताल होनी चाहिये।"

लड़के की अवस्था देखकर प्रायः सभी मजदूर उत्तेजित हो रहे थे। अधिकांश लोगों ने इस बात का समर्थन किया। धीरे धीरे उनकी संख्या बढ़ने लगी और लगभग पांच सौ मजदूर रामकुमार बाबू की जयघोष करते हुए काम छोड़ कर बाहर चले गये। फाटक पर पहरेदारों से उन लोगों की थोड़ी बहुत मुठभेड़ भी हो गयी। परन्तु मामला सङ्गीन होने के भय से मैनेजर साहब ने शीघ्र फाटक खुलवा दिया और बाहर जाने की इच्छा रखने वाले मजदूर हाते से बाहर चले गये।

वहां हड़तालियों ने बड़ी प्रसन्नता के साथ उनका स्वागत किया। भीतर से वे लोग घायल लड़के को भी अपने साथ ले आये थे। वहां उन लोगों ने जुलूस निकाल कर चारो ओर उसे घुमाया। इससे लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। जो लोग काम पर गये थे, उनके सम्बन्धियों का सिर लज्जा से नीचे झुक गया।

भीतर से पांच सौ आदमियों के चले आने के बाद, काम पर डटे रहने वालों की संख्या बहुत थोड़ी रह गयी थी, वे २००-२५० सौ से अधिक न होंगे। इतने थोड़े मजदूरों से मीलका काम चलाना सर्वथा कठिन था। इस कारण लाख विरोध करनेपर भी हड़ताल एक प्रकार से पूरी ही हो गयी।

काम पर आने वाले मजदूरों के बाहर निकलने पर दङ्गे का भय था। इस कारण उस दिन अधिकारियों ने उनके लिये मील में ही ठहरने का प्रबन्ध कर दिया। आवश्यकताके लिये पुलिस का भी खासा प्रबन्ध करलिया गया था।

तेईसवां अध्याय

होनेवाली बात होकर ही रहती है। विधाता के विधान में मनुष्यों का कोई कार्यक्रम हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। दुर्बुद्धि का विषम फल अन्त में भोगना ही पड़ता है। बाबू मलूकचन्द के पारस्परिक संघर्ष के सम्बन्ध में भी ऐसा ही हुआ। यद्यपि इस समय बाबू मेहरचन्द के हृदय में सुबुद्धि का संचार हो चुका था, अपनी गलती समझ कर उन्हों ने हड़ताल के कार्य में रामकुमार प्रसाद को सहयोग देना बन्द कर दिया था। फिर भी विष वृक्ष को फलने फूलने से वे न रोक सके। उसमें फल लगा और बड़ा ही विभत्स।

बाबू मलूकचन्द व्यापारी प्रकृति के मनुष्य थे। अधिक उलझनों से घबराते थे। उन्हों ने कभी झमेले का काम नहीं किया था। बराबर अपने बड़े भाई के बल पर गुलछर्रे उड़ाते थे। उनकी मृत्यु होने पर एकाएक व्यापार का सारा बोझ उनपर आ पड़ा। यदि परिवार का पूर्ण सहयोग रहता तो वे किसी तरह काम सम्हाल लेते। बाबू मेहरचन्द विद्रोही बन बैठे। उनका सहयोग प्राप्त करना भी सरल न था। परन्तु आधिपत्य स्थापित करने की भ्रान्त धारणा के कारण बाबू मलूकचन्द उसे प्राप्त नहीं कर सके। आरम्भ से ही सहनशीलता का भाव दिखलाने से बात शायद इतनी बढ़ने नहीं पाती।

कारण कुछ भी हो; दोष चाहे किसी का भी हो, पर कलह तो अपनी सीमा पार कर चुका था। उसका फलाफल, भोगना भी जरूरी था। व्यापार

के घाटे ने बाबू मलूकचन्द को चिन्तित कर दिया था। परिवार के कलह ने उनकी शान्ति नष्ट कर दी थी। इसके साथ ही मील की हड़ताल का दुखपूर्ण दृश्य उनके सामने उपस्थित हुआ। व्यापारिक जीवन में इस प्रकार की घटना असाधारण नहीं कही जा सकती। मील मालिक को ही तो हड़ताल की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कहावत है कि "हाथीवाले के घर ही हाथी मरता है।"

मनुष्य वीरता के साथ भयंकर से भयंकर घटना का सामना करता है। हड़ताल बाबू मलूकचन्द की स्थिति के आदमी के लिये कोई बात नहीं थी। वे उसे एक साधारण घटना समझ सकते थे। परन्तु उनके मार्ग में एक भयंकर बाधा थी। कठिनाई के समय स्वजनों को अपने विरुद्ध पाकर मनुष्य का साहस घट जाता है। जो व्यक्ति लाखों कठिनाइयों का सामना वीरतापूर्वक कर सकता है, वही स्वजन को अपने प्रतिकूल पाकर साहस खो बैठता है। हड़ताल की सृष्टि में बाबू मेहरचन्द को सम्मिलित देख कर बाबू मलूकचन्द भी धैर्य खो बैठे। दुर्भाग्यवश उन्हें इसका पता न था कि अब हड़ताल के झमेले से उनके भतीजे का कोई सम्बन्ध नहीं है।

प० रामदयालशर्मा तथा स्वामी ज्ञानानन्द की शक्ति पर विश्वास कर वे तो हड़ताल से निश्चिन्त हो गये थे। परन्तु इन लोगों की चेष्टा के प्रतिकूल हड़ताल होते देख कर, उन्हें विश्वास हो गया कि मेहरचन्द के उद्योग के फलस्वरूप हो वे सफल नहीं हो सके। इस विश्वास ने उनके हृदय पर जो चोट दिया वह लिख कर व्यक्त करने की नहीं, अभागों के अनुभव करने की बात है। वे विचलित हो उठे। उन्हें कर्त्तव्य ज्ञान नहीं रहा। विचलित की अवस्था में मनुष्य की बुद्धि भी विकृत हो जाती है। वह

बड़ी चीज को बहुत छोटी तथा छोटी को बहुत बड़ी समझने लगता है। विचलित होते ही हड़ताल का भयंकर रूप उनके सामने अंकित हो गया। इस हड़ताल के साथ साथ उन्होंने अपने पतन का दृश्य देखा।

इस घबराहट में ही आपने भाई साहब की मूर्ति उनके सामने उपस्थित हुई। उस मूर्ति ने फटकारते हुए उनसे कहा—"नीच, बदमाश, मेरे पैदा किये हुए धन पर मौज कर रहा है, राजाओं की तरह आनन्द से दिन बिता रहा है और साथ ही मेरे प्यारे पुत्र को कष्ट देता है। ऐसा करते समय क्या तुम्हें लज्जा नहीं आती? धिक्कार है तुम को! इस हड़ताल के बाद तू कुत्तों की मौत मारा जायगा।"

मूर्ति के इस कथन अथवा हृदय की इस भावना ने बाबू मलूकचन्द को और भी विचलित कर दिया। संसार उन्हें सूना दिखलायी देने लगा। अपने लिये संसार में उन्हें धिक्कार और फटकार के सिवा कुछ दिखलाई ही नहीं देता था। तोते की मोठी आवाज, बिजली पंखे की घड़घड़ाहट तथा मोटर की पों पों आदि में भी उन्हें धिक्कार शब्द प्रतिध्वनित होता दिखलायी देता था। अन्त में वे तंग आ गये इस जीवन से। उन्होंने आत्म-हत्या करने का निश्चय कर लिया। कई बार उन्होंने इस भावना को दबाया। परन्तु अन्त में अपने दुर्भाग्य के सामने उन्हें सिर झुकाना पड़ा। विष खाकर आत्म-हत्या करने का उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया।

रात्रि में सोने के पहले उन्होंने बाबू मेहरचन्द को बुलाया। लगभग एक घन्टे तक उनसे प्रेमपूर्वक बातें करते रहे। व्यवसाय की उन्होंने कोई बात नहीं की। उन्हें मालूम था कि यही उनका अन्तिम वार्तालाप है। इस कारण जानबूझ कर उन्होंने कोई ऐसी बात नहीं की, जिसमें विवाद की

सम्भावना हो। चलते समय उन्होंने किसी जरूरी काम के लिये भोरमें उठते ही उन्हें अपने पास आने को कहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही बाबू मेहरचन्द अपने चाचा से मिलने आये। दुर्भाग्यवश उनसे मुलाकात न हो सकी। हाँ, उनकी लाश सामने जरूर पड़ी हुई थी। यह दृश्य देखकर बाबू मेहरचन्द तो हक्का बक्का हो गये। विरोधी होते हुए भी वे अपने चाचा साहब के प्राणों के शत्रु न थे। इन दिनों तो विरोध का भाव भी बहुत कुछ कम हो गया था। उनके इस दुखपूर्ण अन्तका कारण अपने को ही समझ कर सिर पीटते हुए हतबुद्धि की तरह वे एक किनारे खड़े हो गये। परन्तु इस अवसर पर उन्होंने धैर्य से काम लिया। लाश की परीक्षा करने पर उन्होंने घाव का कोई चिन्ह नहीं पाया। इससे वे समझ गये कि जहर खाकर उन्होंने आत्म हत्या की है। घबराहट से यह खबर बाहर फैल जाती। इस मामले में पुलिस के हस्तक्षेप का भी भय था। इसलिये दरवाजा बन्द कर वे अकेले ही सभी बातों का पता लगाने की चेष्टा करने लगे। खोज ढूढ़ करने पर अपने चाचा साहब के सिरहाने में उन्हें एक पत्र मिला। वह इस प्रकार था:—

प्रिय मेहरचन्द,

आज मैं इस लोक से बिदा होता हूं। खेद का विषय है कि मेरे जीवन का अन्त पापपूर्ण क्रिया के द्वारा हो रहा है। मैं जानता हूं कि आत्महत्या पाप है। मुझे मालूम है कि आत्महत्या करने वालों को मुक्ति नहीं मिलती है। फिर भी मैं उसी पथ का अनुसरण कर रहा हूं। परिस्थिति मुझे आत्महत्या करने के लिये बाध्य कर रही है। तुम हरगिज यह न सोचना कि तुमसे मतभेद रहने के कारण मैं यह जघन्य कार्य कर रहा हूं।

मतभेद तो मनुष्य मात्र का स्वभाव है। विद्वानों ने इसे जागृति का लक्षण कहा है।

कुछ लोग व्यापारिक घाटे को मेरी आत्महत्या का कारण समझेंगे। परन्तु व्यापारी जीवन में तो लाभ के साथ साथ घाटे का भी सामना करना पड़ता है। इसलिये घाटा भी किसी व्यापारी के आत्महत्या का कारण नहीं कहा जा सकता है। फिर मेरी आत्म-हत्या का कारण क्या है? इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक मैंने बहुत विचार किया। परन्तु कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिल सका। अन्त में अपने दुर्भाग्य को ही इसका कारण समझ कर मैं इस विवेचन को समाप्त करता हूं।

मेरे इस दुखपूर्ण अन्त से किसी प्रकार दुखित न होना। तुम्हारे प्रति किसी प्रकार की बुरी भावना लेकर मैं इस संसार से नहीं जा रहा हूं। तुमने मेरा विरोध जवानी के उमंग में आकर किया था, इस उम्रमें किया गया कार्य सर्वथा क्षम्य होता है। भगवान तुम्हारा मंगल करे।

अधिक कुछ लिखने की मैं आवश्यकता नहीं समझता। व्यापार का सञ्चालन बुद्धिमत्तापूर्वक करना। भाई साहब ने बड़े परिश्रम से इतना बड़ा काम बढ़ाया था। यदि उसका सञ्चालन उचित रीति से नहीं हुआ तो उनकी आत्मा को कष्ट होगा।

मील की हड़ताल का कोई निपटारा कर लेना। मजदूरों के बल पर ही हम लोग मुनाफा उठाते हैं। उन्हें सुखी रखना हम लोगों का परम कर्त्तव्य है।

पं० रामदयाल शर्मा नामक सज्जन हम लोगों के बड़े ही शुभचिन्तक हैं। मजदूरों से भी उनकी पूरी सहानुभूति हैं। उनकी सहायता तथा परामर्श से ही हड़ताल का निपटारा कर लेना।

एक व्यक्ति के सामने मैं क्षमा प्रार्थी हूं। अज्ञानतावश मैं प्रारम्भ में उसका वास्तविक मूल्य नहीं समझ सका था। उसे अपने यहां रखने के कारण मैं तुम्हें भी बराबर भला बुरा कहता था। तुम समझ गये होगे कि मेरा मतलब रत्नेश्वर प्रसाद से है। मुझे खेद है कि इस समय हमलोगों के बीच वे नहीं हैं उन्हें खोजने की चेष्टा करना। यदि कहीं पता लग जाय तो भाई की तरह उन्हें अपने घर में रखना। वे तुम्हारे सच्चे शुभचिन्तक हैं, उनके द्वारा मंगल के सिवा किसी प्रकार का अमंगल भी नहीं हो सकता। यदि कभी उनसे मुलाकात हो तो मेरी ओर से उनसे क्षमा मांग लेना।

आत्म हत्या की बात छिपाने की चेष्टा करना। पुलिस को पता लग जाने से लाश की बड़ी दुर्गति होगी। तुम लोगों को भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।

चाची को सन्तुष्ट रखने की चेष्टा करना। मैं उन्हें पिता के घर जाने से अन्ततक रोकता रहा। यदि मेरी बात मान कर वह रुक गयी होती तो अन्तिम समय में उन से अवश्य मुलाकात हुई होती। खैर उन्हें बराबर धैर्य दिलाते रहना।

बहू से भी मेरा प्यार कहना। आजन्म सौभाग्यवती रहने का मैं उसे आशीर्वाद देता हूँ। उसके सुख की ओर बराबर ध्यान रखना। वह हमारे परिवार की लक्ष्मी है।

अब बिदा होता हूँ। विष का प्रभाव आरम्भ हो चला है। विष खाने के बाद मैं यह पत्र लिखने बैठा था। बड़ी कठिनाई से इतना लिख सका हूँ। अब कलम कांपती है। लिखना भी शेष हो चुका है।

एक दो घंटे के भीतर ही मैं सम्भवतः सदा के लिये शान्त हो जाऊंगा, इस दुनिया के झंझटों से मुझे छुटकारा मिल जायगा। अब अन्तिम आशीर्वाद स्वीकार करो। दुनिया संकट पूर्ण है। खूब सम्हल कर चलना। अपने और पराये की परख करने में किसी प्रकार की भूल न करना। इस परख की सफलता पर ही जीवन की सफलता निर्भर करती है। जो व्यक्ति तुम्हें अपना समझे उसे तुम भी अपना समझना।

खैर, भाई साहब की पवित्र धरोहर उनकी निर्मल आत्मा के भरोसे छोड़ कर अब शान्त होता हूं। मेहरचन्द! बचपन में तुम बड़ी प्रसन्नता के साथ हमारी गोद में खेलते थे। मैं भी तुम्हारा भोलापन देख कर प्रेम से उन्मत्त हो जाता था। आज तुम्हारी वही मोहनी मूर्ति अपने हृदय के अन्दर रख कर मैं बिदा होता हूं। बस।

तुम्हारा

मलूकचन्द—

पत्र पढ़ कर मेहरचन्द का सिर चक्कर खाने लगा। अर्द्ध मुर्च्छित अवस्था में वह थोड़ी देर तक सिर पर हाथ रखे जमीन पर बैठा रहा। दरवाजा बन्द था। बाबू मलूकचन्द की मृत्यु का पता इस समय तक और किसी को नहीं लगा था। मेहरचन्द बुद्धिमान आदमी थे। इस समय उन्हों ने धैर्य से काम लेना ही उचित समझा। यदि वे घबराहट दिखलाते तो आत्म हत्या की बात लोगों को मालूम हो जाती। ऐसा होने से उन्हें कठिनाई में पड़ना पड़ता और चाचा साहब की भी अन्तिम आज्ञा का पालन नहीं होने पाता।

साहस पूर्वक उन्होंने तुरत अपने परिवार के डाक्टर को फोन द्वारा शीघ्र

बुलाया। बाहर चाचा साहब की भयंकर बीमारी की बात को घोषित कर दी। आधा घंटे के भीतर ही डाक्टर साहब आ पहुंचे। आते ही फाटक पर उन्हें समाचार मिला कि हार्ट फेल करने के कारण बाबू मलूकचन्द की मृत्यु हो गयी। वे बाबू मेहरचन्द से बातें कर बाहर ही बाहर चले गये।

बड़ी धूमधाम के साथ बाबू मलूकचन्द की अर्थी निकाली गयी। हजारों रुपये गरीबों को दान दिये गये। सैंकड़ों आदमी दाह क्रिया के समय उपस्थित थे। नगर के प्रमुख समाचार पत्रों ने भी एक करोड़पति के आकस्मिक मृत्यु का समाचार प्रमुख स्थान में प्रकाशित किया।

—o—

चौबीसवाँ अध्याय

बाबू मलूकचन्द की मृत्यु से समूचे नगर में सनसनी फैल गयी। उनकी मृत्यु सर्वथा आकस्मिक थी। बीमारी की खबर सुनने के पहले ही लोगों ने मृत्यु का समाचार सुना। सुनने वाले तो आश्चर्यमें पड़ गये। बड़े घर की बात थी। मुंह खोलकर किसी को बोलने का साहस तो नहीं हुआ, पर भीतर ही भीतर इस बात की चर्चा होने लगी कि जरूर इसमें कोई न कोई रहस्य है। बाबू मेहरचन्द के प्रेमी आत्महत्या का सन्देह करने लगे और उन के विरोधी इस बात का प्रचार करने लगे कि बाबू मेरहचन्द ने बिष खिला कर चाचा की हत्या कर डाली है।

कोई बात फैलने में बिलम्ब ही कितना लगता है? तुरत विष खिलाने

की बात का प्रचार हो गया। बाबू मेहरचन्द के कानों में भी यह स माचार पहुंचा। जीवित काल में भले ही चाचा साहब से उनका गहरा मतभेद हो; पर मृत्यु के बाद उस मतभेद का रहना किसी प्रकार सम्भव नहीं था। उनकी आत्महत्याने उनके हृदय पर गहरा प्रभाव डाला था। अपने को वे उस दुख-पूर्ण कार्य के लिये जिम्मेदार समझते थे। अपने अन्तिम पत्रमें बाबू मल्लकचन्द ने उनपर कोई दोषारोपण नहीं किया था, फिर भी उनका दोष सर्वथा स्पष्ट था। भले ही गम्भीरता पूर्वक बिचार करने पर आत्महत्या का कारण किसी का दोष न कहला कर गलतफहमी का रूप धारण करे; फिर भी बाबू मेहरचन्द इस दुखपूर्ण घटना से अपने घनिष्ट सम्बन्ध को अस्वीकार नहीं कर सकते थे। चाचा की मृत्यु का अपने को कारण समझ कर वे बड़े ही दुखी हुए। उनका कोमल हृदय बार बार अपने को धिक्कारने लगा। जो हृदय इडन गार्डनमें एक अनजान व्यक्ति का शोचनीय अन्त होते देख कर विचलित हो गया था और उसकी रक्षा के लिये प्राणपण से उद्योग किया था, वही अपने सगे सम्बन्धी के इस शोकजनक मृत्यु की चोट किस प्रकार वर्दाश्त करता।

बहुत शीघ्र ही विष खिलाने की बात का प्रचार हो गया। अपने ऊपर यह कलंक लगते देखकर बाबू मेहरचन्द को कितना दुख हुआ यह बतलाया नहीं जा सकता। मृत्यु शोक के साथ साथ कलंक के प्रचार ने इन्हें विचलित कर दिया। वे तो एक प्रकार से पागल हो गये।

बाबू मेहरचन्द की धर्म पत्नी लक्ष्मी सती साध्वी स्त्री थी। पति कैसा भी हो, वह पति है, पूजनीय है; इस प्राचीन सिद्धान्त का वह समर्थक थी। अल्हड़पन के कारण बाबू मेहरचन्द ने उसे बाहुत कष्ट दिया था। फिर भी वह उनपर पूरी भक्ति रखती थी। उसके रोम रोम में उनकी मूर्ति रमा करती थी।

स्त्रियां सभी कुछ सहती हैं और सह सकती हैं, लेकिन अपने पति का अपमान वह नहीं बर्दाश्त कर सकती। किसी के मुखसे अपने पतिके प्रति व्यवहृत कड़े अथवा अपमान पूर्ण शब्द से उन्हें अपार कष्ट होता है। विष खिलाने की बात लक्ष्मी के कानोंमें भी पहुंच चुकी थी। इस चर्चा को सुनकर वह तो सहम गयी। उसे लोगोंकी विवेक-बुद्धिपर दया आने लगी। ईश्वर को सृष्टि का दोषपूर्ण रूप उसकी आंखों के सामने नाचने लगा। चन्द्रमा की शीतलता या सूर्य्यकी चमकसे उसका विश्वास जाता रहा। वह पूर्ण बुद्धिमती थी। अपने पति के हृदय का उसने काफी अध्ययन किया था। वह जानती थी कि लाख अवगुणों के रहते हुए भी वे वैसा जघन्य काम नहीं कर सकते हैं। इस अफवाह की सत्यता में उसे सन्देह ही नहीं पूर्ण अविश्वास था। फिर भी लोकापवाद को वह किस प्रकार रोक सकती थी? अपने पति की निन्दा सुनकर वह दिल मसोस कर रह जाती थी।

बड़ी कठिनाई से दो दिन व्यतित हुए। घोर चिन्ता के कारण बाबू मेहरचन्द भी अस्वस्थ हो गये थे। चाचा साहब की आत्म-हत्या, मील की हड़ताल तथा लोकापवाद की सम्मिलित चोट वे बर्दाश्त न कर सके। बेचारी लक्ष्मी और भी विपत्ति में पड़ी। कर्मचारियों के द्वारा श्राद्ध आदि का प्रबन्ध होने लगा। ३-४ रिश्तेदार भी आ धमके थे। पर उन पर लक्ष्मी का विश्वास नहीं था। वह जानती थी कि स्वार्थ साधन के सिवा वे उस की कोई भलाई नहीं कर सकते हैं। बाबू मेहरचन्द तो सुध बुध ही खो बैठे थे। उनकी अवस्था प्रत्येक क्षण संगीन होती जाती थी। डाक्टरों का बराबर तांता ही लगा रहता था। बेचारी लक्ष्मी भविष्य की बातें सोचकर रात दिन रोया करती थी।

संध्या समय एकान्त में बैठ कर वह अपने अन्धकार पूर्ण भविष्य के सम्बन्ध में विचार कर ही रही थी कि दासी ने आकर नम्रता पूर्वक कहा—"कुछ जरूरी काम के कारण एक आदमी आप से मिलना चाहता है।"

लक्ष्मी—"क्या तुम उसे पहचानती हो?"

दासी—"मैं उसे पहचानता तो नहीं, पर उसने आप के नाम पत्र दिया है।" इतना कहते हुए दासी ने अपनी मालकीन के हाथ में एक छोटा सा पत्र दिया। वह इस प्रकार था :—

प्रिय बहन,

इस विपत्ति के समय आप का साथ देना मैं अपना परम धर्म समझता हूँ। मैं आप से मिलने के लिये बाहर खड़ा हूं। कृपया मिलनेका प्रबन्ध कीजिये।

आपका—

रत्नेश्वर

पत्र पढ़ते ही लक्ष्मी को प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा। वास्तव में इस समय वह रत्नेश्वर प्रसाद को ही याद कर रही थी। उसका हृदय कह रहा था कि इस मौके पर उन से बहुत बड़ी सहायता मिलती। एकाएक उनके आगमन का समाचार पाकर उसका प्रसन्न होना सर्वथा स्वभाविक था। उसने दासी को तुरन्त उन्हें बुलाने की आज्ञा दी। आज्ञा पाकर दासी बुलाने के लिये चली गयी।

पर्दे के भीतर रहते हुये भी लक्ष्मी यथेष्ट स्वतंत्रता का उपभोग करती थी। कामकाज पड़ने पर वह निसंकोच रूप से बाहर के लोगों से भी बातें करती थी। इस कारण रत्नेश्वर प्रसाद से मिलने के लिये उसे किसी विशेष

कठिनाई का सामना न करना पड़ा। शीघ्र ही दासी उन्हें वहां पहुँचा कर बाहर चली गयी। वे विचित्र वेष में थे। यदि पहले उसे पत्र नहीं मिला रहता तो शायद वह भी उन्हें नहीं पहचान पाती। एक गन्दी धोती, फटा कुर्ता तथा एक छोटे अंगोछेके सिवा उनके बदन पर कुछ भी नहीं था। कपड़े में कालिख लगी हुई थी। इस से यह स्पष्ट रूप से विदित होता था कि ये किसी मिल के मजदूर हैं। उन्हें इस रूपमें देख लक्ष्मी का कलेजा फट गया। वह फूट फूट कर रोने लगी। उसे इस प्रकार बिचलित होते देख रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"बहन! घबराने की कोई बात नहीं, विपत्ति मनुष्य पर ही आती है और मनुष्य ही उसे सहता है। धैर्य पूर्वक विपत्ति का सामना करना ही सच्ची वीरता है। तुम धैर्य रक्खो! भगवान कठिनाइयों को दूर कर देगा।"

लक्ष्मी—"विपत्ति मनुष्य ही सहता है, यही बात सोच कर मैं अब तक किसी तरह जीवित हूँ। लेकिन आपका भयंकर रूप तो मुझसे तो देखा नहीं जाता है।

मुस्कराते हुए रत्नेश्वर प्रसाद ने कहा—"पहचाने जाने के भय से जान-बूझ कर मैं ने यह वेष बनाया है। आप किसी बात की चिन्ता न करें।"

लक्ष्मी—"आप सकुशल तो हैं? न मालूम आप क्यों इस प्रकार हम लोगों को छोड़ कर चले गये? पागल की बातों पर भी कोई ध्यान देता है! वे तो एकदम पागल हो गये हैं। आप के लिये वे भी बहुत अफ-सोस करते थे। ५-७ दिनों तक तो उन्होंने किसी से खुल कर बातें भी नहीं की। आप का पत्र मिलने पर किसी तरह उन्हें शान्ति मिली।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इस समय इन बातों की आवश्यकता नहीं है। मेरी

कहानी तो पीछे होगी ही। मैं बाबू मेहरचन्द की बीमारी का हाल जानना चाहता हूँ।"

लक्ष्मी—"क्या आपको उनकी बीमारी का पता है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मैं इतना कृतघ्न नहीं हूं कि अपने सच्चे शुभचिन्तक तथा प्राणरक्षक के सुख दुख का ख्याल नहीं रखूं। मुझे सभी वार्ता का पता है।"

लक्ष्मी—"सभी बातें जानने हुए भी आप इतने दिनों तक हम लोगों से अलग क्यों रहे?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"परिस्थिति को देख कर मैंने निश्चय कर लिया था कि समीप रहने की अपेक्षा अलग रहकर ही मैं आप लोगों की अधिक सेवा कर सकूँगा। इस कारण मुझे अलग होने के लिये बाध्य होना पड़ा।"

लक्ष्मी—"आप शायद विश्वास न करेंगे, लेकिन आपके लिये हमलोग कितने चिन्तित हुए थे, यह तो हम लोग ही जानते हैं। वे तो एक प्रकारसे अर्द्ध-पागल का जीवन व्यतीत करते थे।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मेरे प्रति आप लोगोंका इतना प्रेम है, यह मेरे लिये बड़े ही गौरव की बात है। लेकिन इस चर्चा को इस समय मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता। बाबू मेहरचन्द की अवस्था का समाचार जानने के लिये मैं व्याकुल हो रहा हूं। आप कृपया मेरी यह व्याकुलता दूर कीजिये।"

लक्ष्मी—"उनकी अवस्था विशेष अच्छी नहीं है, डाक्टरों का कहना है कि केवल चिन्ता के कारण ये अस्वस्थ हो गये हैं। भीतर कोई संगीन बीमारी नहीं है। जब आप सभी बातों से परिचित हैं, तो आप को यह भी मालूम होगा कि हमारे शत्रुओं ने किस प्रकार की बातें फैला रखी हैं?

क्या आप को विश्वास होता है कि उन्होंने चाचा साहब को विष खिला दिया होगा ?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"दुनियाँ बड़ी विचित्र है। यहां प्रत्येक श्रेणी के आदमी निवास करते हैं। शत्रुओं की भलाई तो हम लोगों को बदनाम करने में ही है। फिर यदि वे इस तरह की कहानी फैलाते हैं, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। हम लोगों को इससे विचलित नहीं होना चाहिये। अन्तमें सत्यका वास्तविक रूप दुनियांके सामने जरूर आता है। कोरी दलील तथा आन्दोलनके सिवा कोई सत्य पर पर्दा नहीं डाल सकता है। बाबू मेहरचन्द ने इन बातों को आवश्यकता से इतना अधिक महत्व क्यों दिया, यह समझने में मैं सर्वथा असमर्थ हूं। उनके जैसे बुद्धिमान आदमी को तो विपत्ति के समय पूर्ण धैर्य से काम लेना चाहिये।"

लक्ष्मी—"उनका हृदय बड़ा ही कोमल है। बड़ी जल्दी घबराते हैं। उनका भी क्या दोष है? विपत्ति की भी सीमा होती है। एक साथ ही इतनी विपत्तियों को मनुष्य कैसे बर्दाश्त कर सकता है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"यह बात तो ठीक है। परन्तु विपत्ति के समय धैर्य खोने से और भी हानि होती है।"

लक्ष्मी—"हानि की तो बात ही है। इनकी बीमारी के कारण मील का भी कोई निपटारा नहीं होने पाता है।"

रत्नेश्वर प्रसाद—मील की आप कोई चिन्ता नहीं कीजिये, हम लोग हड़ताल मिटाने का उद्योग कर रहे हैं।"

आश्चर्य के साथ लक्ष्मी ने कहा—"आप किस तरह मील की हड़ताल रोक सकेंगे?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"जिस दिन से मैं यहां से गया हूँ, बराबर हड़ताल के संकट को दूर करने की चेष्टा कर रहा हूं। आप विश्वास रखिये, मैं एक क्षण के लिये भी आप को सेवा से विमुख नहीं हुआ हूं।"

लक्ष्मी—"आपकी सहायता का हम लोगों को बराबर भरोसा है। आप सेवा की बात कहकर मुझे क्यों लज्जित कर रहे हैं? यहांसे जाकर क्या आप किसी कर्मचारी के रूप में मील में भर्ती हो गये हैं?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"यह लम्बी कहानी है। इस समय मैं कुछ बतलाना नहीं चाहता। इन बातों को जानने के लिये आप कृपया विशेष आग्रह नहीं करें।"

लक्ष्मी—"खैर, आप हड़ताल का संकट किस प्रकार दूर कर सकेंगे?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आपने शायद पं० रामदयाल शर्मा का नाम सुना होगा। वे मजदूरों के बड़े ही शुभ-चिन्तक हैं। उन्हें पता लग गया है कि इस हड़ताल में रामकुमार प्रसाद की स्वार्थ लीला के सिवा और कोई तत्व नहीं है। इस कारण हड़ताल रोकने का वे आरम्भ से ही प्रयत्न कर रहे हैं। इसके साथ ही संयोगवश उन्हें स्वामी ज्ञानानन्द नामक एक संन्यासी मिल गये हैं। मजदूरों का उनपर काफी प्रभाव है। वे भी हड़ताल रोकने में पं० रामदयाल शर्मा का साथ दे रहे हैं। मैं भी किसी न किसी रूप में उन लोगों के इस उद्योग में बराबर उनके साथ रहता हूं।"

लक्ष्मी—"मैं पं० रामदयाल शर्मा तथा स्वामीजी के सम्बन्ध में बहुत कुछ सुन चुकी हूँ। मजदूरों पर स्वामीजी बड़ा प्रभाव है, यह भी मैं जानती हूँ। हम लोगों का विश्वास था कि स्वामीजी के उद्योग के कारण हड़ताल न हो सकेगी। परन्तु हड़ताल के श्रीगणेश ने हम लोगों को सर्वथा निराश

कर दिया। यदि हड़ताल न होती, तो सम्भवत: हम लोगों पर इस प्रकार विपत्ति नहीं आने पाती।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"आपका अनुमान बिलकुल ठीक है। हम लोगों ने हड़ताल रोकने का पूरा प्रबन्ध कर लिया था। हमारा पूर्ण विश्वास था कि किसी प्रकार हड़ताल न हो सकेगी। अधिकांश मजदूर हम लोगों के पक्ष में थे। हड़ताल के प्रारम्भ के समय आधे से अधिक मजदूर काम पर गये थे और हम लोगों का विश्वास था कि बाहर के मजदूरों में भी अधिकांश काम पर चले जायंगे। लेकिन विधाता के विधान के सामने किसी का कोई वश नहीं चलता है। शत्रुओं की एक चालने ही हम लोगों की आशा तथा उद्योग पर पानी फेर दिया।"

आश्चर्य के साथ लक्ष्मी ने कहा—वह कौन सो चाल थी।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"यह कलियुग है। इस जमाने में कुटिलता के वृक्ष में ही जल्दी फल लगता है। न्याय तथा धर्मके फूलने फलने में बहुत विलम्ब होता है। हम लोगों के उद्योग के सम्बन्ध में भी ऐसा ही हुआ। रामकुमार प्रसाद बड़ा ही कूट नीतिज्ञ है। अपना पक्ष निर्बल देखकर उसने षड्यंत्र की एक जाल विछायी। आपने सुना होगा कि हड़ताल के प्रारम्भ में मील के किसी जमादार के द्वारा एक लड़के के घायल किये जाने के कारण भीतर के भी अधिकांश मजदूर उत्तेजित होकर बाहर चले गये।"

लक्ष्मी—"हां, मुझे यह मालूम है। घायल करने वाले जमादार को खोजने की बड़ी चेष्टा की गयी, पर किस के द्वारा यह काण्ड हुआ, इसका कोई पता नहीं लग सका।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"पता भी किस प्रकार लग सकता है? यह सब

शत्रुओं का षड्यंत्र था। जानबूझ कर अपने दलके कुछ आदमियों को उन लोगों ने उत्तेजना फैलाने के लिये भीतर घुसा दिया था। वह लड़का भी उन्हीं के दल का था। उत्तेजना फैलाने के उद्देश्य से उस के ही किसी आदमी ने उस लड़के की बाँह में छुरा घुसेड़ दिया। कुछ रुपये देकर वह साहसी लड़का पहले ही इस काम के लिये राजी कर लिया गया था। उसे घायल कर जमादार के मत्थे इसका दोष मढ़ा गया। इससे मजदूर स्वभावतः ही उत्तेजित हो गये। इसके फल स्वरूप शत्रुओं की इच्छा पूरी हुई और वे हड़ताल कराने में सफल हो गये।"

लक्ष्मी—"तब तो रामकुमार प्रसाद ने बड़ी कूटनीतिज्ञतासे काम लिया।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इसमें क्या सन्देह है? फिर भी घबराने की कोई बात नहीं है। हम लोग शीघ्र ही स्थिति को काबू में ले आवेंगे। दुष्टोंकी दुष्टता अधिक दिनों तक नहीं चल सकती है। अब मैं चलता हूं। अवसर मिलने पर फिर मिलूंगा।"

लक्ष्मी—"अब आप कहाँ जायंगे? मैं आपको कहीं भी नहीं जाने दूँगी। आपको मेरे सिर की सौगन्ध है। इस विपत्ति में हम लोगों को नहीं छोड़िये।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इस जिन्दगी में क्या मैं आप लोगों को छोड़ सकता हूँ। लेकिन इस समय आप हठ नहीं कीजिये। कृपया बाबू मेहरचन्द से भी मेरे आगमन की बात नहीं कहियेगा। इस समय मेरे प्रकट होने से मेरा सारा उद्योग निष्फल हो जायगा। उचित समय आने पर मैं स्वयं प्रकट हो जाऊँगा। इस समय आप कृपया हठ नहीं कीजिये।"

लक्ष्मी बुद्धिमती महिला थी। उसने ठहरने के लिये विशेष हठ नहीं किया। चलते समय वह उन्हें खर्च के लिये एक सौ रुपया देने लगी। परन्तु रुपये की कोई आवश्यकता नहीं रहने के कारण रत्नेश्वर प्रसाद ने रुपया नहीं लिया। लक्ष्मी बेबस थी। अश्रुपूर्णनेत्रों से उसने उन्हें विदा किया।

———

पच्चीसवाँ अध्याय

लगभग एक सप्ताह से फतेहचन्द काटन मिल्स में हड़ताल जारी है। प्रारम्भ में आंशिक हड़ताल ही हुई थी। पर रामकुमार प्रसाद के दल के लोगों की चालाकी ने उसे एक प्रकार से पूर्णता का रूप दे दिया। फिर भी मील में लगभग २५० मजदूर बच रहे थे। वे लोग स्वामी ज्ञानानन्द के पक्के भक्त थे। उनके आदेशानुसार उन लोगों ने हड़ताल आन्दोलन में भाग नहीं लिया और उत्तेजना का अवसर उपस्थित होने पर भी पूर्णशान्त रहकर अपने कार्य पर डटे रहे। ऐसे थोड़े लोगों से मीलका काम तो पूरी तरह से नहीं चलाया जा सकता था; फिर भी उन लोगों के कार्य पर डटे रहने के कारण हड़ताल पूर्ण न कहला कर आंशिक ही कही जायगी। इन लोगों के बाहर जानेसे दंगे का भय था। इस कारण मील के आधिकारियों ने उनके ठहरने का भीतर ही प्रबन्ध कर दिया।

बाबू मलकचन्द की मृत्यु के समाचार ने हड़ताल के प्रबन्धकों के मार्ग में एक बाधा खड़ी कर दी। यह समाचार सुनकर कुछ मजदूरों के हृदय में स्वामी-भक्ति का भाव उमड़ आया। इस अवस्था में हड़ताल जारी रखना उन्होंने उचित नहीं समझा। परन्तु रामकुमार प्रसाद अपने काममें पूरे दक्ष थे। उन्होंने यह कह कर मजदूरोंका हौंसला और भी बढ़ा दिया कि अपनी मांग पर डटे रहने का यही उपयुक्त अवसर आया है, इस अवसर पर डटे रहने से हम लोगों को पूरा लाभ होगा। इस व्याख्याने मजदूरों का भाव बदल दिया। वे हड़ताल पर डटे रहने के लिये तैयार हो गये।

इस प्रकार हड़ताल का क्रम जारी रहा। परन्तु समय व्यतीत होने के साथ साथ मजदूरों की कठिनाइयां भी बढ़ती गयीं। खर्चे के लिये उनके पास रुपये नहीं थे, बेचारे मजदूरों की तो बराबर लूट लाओ और कूट खाओ की अवस्था रहती है। उनके पास अधिक रुपये रह भी किस प्रकार सकते हैं! रामकुमार प्रसाद ने प्रतिज्ञा की थी कि आवश्यकता पड़ने पर वे उनकी सहायता करेंगे। इसी प्रतिज्ञा के आधार पर मजदूरों ने हड़ताल का श्रीगणेश किया था।

आर्थिक सहायता की आवश्यकता पड़ने पर उन लोगों ने अपने अगुओं को उनके पास इस कार्य के लिये भेजा। दो-एक दिन तो वे आज कल करके टालते रहे। अब कुछ मजदूरों की अवस्था एकदम खराब हो चली थी। उनके सामने भूखों मरने का प्रसंग उपस्थित हो गया था। इस कारण आर्थिक सहायता के लिये वे विशेष दबाव डालने लगे। मील पहुँच कर बाबू रामकुमार प्रसाद ने इस बात का कोई फैसला करने का बचन दिया था।

चार बजते ही लोग बड़ी उत्सुकता से उनके आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। लगभग वे पांच बजे वे मोटर पर उनकी देख रेख करने के लिये आ पहुंचे। मजदूरों ने जयजयकार करते हुए चारो ओर से उन्हें घेर लिया। थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें करने के पश्चात मजदूर उन्हें अपने दुख की कहानी सुनाने लगे। कैलाशपति ने कहा—"हुजूर, अब तो हम लोगों के पास खाने पीने का सामान नहीं रहा। हड़ताल के सबब से बनिया भी उधार नहीं देता। इस समय सहायता नहीं मिलने से हम लोगों की अवस्था बड़ी खराब हो जायगी।"

उसकी बात खतम होते ही दीनानाथ ने कहा—"मेरे पास तो कलसे

ही कोई सामान नहीं है। कल तो एक मित्र से कुछ लेकर काम चलाया, लेकिन आज का तो भगवान ही मालिक है।"

रामकुमार प्रसाद—"तुम लोगों ने अन्याय और अत्याचार के बिरुद्ध युद्ध जारी कर रक्खा है। युद्ध के समय कठिनाइयों का सामना करना ही पड़ता है। यदि कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़े तो युद्ध और साधारण अवस्था में भेद ही क्या रह जायगा? तुम लोगों को भी कठिनाइयों से किसी प्रकार घबराना नहीं चाहिये। कठिनाइयों के द्वारा ही तुम्हें अपने अधिकार मिलेंगे। कष्ट सहन ही सफलता का सबसे सुन्दर मार्ग है।"

कैलाशपति—"आपका कहना ठीक है। लेकिन कष्ट की भी तो सीमा होती है। भगवान ने तो हमलोगों को कष्ट सहने के लिये ही पैदा किया है। कष्ट के बदले सुख से कब हम लोगों का जीवन व्यतीत होता है! लेकिन इस मौके पर तो आपको सहायता करनी ही पड़ेगी। हड़ताल के पहले आपने सहायता का बचन भी दिया था। सम्भव है कि भूखों मरने का प्रसंग उपस्थित होने पर हड़तालियों में विशेष उत्तेजना फैल जाय और वे परस्पर अथवा मील के अधिकारियों के साथ ही दंगा कर बैठें। आपको इस पहलू पर भी बिचार करना चाहिये।"

रामकुमार प्रसाद—"मैं जानता हूँ कि इस समय आर्थिक सहायता की सबसे बड़ी आवश्यकता है। फिर भी ऐसे अवसरों पर सहायता का मार्ग बड़ा ही कठिन हो जाता है। यदि गिने गिनाये लोगों को सहायता देनी रहे, तो बड़ी आसानी से यह कार्य किया जा सकता है। लेकिन यहां तो हजारों आदमी का प्रश्न है। तुम लोग खुद ख्याल कर सकते हो कि यह कार्य कितना कठिन है।"

कैलाशपति—"कठिनाई की बात मैं अवश्य स्वीकार करता हूं। लेकिन कठिनाई तो दोनों ओर ही है। क्या आप यह उचित समझते हैं कि मजदूर भूखों मरें?"

रामकुमार प्रसाद—"भूखों मरने की कौनसी बात है? अब चार पांच दिनों के भीतर ही कोई न कोई फैसला हो जायगा। अधिक दिनों तक मील बन्द रखने में मालिकों को बड़ी हानि होगी।"

दीनानाथ—"अभी तो समझौते की बात चली भी नहीं है। बात चलने पर कहीं ८-१० दिनों में कोई निपटारा हो सकेगा। इस समय इस सम्बन्ध में कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती है। हम लोगों को कई हड़तालों का अनुभव है। हुजूर! बचपन से ही तो मीलों में काम कर रहे हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"तुम लोगोंको सभी बातोंका पता है ही। हड़तालके दिनों में क्या कठिनाइयों का सामना करना नहीं पड़ता है?"

दीनानाथ—"इस बात को अस्वीकार कौन कर सकता है? लेकिन उन्हें नेताओं के द्वारा आर्थिक सहायता भी दी जाती है।"

रामकुमार प्रसाद—"मैं भी तो अर्थ संग्रह करने की चेष्टा कर रहा हूँ। आज दिन भरमें कमसे कम पांच-सात आदमियोंके यहाँ गया। ऐसे लोगोंकी खुशामद की, जिनसे बोलना भी पाप है। लेकिन कहीं भी कुछ नहीं मिला। हाँ, दो-तीन जगहों से कुछ मिलने का बचन अवश्य मिला है। आशा करता हूँ कि तीन-चार दिनों में तुम लोगों की कुछ सहायता कर सकूँगा।"

कुछ उत्तेजित होते हुए कैलाशपति ने कहा—"कई दिनों से आप आज कल पर बात टाल रहे थे। आज तो रुपये के बिना काम नहीं चल

सकता है। गरीबोंके बाल बच्चे भूखों मर जांयगे। उन्हें आशा देकर निराश करना ठीक नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—" मैं इस बात को समझता हूं। लेकिन रुपये का काम तो रुपये से ही चलेगा। किसी प्रकार तीन-चार दिन व्यतीत करो। मैं कोई न कोई प्रबन्ध कर तुम लोगों की अवश्य सहायता करूँगा। आज अपने पास से मैं २५०) लाया हूं तुम लोग इसे अपन बीच बांटलो।"

कुछ आश्चर्य के साथ दीनानाथ ने कहा—"२५०) रुपये से क्या होगा? इसे बाँटने पर तो चार आना भी किसी के हिस्से में नहीं आवेगा। इस समय तो कम से कम पांच हजार रुपया चाहिये।"

रामकुमार प्रसाद—"पांच हजार ही क्यों? हड़ताल को सम्मान पूर्वक अन्त करने के लिये कम से कम दस हजार रुपये की आवश्यकता पड़ेगी। मैं इसका प्रबन्ध कर रहा हूं। अपने कर्तव्य से मैं किसी प्रकार अनजान नहीं हूं। इन रुपयों में से वे लोग एक एक रुपया ले लें जिन्हें सबसे अधिक आवश्यकता हो।"

कैलाशपति—"आवश्यकता किसे नहीं है? सभी लोग तो भूखों मर रहे हैं। इतना थोड़ा रुपया लेकर हम आपस का झगड़ा नहीं खरीदना चाहते हैं। आप कृपया यह रुपया भी लेते जाइये। यदि हो सके तो सहायता कीजियेगा नहीं तो हम लोगों के रक्षक भगवान ही हैं। उन के सिवा गरीबों का दूसरा रक्षक कौन होता है?"

अन्य कई मजदूरों ने भी इसी प्रकार की बात कही। इन बातों को सुनकर बेचारे रामकुमार प्रसाद कुछ लज्जित तो अवश्य हुए। फिर भी

अपने काम में वे पूरे चतुर थे। हजारों असन्तुष्ट मजदूरों के बीच अधिक देर तक ठहरना उचित नहीं समझ कर वे नोटों का बंडल जेब में डालते हुए शीघ्र ही सहायता देने की प्रतिज्ञा कर वहाँ से रवाना हुए।

बाबू रामकुमार प्रसाद के जानेके बाद मजदूरों में और भी असन्तोष बढ़ा। आज उन्हें सहायता मिलने की पूरी आशा थी। पर उन्हें सर्वथा निराश होना पड़ा। वे इसे विश्वासघात समझने लगे। थोड़े थोड़े लोगों की टोली बनाकर वे अपने भविष्य के सम्बन्ध में नाना प्रकार की आलोचना करने लगे।

हड़ताल के दिनों में मील के अधिकारियों की ओर से भी मजदूरों को दबाने की हर प्रकार से चेष्टा की जाती है। बाबू मलूकचन्द की मृत्यु के कारण हड़ताल से उत्पन्न होने वाली परिस्थिति का सामना करने की सारी जिम्मेदारी मील के बड़े मैनेजर मि० वाटसन पर ही आ पड़ी। बहुत सोचने विचारने के बाद उन्हों ने मजदूरों को दबाने का एक मार्ग ढूंढ़ निकाला। प्रायः सभी मजदूरों के यहां काबुलियों का रुपया बाकी था। हड़ताल के कारण वे सूद भी देने में असमर्थ थे। परिस्थिति पर विचार कर उन लोगों ने तकाज़ा करना भी छोड़ दिया था।

उन लोगों को बुला कर मि० वाटसन ने उन्हें तकाज़ा करने के लिये प्रेरित किया। इस के साथ ही यह भी धमकी दी कि यदि वे तकाज़ा न करेंगे तो भविष्य में वे मील के किसी मजदूर के साथ लेन देन नहीं कर सकेंगे। काबुलियों को उनकी बात मानने के लिये बाध्य होना पड़ा। परन्तु उन्होंने रक्षा का आश्वासन चाहा। उनकी प्रर्थना को सहर्ष स्वीकार करते हुए मि० वाटसन ने सहायता के लिये उन्हें पचीस हट्टे कट्टे सशस्त्र जमादारों का एक दल प्रदान किया।

दूसरे ही दिन काबूली जमादारों के साथ तकाज़ा करने के लिये निकले। भूख से मरने वाले मजदूरों के पास भला रुपये कहां थे। काबुली उनके साथ बड़ी निर्दयताका वर्ताव करने लगे। उनके दल को देखते ही कितने ही मजदूर भय से इधर उधर भाग जाते थे। इस दशामें काबुली-दल उसके परिवार वालों पर अत्याचार करता था।

मजदूरों के निवास स्थान में खासी हलचल मच गयी। लोग निर्दयता से पीटे जा रहे थे। स्त्रियों तथा बच्चों की कराह से आकाश गूँजने लगा। कुछ मजदूर उत्तेजित भी हुए। एक स्थान पर २५-३० आदमी ईंट पत्थर चलाने लगे। पर जमादारों की सहायता से काबुलियों उन्हें मार भगाया। संयोगवश उस दल का एक आदमी इनके चंगुल में फँस गया। उस बेचारे को तो इन लोगों ने मारते मारते अधमरा कर दिया। अचेत हो जाने पर उसे छोड़ कर वे लोग दूसरी ओर चले गये। उनके चले जाने के बाद अन्य मजदूर उसे उठा कर ले गये।

दिन भर काबुलियों का यह उपद्रव जारी रहा। भूख से संतप्त मजदूर इस नयी विपत्ति के लिये बिलकुल तैयार नहीं थे। उन्हें स्वप्न में भी विश्वास नहीं होता था कि इस परिस्थिति में कोई उन से रुपये का तकाजा करेगा। अचानक यह अत्याचारका ताण्डवनृत्य उनके सामने उपस्थित हो गया था। भगवान के सिवा इस विपत्ति से उनकी रक्षा करनेवाला दूसरा कोई दिखलायी नहीं देता था। पहले तो वे कर्त्तव्यभ्रष्ट की तरह इधर उधर भागते रहे, पर ज्यादती अपनी सीमा पार कर चुकी थी। अति का फल सर्वत्र भयंकर होता है। चार बजे के लगभग मजदूर भीषण रूप से उत्तेजित हो उठे। लगभग पांच सौ की संख्या में वे अत्याचारियों का सामना करने के लिये आगे

बढ़े। शीघ्र ही मुठभेड़ हो गयी। एक खासा दंगा मच गया। दोनों ओर से कुछ आदमी घायल हुए। शीघ्र ही घटना स्थल पर पहुंच कर पुलिस ने लोगों को तितर बितर किया। कई मजदूर गिरफ्तार भी किये गये।

छब्बीसवाँ अध्याय

स्वप्न के वास्तविक रहस्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ विवाद है। नाना श्रेणी के मनुष्य इसके सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की बातें कहते हैं। फिर भी इस सम्बन्ध में अधिकांश लोगों की धारण यही है कि मानव मस्तिष्क के विकार के सिवा स्वप्न और कुछ भी नहीं है। जाग्रत अवस्था में मनुष्य जो कुछ सोचता है, सोने पर उसकी स्मृति कभी कभी स्वप्न के रूप में दिखलायी देती है। यदि वस्तुतः स्वप्न का यही स्वरूप है तो मनुष्य समाज को उसे किसी प्रकार का विशेष महत्व नहीं देना चाहिये। फिर भी कुछ लोग उसे महत्व देते हैं और उसके फलाफल का निर्णय कर अपने भविष्य का दर्शन करते हैं। परन्तु इन दिनों उस श्रेणी के लोगों की प्रधानता है जो स्वप्न आदि के द्वारा निर्णय किये गये फलाफल को पोप लीला के सिवा कुछ नहीं समझते। इस श्रेणी के लोगों में नवयुवकों की संख्या अधिक है और बाबू मेहरचन्द भी उनमें से एक थे। स्वप्न आदि के झमेले में उनका कोई विश्वास नहीं था। परन्तु अपने ऊपर पड़ने पर वे भी उस में विश्वास करने लगे हैं। जिस तरह श्राद्ध आदि में विश्वास नहीं रखने वाले अधिकांश

व्यक्ति अपने परिवार में किसी की मृत्यु होने पर श्राद्ध का आयोजन करते हैं ; उसी तरह बाबू मेहरचन्द को एक स्वप्न आज वेतरह सता रहा है।

आकस्मिक विपत्तियों के वज्राघात से तीन-चार दिनों तक वे बहुत अस्वस्थ्य रहे। अवस्था कुछ सुधरने पर एक रात उन्होंने भयंकर स्वप्न देखा। निद्रा भंग होने पर वे उसकी भयंकरता की बातें सोच कर थर्रा उठे। अपने को बार बार धिक्कारते हुए उन्हों ने कहा—"मुझे भी वहीं चलना चाहिये, जहां पिताजी तथा चाचाजो गये हैं। सचमुच मैं बड़ा ही आभागा हूँ। अन्तिम समय तक पिताजी मुझ से असन्तुष्ट ही रहे। चाचाजी को भी मेरे ही कारण आत्म-हत्या करने के लिये वाध्य होना पड़ा। स्त्री को भी मैं कभी सुखी नहीं रख सका। ऐसी दशा में इस जोवन से लाभ ही क्या है?" इसी प्रकार की बातें सोच सोचते वे मन ही मन उत्तेजित होते रहे। रात भर उन्हें नींद नहीं आई। बड़ी कठिनाई से कई घंटे के बाद उनकी आंख लगी। परन्तु फिर भी वही स्वप्न। वे तो चोख उठे। आत्म-हत्या कर शीघ्र ही चाचाजी के समीप पहुँचने की बात सोचने लगे।

इसी प्रकार की चिन्ता में रात बीत गयी। प्रातःकाल होते ही लक्ष्मी उनकी सेवा में उपस्थित हुई। रात भर निद्रा नहीं आनेके कारण उनकी तबीयत फिर कुछ खराब हो गयी थी। इसके साथ ही चिन्ता ने उनके मुखकी आकृति और भी विकृत कर दी थी। चेहरा देखने से वे महीनों के रोगी मालूम पड़ते थे। उनकी यह अवस्था देखकर लक्ष्मी ने व्याकुलता के साथ पूछा—"रात में आपकी तबीयत कैसी रही?"

खिन्न स्वर में उन्हों ने उत्तर दिया—"तबीयत तो ठीक थी। लेकिन—" इतना कह कर वे रुक गये।

लक्ष्मीने उत्सुकता पूर्वक पूछा—"लेकिन क्या ? शीघ्र ही बतलाइये। रात में नींद तो अच्छी तरह से आई ?"

बाबू मेहरचन्द—"नींद नहीं आ सकी। इस कारण तबीयत फिर कुछ खराब हो गयी है।"

लक्ष्मी—"तब तो बड़े डक्टर साहब को फोन के द्वारा शीघ्र ही बुलाना होगा।"

बाबू मेहरचन्द—"नहीं, उनकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं कोई दवा खाना नहीं चाहता।"

उदास होकर लक्ष्मी ने पूछा—"इसका कारण ?"

बाबू मेहरचन्द—"मुझ जैसा अधम व्यक्ति जीकर ही क्या करेगा। मैं इस पृथ्वी का भार हूँ। यदि अधिक दिनों तक जीवित रहूँगा, तो पाप का बोझ दिनों दिन बढ़ता ही जायगा। इस कारण मेरे लिये यहां से चला जाना ही अच्छा है।"

लक्ष्मी—"आप इस तरह की बातें क्यों कर रहे हैं ? ऐसी बातें कहने के पहले आप मुझे पिस्तौल से क्यों नहीं उड़ा देते ?"

न मालूम क्यों प्रसन्नता का भाव दिखलाते हुए बाबू मेहरचन्द ने कहा—"पिस्तौल से तुम्हें क्यों उड़ाऊँ ? तुमने कौनसा पाप किया है ? तुम तो सती साध्वी स्त्री हो। तुम्हारे ही पुण्य प्रताप से इस समय तक मेरी रक्षा हो रही है। लेकिन अब मैं एक क्षण भी जीवित रहना नहीं चाहता।"

बिलखती हुई लक्ष्मी ने कहा—"न मालूम इस प्रकार की अमंगलजनक भावनायें आपके हृदय में आज किस प्रकार घुस गयीं हैं! भगवान हमारा मंगल करे। हमने आज तक किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है। फिर भी न मालूम वह मुझे बराबर भयंकर कष्टों में क्यों डाला करता है ?"

बाबू मेहरचन्द —"तुम्हारा मंगल ही होगा।"

लक्ष्मी—"जब आप इस तरह की बातें करेंगे, तो फिर मेरा मंगल किस प्रकार हो सकता है? इन बातों को सुनने के पहले मेरा कान क्यों नहीं फट जाता? हा भगवान! रक्षा करो!!"

बाबू मेहरचन्द—"मैं किसी उत्तेजनावश तुम से ये बातें नहीं कह रहा हूँ। सचमुच मैंने मरने का निश्चय कर लिया है। क्या तुम्हें मेरे इस निश्चय का कारण मालूम है?"

कुछ रुक कर वे फिर बोलने लगे—"अच्छा—"मैं तुम्हें उसका कारण बतलाता हूँ। सुनो और ध्यानपूर्वक सुनो! आज रात्रि के समय मैंने बड़ा ही भयंकर स्वप्न देखा है। उसकी भयंकरता की बातें सोच कर अब भी मेरा कलेजा कांप रहा है। ओफ! बड़ा ही भयंकर स्वप्न था वह!!"

लक्ष्मी—"कौन सा स्वप्न?"

बाबू मेहरचन्द—"मैंने देखा कि मृत्यु के बाद यमदूत मुझे नर्क में घसीट कर ले गये हैं। वहां मुझे नाना प्रकार के कष्ट दिये जा रहे हैं। उन यंत्रणाओं का वर्णन करने में मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। ओफ! मेरे साथ क्या नहीं किया गया? नाना प्रकार के कष्ट भोगने के पश्चात मैं एक गर्म कड़ाह पर बिठलाया गया। उसी समय चाचाजी दिखलायी पड़े उन्होंने यमदूतों से नम्रता पूर्वक कहा कि उनने मेरा सभी अपराध क्षमा कर दिया हैं। मुझे किसी प्रकार का कष्ट नहीं दिया। एक यमदूत ने उनके ऊपर गर्म होते हुए कहा कि तुम्हारे कहने से क्या होगा? यदि सभी आदमी का अपराध क्षमा कर दिया करें तो पापियों को दण्ड किस प्रकार मिलेगा? हम किसी तरह इसे नहीं छोड़ सकते। मुझे बचाने में अपने को असमर्थ पाकर

चाचाजी वहां से बाहर चले गये। शायद मेरा कष्ट उन से देखा नहीं गया। उनकी आंखों से आंसू गिर रहे थे।"

व्याकुल होते हुये लक्ष्मी ने कहा—"आप यह क्या कह रहे हैं? यह सब मन के विकार के सिवा और कुछ नहीं है।"

उसकी बातोंको अनसुनी कर बाबू मेहरचन्द फिर बोलने लगे—"हां कुछ देर के बाद मैंने पिता जी का दर्शन किया। वे भी मेरे लिये दुखित थे। उन्होंने यमदूतों से किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया। शायद उन्हें मालूम था कि इसका कोई फल न होगा। हमारा कष्ट अधिक देर तक देखने में असमर्थ होने के कारण वहां से बाहर निकलते हुए उन्होंने मुझ से कहा—"मेहरचन्द! इसी दिन के लिए मैं तुम से बुरे कार्यों को छोड़ने के लिये कहता था। परन्तु तुम ने एक न सुनी। अब तो तुम्हें अपने किये का फल भोगना ही पड़ेगा। कोई तुम्हें इस कष्ट से नहीं बचा सकता है।"

उन्हें जाते देख कर मैं पिताजी-पिता जी! कह कर पुकारने लगा। इसी समय मेरी आंख खुल गयी।"

आंचल से आंसू पोछते हुए लक्ष्मी ने कहा—"बीमारी के कारण आप का दिमाग कमजोर हो गया है। इसी कारण स्वप्न में आप को इस प्रकार की बातें दिखलायी पड़ीं। आपको मेरे सिर की सौगन्ध है, इस प्रकार की बातों को सदा के लिये अपने हृदय से निकाल दें। मैं अभी पंडित जी को बुलवाती हूं। वे होम-जाप के द्वारा स्वप्न के ग्रहों को शान्त कर देंगे।"

बाबू मेहरचन्द—"अब मुझे मरने दो। मेरे जीवित रहने से पाप की मात्रा बढ़ती ही रहेगी। इससे भविष्य में मुझे और भी भयंकर कष्ट सहना पड़ सकता है।"

उनकी बातों को सुन कर लक्ष्मी फूट फूट कर रोने लगी। उसी समय डाक्टर साहब के आने का समाचार मिला। उनके आगमन की बात सुन कर वह बगल वाले कमरे में चली गयी।

पूरी परीक्षा करने के बाद डाक्टर साहब ने बाबू मेहरचन्द को भला चंगा पाया। केवल रात में नींद नहीं आने के कारण उनकी अवस्था खराब हो रही थी। इस कारण नींद आने की दवा की व्यवस्था कर वे चले गये।

दिन भर बाबू मेहरचन्द की सेवा सुश्रुषा होती रही। लक्ष्मी उन्हें एक क्षण के लिये भी नहीं छोड़ती थी। रात-दिन उनकी सेवा में लगी रहती थी। कोई संगीन बीमारी तो थी ही नहीं। केवल मानसिक चिन्ता ने उन्हें अस्वस्थ्य कर दिया था। दवा पीने के दो घंटे बाद उन्हें नींद आई, वे लग भग ३-४ घंटे तक सोते रहे। इससे उनकी तबीयत कुछ शान्त हुई।

रात्रि के नौ बजे के लगभग उन्होंने सोने का बहाना कर लक्ष्मी को वहां से चले जाने के लिये कहा। वह भी बाहर चली गयी। कमरे में पूर्ण सन्नाटा हो जाने पर उन्होंने आलमारी से अपनी पिस्तौल निकाली। वे इस समय आत्म हत्या करने पर तुले हुए थे। रात्रि के भयंकर स्वप्न के बाद ही उन्होंने अपने को इस काम के लिये तैयार कर लिया था। पर उन्हें आत्म हत्या करने का कोई मार्ग ही नहीं सूझता था। जहर खाने की बात वे सोचते थे। पर किसी जहर के प्रयोग का उन्हें पूरा पूरा ज्ञान नहीं था। अस्वस्थता के कारण वे बाहर भी नहीं जाते थे। इस प्रकार आत्म-हत्या की इच्छा पूर्ण करने में वे अपने को असमर्थ पाते थे। परन्तु आज प्रातःकाल के समय लक्ष्मी ने एकाएक उनका मार्ग सरल कर दिया था। उसने अपने अन्त के सम्बन्ध में पिस्तौल का जिक्र किया था।

उसके मुँह से पिस्तौल शब्द निकलते ही उनकी कठिनाई दूर हो गयी। उन्होंने उसी समय निश्चय कर लिया कि पिस्तौल के द्वारा वे अपना अन्त कर लेंगे। इसी कारण पिस्तौल की चर्चा सुन कर उनके मुख मंडल से प्रसन्नता का भाव टपक रहा था।

कमरे में सन्नाटा होने पर पिस्तौल निकाल कर उन्होंने उसी समय अपना अन्त करना चाहा। गोली भर कर वे उसे छोड़ना ही चाहते थे कि एकाएक उनके हृदय में ममता की बिजली दौड़ पड़ी। सचमुच जीवन का मोह बड़ा ही जबर्दस्त होता है। उस समय उन्होंने सोचा कि जल्दीबाजी करना ठीक नहीं है। खूब सोच समझ कर कुछ करना चाहिये। अभी तक मैंने लक्ष्मी से अन्तिम विदाई नहीं ली है। कल उसका अन्तिम बार चुम्बन कर, यह जीवन समाप्त कर दूँगा। कल का सूर्योदय ही मेरे इस जीवनका अन्तिम सूर्योदय होगा इसी प्रकार की बातें सोच कर भरी हुई पिस्तौल सिरहाने में रख कर वे चुपचाप सो रहे।

संयोगवश तुरत नींद आ गयी। परन्तु दुर्भाग्य ने उनका साथ नहीं छोड़ा। वे फिर भयंकर स्वप्न देखने लगे। एकबार चीत्कार कर वे जाग उठे। इस समय तक वे अपने जीवन से तंग आ गये थे। अब उन्होंने अपना काम समाप्त करने का आखिरी निश्चय कर लिया। इसी उद्देश्य से वे सिरहाने से पिस्तौल निकालने लगे। परन्तु वहां पिस्तौल न पाकर उनके आश्चर्य्य की कोई सीमा नहीं रही। सिर पर हाथ रख कर वे भविष्य की चिन्ता करने लगे।

इसी समय घड़ी ने दो की घंटी बजायी। घड़ी की आवाज के साथ ही लक्ष्मी वहां उपस्थित हुई। इस समय उसके चेहरे पर घबराहट नहीं

थी। वह पूर्ण शान्त मालूम पड़ती थी। उसके हाथ में पिस्तौल देखकर चौंकते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—'यह पिस्तौल तुम्हारे पास किस प्रकार चली गयी? गम्भीरतापूर्वक लक्ष्मी ने उत्तर दिया—"इस प्रश्न का उत्तर यदि जीवित रही तो पीछे दूँगी। मेरा अन्तिम प्रणाम स्वीकार कीजिये। वैधव्यकी अपेक्षा मैं मृत्यु को ही अच्छा समझती हूं! यदि आप के प्रति मेरी भक्ति सच्ची होगी तो ईश्वर अवश्य ही हम लोगों को फिर दूसरे जन्म में मिलायेगा।"

उसके मुँह से ये बातें सुन कर बाबू मेहरचन्द कुछ आगे बढ़ आये और उनके हाव भाव से यही प्रकट होता था कि वे आगे बढ़ कर लक्ष्मी के हाथ से पिस्तौल छीनना चाहते हैं। उनका भाव समझ कर कुछ पीछे हट कर लक्ष्मी बोली—'यदि आगे बढ़ कर आप मुझसे पोस्तौल छीनने की चेष्टा करेंगे तो मुझे हरगिज जीवित नहीं पावेंगे। पिस्तौल छीन जाने के पहले ही मैं अपना काम तमाम कर लूंगी।"

उसकी ये बातें सुन कर बाबू मेहरचन्द सहम गये। आग बढ़ने के बदले पीछे हट कर वे बोले—"तुम क्यों इस प्रकार मरने पर तुल गयी हो? क्या तुम्हें मालूम नहीं आत्म-हत्या पाप है?"

मुस्करा कर लक्ष्मी ने उत्तर दिया—"जो आत्म-हत्या मेरे लिये पाप है, क्या वही आपके लिये पाप नहीं है? यदि है तो फिर आप क्यों आत्म-हत्या करने पर तुले हुए हैं?

बाबू मेहरचन्द—"यदि आत्म हत्या को मैं पाप समझता तो हरगिज उसके लिये मैं तैयार नहीं होता?"

लक्ष्मी—"फिर वही मेरे लिये किस प्रकार पाप है?"

बाबू मेहरचन्द—"इसका कारण मैं तुम्हें स्पष्टतः बतला देता हूँ। तुम सती साध्वी महिला हो। इस समय तक पुण्य के सिवा तुमने कोई पाप कर्म नहीं किया है और न भविष्य में ही तुमसे किसी पाप के होनेकी सम्भावना है। इस कारण आत्म-हत्या तुम्हारे लिये अवश्य ही पाप है। परन्तु मेरे सम्बन्ध में यह बात किसी प्रकार लागू नहीं है। मेरा जीवन ही पाप-मय कर्मों में व्यतीत हुआ है। जीवित रहने पर मेरे द्वारा और भी भयंकर पाप होने की सम्भावना है। इस कारण आत्म-हत्या कर मैं अपने को भविष्य के पापों से बचाना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि आत्म-हत्या करने से पाप होगा। फिर भी भविष्य में मेरे द्वारा जो भयंकर पाप होंगे, उसकी तुलना में आत्म-हत्या का पाप कुछ भी नहीं है। इस कारण मेरे लिये तो आत्म-हत्या पाप के बदले पुण्य का काम है।"

लक्ष्मी—"इस समय मेरा मस्तिष्क ठीक नहीं है। मैं आपकी दलीलों का जबाव देने में असमर्थ हूँ। इस समय मैं आपकी सेवा में केवल एक निवेदन करना चाहती हूँ और वह यह है कि आप आत्म-हत्या नहीं करनेकी प्रतिज्ञा करें। अन्यथा मैं इसी समय अपना काम समाप्त करती हूँ।"

वैराग्य का भाव दिखलाते हुए मेहरचन्द ने कहा—"मैंने तो अपने जीवन का अन्त करने का निश्चय कर लिया है। तुम भी अपना मार्ग स्थिर करने के लिये स्वतन्त्र हो।"

लक्ष्मी—"मैंने भी अपना मार्ग निश्चित कर लिया है। आपको अपने निश्चय पर फिरसे विचार करनेके लिये दो मिनट का समय देती हूँ। दूसरे मिनट की समाप्ति के साथ साथ आप मेरे जीवन को भी समाप्ति देखेंगे।"

डेढ़ मिनट तक कमरे में पूरी शान्ति रही। उसके बाद शान्ति भङ्ग

करती हुई लक्ष्मी बोली—"अपने अपराधों के लिये मैं क्षमा चाहती हूँ। मेरा अन्तिम प्रणाम!" इतना कहकर वह पिस्तौल छोड़ने लगी।

इसी समय चीखते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"ठहरो! ठहरो!! मैं आत्म-हत्या नहीं करने की प्रतिज्ञा करता हूँ। तुम्हारे लिये मैं जीवित रहूँगा।" इतना कहते हुए वे अपनी प्यारी स्त्री का प्रेमपूर्वक आलिंगन करने लगे। अपना उद्देश्य सफल होते देख लक्ष्मी ने बार बार ईश्वर को धन्यवाद दिया।

सताईसवाँ अध्याय

मजदूरों के कष्ट की बात सुनकर बाबू रामकुमार प्रसाद भी विचलित हुए उनके साथ उनका एक दिन का सम्बन्ध नहीं था। बराबर उनसे उन्हें काम लेना पड़ता था। इस कारण कोई ऐसा कार्य करना वे उचित नहीं समझते थे, जिससे मजदूरों के हृदय में उनके प्रति बुरी भावना की उत्पत्ति हो। हड़ताल के दिनों में आर्थिक सहायता अनिवार्य थी। उन्होंने पहले मजदूरों को इसका वचन भी दिया था। उनकी सहायता के बल पर ही उन लोगों ने बिना आगे पीछे सोचे हड़ताल का श्रीगणेश कर दिया था।

इस समय तक हड़ताल के नाम पर उन्हें जो कुछ मिला था, उसका अधिकांश भाग उन्होंने व्यक्तिगत कामों में खर्च कर दिया था। उन्हें मि० रावर्ट से शेष आठ हजार मिलने की आशा थी। मजदूरों का भाग्य उन्होंने

उस आशा पर ही लटका दिया था। उनकी शोचनीय अवस्था वे अपनी आंखों देख आये थे। बिना सहायता किये किसी प्रकार सम्मान रक्षित नहीं रह सकता था। मि० रावर्ट के सिवा किसी दूसरे स्थान से गहरी रकम मिलने की आशा भी नहीं थी। इस कारण रुपये का तकाजा करने के लिये वे उनके आफिस जा पहुँचे।

उस समय मि० रावर्ट किसी जरूरी काम में लगे हुए थे। फिर भी वह काम छोड़ कर बड़े आदर के साथ बाबू रामकुमार प्रसाद को बिठलाते हुए वे बोले—"हड़ताल तो आप लोग सफल नहीं बना सकें।"

आश्चर्य के साथ रामकुमार प्रसाद ने कहा—"यह बात आप से किस ने कही? हड़ताल तो पूर्ण सफल हुई है।"

मि० रावर्ट—"परन्तु मुझे तो उसकी असफलता का विश्वस्त रूप से समाचार मिला है।"

रामकुमार प्रसाद—"आपकी बातें सर्वथा निराधार हैं। फतेहचन्द काटन मिल्स की हड़ताल पूर्ण सफल हुई है।"

मि० रावर्ट—"क्या यह सच नहीं है कि लगभग तीन सौ मजदूर काम पर डटे हुए हैं?"

रामकुमार प्रसाद—"तीन सौ तो नहीं, हां, उनकी संख्या एक सौ के लगभग जरूर है। परन्तु वे लोग भी जान बूझकर काम नहीं कर रहे हैं। पहले दिन गलती से वे लोग भीतर चले गये। उस दिन से मील के मालिकों ने उन्हें भीतर ही बन्द कर रखा है। उन्हें बन्दूक का भय दिखला कर काम करने के लिये बाध्य किया जाता है। ऐसी दशा में वे कर ही क्या सकते हैं?"

मि० रावर्ट—"कारण कुछ भी हो, परन्तु हड़ताल को अपूर्णता की बात तो आपको भी स्वीकार करनी पड़ी।"

रामकुमार प्रसाद—"दो हजार मजदूरों के बीच यदि एक सौ मजदूर काम कर रहे हैं, तो वह हड़ताल पूर्ण ही कही जायगी। यहां हड़ताल का आन्दोलन करते करते ही दाढ़ी सफेद हो चली है मि० रावर्ट?"

मि० रावर्ट—"मैं आपकी इस बात से सहमत नहीं हूँ।"

रामकुमार प्रसाद—"खैर, इसकी कोई बहस नहीं है। दो हजार मजदूरों के बीच एक सौ मजदूर काम कर रहे हैं, इस बात को तो मैं भी स्वीकार करता हूँ।"

मि० रावर्ट—"खैर, बहस की कोई बात नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—"देखते नहीं, हड़ताल के कारण ही बेचारे फतेहचन्द जी का परिवार किस संकट में पड़ गया है?"

मि० रावर्ट—"पारिवारिक संकट से हम लोगों का कोई सम्बन्ध नहीं है। इस संकट में तो हमारी भी उनके प्रति हार्दिक सहानुभूति है।"

रामकुमार प्रसाद—"हाँ, ऐसा होना तो सर्वथा स्वाभाविक ही है।"

मि० रावर्ट—"कहिये, किस तरह यहां पधारने का कष्ट किया?"

रामकुमार प्रसाद—"एक जरूरी काम के कारण मैं इस समय आपके यहां आया हूँ।"

मि० रावर्ट—"कौन सा काम?"

रामकुमार प्रसाद—"इस समय मजदूरों को आर्थिक सहायता करने की बड़ी आवश्यकता है। बेचारे भूखों मर रहे हैं। यदि सहायता नहीं की जायगी तो वे किसी प्रकार हड़ताल पर स्थिर नहीं रह सकेंगे। इस कारण आपसे निवेदन है कि कृपया शेष आठ हजार रुपया दे दीजिये।"

आश्चर्य का भाव दिखलाते हुए मि० रावर्ट ने कहा—"बड़े अफसोस की बात है कि एक बुद्धिमान आदमी होकर भी आप इस तरह की बातें करते हैं। हमने आपको रुपया देने की प्रतिज्ञा जरूर की थी। परन्तु किस अवस्था में ?"

रामकुमार प्रसाद—"किस अवस्था में ?"

मि० रावर्ट—"हमने स्पष्ट रूप से कह दिया था कि हड़ताल पूर्ण होनी चाहिये और उस दशा में ही रुपये देने की बात की थी। आपने भी दर्जनों वार हमें हड़ताल की पूर्णता का विश्वास दिलाया था। आपने तो दावे के साथ कहा था कि एक आदमी भी काम पर नहीं जायगा। परन्तु वास्तव में हुआ क्या ? इस समय तो मील में लगभग तीन सौ आदमी काम कर रहे हैं। फिर भी आप किस प्रकार रुपये मांगने का साहस करते हैं ?"

रामकुमार प्रसाद—"फिर आप तीन सौ आदमी और एक सौ आदमी का झगड़ा लाते हैं। मैंने तो आपसे पहले ही कह दिया कि केवल एक सौ आदमी मील के भीतर बन्द हैं और मृत्यु का भय दिखला कर उन्हें काम करने के लिये बाध्य किया जाता है।"

कुछ उत्तेजित होते हुए मि० रावर्ट ने कहा—"मैं आपकी बात ही ठीक मान लेता हूं। लेकिन इस अवस्था में भी तो हड़ताल पूर्ण नहीं कही जा सकती है।"

रामकुमार प्रसाद—"आप तो बहस करने की प्रवृत्ति दिखला रहे हैं। मैं आपसे किसी प्रकार बहस करने के लिये तैयार नहीं हूं। मैं तो आपसे केवल काम की बातें करने आया हूं।"

मि० रावर्ट—"मैं भी आपसे बेकार बातें करना नहीं चाहता। बोलिये आपके काम की कौन सी बात है ?

रामकुमार प्रसाद—"मैंने तो पहले ही आपसे निवेदन कर दिया कि अब रुपये के बिना किसी तरह काम नहीं चल सकता है।"

मि० रावर्ट—"तो मैं क्या करूँ ? ऐसी बनावटी हड़ताल के लिये तो मैं रुपये खर्च कहीं कर सकता हूँ। इस समय तक मैं आपको सात हजार रुपया दे चुका हूँ। मैं तो देखता हूँ कि मेरा वही रुपया व्यर्थ गया। आगे रुपया देने से क्या लाभ होगा ?"

रामकुमार प्रसाद—"आपको किसी ने गलत खबर बतला दी है और उसी बात ने आप के मस्तिष्क पर प्रभाव जमा लिया है।"

मि० रावर्टः—खैर, इस प्रकार की बातों से कोई लाभ नहीं है। सौ बात की एक बात तो यह है कि इस परिस्थिति में मैं रुपया देने की मूर्खता नहीं कर सकता हूं।"

कुछ सोचकर रामकुमार प्रसाद बोले—"यदि आप सभी रुपया नहीं दे सकते तो कम से कम चार हजार तो अवश्य दीजिये। इसके बिना किसी तरह काम नहीं चल सकता है।"

मि० रावर्ट—चार हजार तो एक बड़ी रकम होती है। मैं इस समय चार रुपया भी नहीं दे सकता हूं।"

रामकुमार प्रसाद—"आप गम्भीरता पूर्वक विचार कीजिये। इस समय रुपया नहीं देने से हड़ताल भंग हो जायगी और इस प्रकार आपका पहला रुपया भी व्यर्थ चला जायगा।"

मि० रावर्ट—"बहस करने की कोई जरुरत नहीं है। मेरा पहला

रुपया किसी तरह व्यर्थ नहीं जा सकता है। यदि उससे मुझे कोई लाभ नहीं हुआ तो शर्त के अनुसार मैं आपसे रुपया वसूल करने का हकदार हूँ।"

यह बात सुन कर रामकुमार प्रसाद भी कुछ गर्म होकर बोले—"आप के जैसे आदमी से तो मुझे पहले पहल ही काम पड़ा है। आप पागलों की तरह क्यों बातें कर रहे हैं?"

मि० रावर्ट—"क्या मैं पागलों की तरह बातें कर रहा हूँ।"

रामकुमार प्रसाद—"और नहीं तो क्या? एक तो रुपया नहीं देकर आप मेरे साथ विश्वासघात कर रहे हैं। इसके साथ ही मुझे नाना प्रकार की धमकी भी दे रहे हैं। इन बातों का क्या अर्थ है?"

मि० रावर्ट—"समय आने पर इन बातों का अर्थ आपको स्वयं मालूम हो जायगा। इस समय बहस की कोई जरूरत नहीं है।"

रामकुमार प्रसाद—"तो इस समय आप कुछ भी नहीं दे सकते हैं?"

मि० रावर्ट—"एक ही प्रश्न कई बार पूछने से क्या लाभ है? मैंने तो एक बार कह दिया कि अब मैं एक पैसा भी नहीं दे सकूँगा।"

कुर्सी से उठते हुए रामकुमार प्रसाद बोले—"इस विश्वासघात का फल आपको भगवान देगा।" इतना कह कर वे वहां से चल पड़े। बड़ी आशा से वे मि० रावर्ट के यहां गये थे। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि कुछ न कुछ रुपया अवश्य मिलेगा। परन्तु दुर्भाग्यवश उन्हें सर्वथा निराश होना पड़ा।

आज प्रातःकाल के समय ही उन्होंने मजदूरोंको सहायता देने का वचन दिया था। अब किस प्रकार मजदूरों के सामने उनकी प्रतिष्ठा बच सकेगी, यही सोचते सोचते वे घर लौटे। सीढ़ी पर पैर रखते ही उनके सिर पर

वज्र गिरा। शिवदयाल तथा हरिहर आदि मजदूरों के प्रतिनिधि बन कर उनके यहां आ पहुंचे थे। उन्हें देखते ही सलाम बजाते हुए शिवदयाल ने कहा—"हम लोग लगभग एक घंटे से आप की प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"मैं तुम लोगों का ही काम करने गया था। आज कल रात दिन मुझे तुम्हारे काम की ही चिन्ता रहती है। क्या करूँ? बड़ा कठिन समय आ गया है।"

शिवदयाल—"यह बात हम लोगों को खूब मालूम है। आजकल आप सोते जागते हम लोगों के काम में ही व्यस्त रहते हैं।"

रामकुमार प्रसाद—"इतनी चेष्टा करने पर भी तो तुम लोगों की पूरी सेवा नहीं कर पाता हूँ। क्या करूँ? मेरा दुर्भाग्य है। खैर, मील की आज क्या अवस्था है?"

शिवदयाल—"मजदूर बड़ा कष्ट पा रहे हैं। खाने पीने का कोई प्रबन्ध नहीं है। अब बिना किसी विलम्ब के आपको सहायता करनी पड़ेगी—नहीं तो भूखों मरने की नौबत आ जायगी। सभी मजदूरों ने तो हम लोगों को आप के पास भेजा है। वे आप से मिलना चाहते हैं।"

संकुचित भाव से रामकुमार प्रसाद ने उत्तर दिया—"मैं भी तो इसी पेशोपेश में पड़ा हुआ हूं। कई आदमियों ने रुपये देने का बचन दिया था। परन्तु बाबू मलूकचन्द की मृत्यु ने सारा खेल विगाड़ दिया है। इस विपत्ति के कारण लोगों की सहानुभूति उनके परिवार के साथ हो गयी है। इस समय उनके विरुद्ध हम लोगोंकी सहायता कोई करना नहीं चाहता। अभी तो एक आदमी से हमारी खरी खोटी बातें हो गयी है। क्या करूं, क्रोध को नहीं सम्हाल सका। उस भले आदमी ने आज रुपया देने का वचन दिया था। परन्तु ऐन मौके पर उसने देने से इन्कार कर दिया।"

उदासी का भाव दिखलाता हुआ शिवदयाल बोला—"रुपये का प्रबन्ध इस समय तक नहीं हो सका है क्या ?"

रामकुमार प्रसाद—"मैं तो कई भले आदमियों का विश्वास कर इस समय बड़ा ही लज्जित हो रहा हूं। यदि मैं जानता कि अवसर उपस्थित होने पर वे विश्वासघात करेंगे तो मैं पहले से ही दूसरा प्रबन्ध कर लेता।"

शिवदयाल—"फिर आपकी क्या आज्ञा होती है ?"

रामकुमार प्रसाद—"मैं प्रबन्ध करता हूं। आज से कल तक कोई न कोई प्रबन्ध अवश्य हो जायगा। इस समय तुम लोगों के खर्चे के लिये मैं कुछ दे देता हूं। जरा मजदूरों को शान्त रखना।"

इतना कह कर भीतर से पचास रुपये लाकर उन्हों ने शिवदयाल को दे दिया। रुपये पाकर प्रसन्नता का भाव दिखलाता हुआ वह बोला—"कल कोई प्रबन्ध अवश्य कर दीजियेगा। आज किसी न किसी प्रकार हम लोग मजदूरों को समझा लेंगे। लेकिन कल सहायता नहीं मिलने पर लोग भूखों मरने लगेंगे और उस समय किसी की बात नहीं सुन सकेंगे।" इतना कह कर अपने साथियों के साथ वह वहां से चल पड़ा।

अठाईसवाँ अध्याय

लक्ष्मी के पति प्रेम ने बाबू मेहरचन्द को आत्महत्या की भावना छोड़ने के लिये बाध्य किया, इसमें सन्देह नहीं। फिर भी उनकी आत्मा को शान्ति नहीं मिली। चाचा साहब की आत्महत्या का प्रत्यक्ष कारण अपने

को समझ कर वे बराबर खिन्न तथा उद्विग्न रहा करते थे। चाचा साहबका श्राद्ध सामने था। इसलिये दो-तीन दिनों के बाद वे काम काज में लगने की चेष्टा करने लगे। रोग शय्या छोड़ कर वे इधर उधर घूमने भी लगे।

बाहर निकलने पर उन्होंने मील की वर्तमान अवस्था की ओर भी अपना ध्यान आकर्षित किया। पता लगाने पर हड़ताली मजदूरों के कष्ट का भी विवरण उन्हें मालूम हुआ। इसके साथ ही स्वामी ज्ञानानन्द के सम्बन्ध में उन्हें बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हुई। लोगों के मुख से उन्होंने यह भी सुना कि हड़ताल के विरोध में वे बराबर पं० रामदयाल शर्मा का साथ देते आये हैं। चाचा साहब की मृत्यु के पहले भी वे स्वामीजी के सम्बन्ध में बहुत कुछ सुन चुके थे। लोग उनकी सिद्धि की बड़ी प्रशंसा किया करते थे। इन दिनों वे वर्तमान कलह मिटाने की चेष्टा कर रहे हैं, यह सुन कर उनके हृदय में स्वामीजी के प्रति भक्ति का भाव और भी पुष्ट हो गया उनसे मिलने की आकांक्षा उनके हृदय में उत्पन्न हुई।

शीघ्र ही इस आकांक्षा ने उत्कण्ठा का रूप धारण किया। प्रबल उत्कण्ठा होने के कारण वे उसी दिन संध्या एक साधारण व्यक्ति के रूप में उन से मिलने गये। मील के इर्द गिर्द स्थानों से वे काफी परिचित थे। इस कारण स्वामीजी का स्थान ढूढ़ने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई।

बाबू मेहरचन्द के वहां पहुचने के पहले ही सूर्यास्त हो चुका था। स्वामीजी उस समय बत्ती जला कर अकेले भजन कर रहे थे। एकाएक आगन्तुक को देख कर वे बोले—"आप किसे ढूढ़ते हैं?"

भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हुए बाबू मेहरचन्द ने कहा—"आप का ही दर्शन करने के लिये आया हूं।"

बैठने के लिये उन्हें आसन देते हुए स्वामीजी बोले—"क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूं ?"

बाबू मेहरचन्द स्वामीजी को असली परिचय न देने के निश्चय से ही घर से साधारण आदमी के वेष में निकले थे। परन्तु परिचय पूछे जाने पर एक सिद्ध संन्यासी के सामने उन्हें झूठ बोलने का साहस नहीं हुआ। हाल की घटनाओं ने उन्हें एक प्रकार से धार्मिक प्रवृत्ति का बना दिया था। छल कपट से वे बहुत डरने लगे थे। इस कारण कोई बनावटी परिचय बतलाने में उन्होंने अपने को असमर्थ पाया। कुछ हिचकिचाहट के साथ वे बोले—"मेरा नाम मेहरचन्द है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"फतेहचन्द काटन मिल्स के मालिक का नाम भी तो बाबू मेहरचन्द ही है।"

बाबू मेहरचन्द—"जी हां, मैं ही वह अभागा व्यक्ति हूं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"क्या आप ही इस मील के मालिक हैं ?"

बाबू मेहरचन्द—"जी हां।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपको इस सात्विक रूप में देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। आज कलके धनीमानी नवयुवक सादगी को असभ्यता समझते हैं। उनका दावा रहता है कि जब भगवान ने हमें धन प्रदान किया है तो हम साधारण व्यक्तियों की तरह रहने की मूर्खता क्यों करें ? ठाठ बाट से रह कर अमन चैन में दिन बिताना ही वे अपने धन का सदुपयोग समझते हैं। अमन चैन से प्राप्त होने वाले कृतिम सुख को ही वे वास्तविक सुख समझते हैं। परन्तु उन्हें वास्तविक सुख का ज्ञान नहीं रहता है। वे यह नहीं जानते कि सुन्दर वस्त्र पहनने से जितना आनन्द मिलता

है, उस से कहीं अधिक आनन्द किसी गरीब को सुन्दर वस्त्र प्रदान करने से मिल सकता है। सुन्दर भोजन सुखकर अवश्य होता है परन्तु उससे कहीं अधिक सुख किसी भूखे को भोजन कराने में मिल सकता है। इस कारण धन का वास्तविक उपयोग राजसी ठाठ बाट में धन नष्ट न कर वस्त्रहीनों को वस्त्र तथा भूखों को भोजन देने में है। एक करोड़पति आदमी होकर भी आप इस पहिरावे में मेरे पास आये हैं, यह देख कर मैं बहुत प्रसन्न हो रहा हूं।"

गम्भीरतापूर्वक बाबू मेहरचन्द बोले—"माफ कीजियेगा, मैं इस प्रशंसा के योग्य नहीं हूं। इस समय मैं जिस रूपमें हू, वह मेरा असली रूप नहीं है। आप जैसे महात्मा से कोई बात छिपा कर पाप का भागी क्यों बनूं! अपना असली परिचय नहीं देने के उद्देश्य से मैं इस रूप में आप के पास आया था। फिर भी आपके सामने झूठ बोलने का मुझे साहस नहीं हुआ। आपके तेज ने मुझे अपना असली परिचय देने के लिये बाध्य किया। आपने धनी नवयुवकों के सम्बन्ध में इस समय जो कुछ कहा है, वह अक्षरशः ठीक है। हम लोग धनके मदमें कृत्रिम सुखको ही वास्तविक सुख समझने लगते हैं। इस प्रकार हमें वास्तविक सुख का कभी दर्शन हो नहीं होने पाता है। मैं भी उन्हीं लोगों में से एक हूं। परन्तु अब आप लोगों के आशीर्वाद से सद्पथ का आश्रय लेने की चेष्टा करूंगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आप को स्पष्टवादिता से मैं और भी प्रसन्न हो रहा हूं। आप मेरे यहां बनावटी रूप में आये, इसका कोई विशेष महत्व नहीं है। विचार करने की केवल यह बात है कि इस समय आपके हृदय में कोई भी बनावटी बात नहीं है। यदि हृदय में इस प्रकार की कोई बात

रहती तो इस स्पष्ट वादिता का आप परिचय नहीं देने पाते। इस समय आपका हृदय गंगा जल तथा बालक के हृदय की तरह पवित्र तथा निर्मल मालूम पड़ता है। इससे यह स्पष्ट है कि अब आपके हृदय में वास्तविक ज्ञान की उत्पत्ति हो गयी है।"

बाबू मेहरचन्द—"ज्ञान की उत्पत्ति तो नहीं हुई है। हाँ, मैं ज्ञान की खोज में अवश्य हूं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"भगवान आप का मंगल करे। आप जैसे प्रगति-शील नवयुवकों से ही देश का कल्याण हो सकता है।"

बाबू मेहरचन्द—"आपका दर्शन पाकर मैं अपने को धन्य समझता हूं। यदि आज्ञा हो तो अपने सम्बन्ध में आप से दो-एक प्रश्न करूं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"बड़ी प्रसन्नता के साथ आप प्रश्न कर सकते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"बालकपन से ही मैं बड़ा ही स्वतंत्र प्रकृति का रहा हूं। दूसरे शब्दों में आप मुझे उद्दण्ड कह सकते हैं। मेरी उद्दण्डता तथा दुर्बुद्धि के कारण पिताजी भी मुझ से बराबर असन्तुष्ट रहते थ। अन्तिम समयतक मैं उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सका। उनके बाद चाचा साहब भी मुझ से बराबर क्षुब्द रहते थे। मेरी दुष्टता से उन्हें सदैव कष्ट पहुंचाता था। मेरी दुष्टता से ही तंग आकर उन्होंने अपनी बीमारी की कोई दवा नहीं की और उनकी दुखान्त मृत्यु हुई। उनकी मृत्यु के बाद मेरा चित्त सदैव चचल रहता था। कई दिनों तक मैं आत्म-हत्या करने की बात सोचता रहा। अन्त में अपनी स्त्री के उद्योग से मुझे वह निश्चय छोड़ना पड़ा। अब आत्म-हत्या नहीं करने के लिये मैं प्रतिज्ञाबद्ध हूं। फिर भी मुझे किसी प्रकार शान्ति नहीं मिलती है। इस दुनियाँ से वैराग्य सा हो गया है। आप कृपया कोई ऐसा मार्ग बतलाइये जिससे मुझे शान्ति मिल सके।"

उनकी बातें सुन कर स्वामी ज्ञानानन्द आँखें बन्द कर कुछ सोचने लगे। उन्हें चुप देख कर बाबू मेहरचन्द बोले—"मैं समझाता हूं कि मेरी बातें आपकी समझ में आ गयी हैं। यदि आपने नहीं समझा हो तो विस्तार पूर्वक मैं आपको अपनी दुखपूर्ण कहानी फिर से सुनाऊं।"

मुस्कराते हुए स्वामी ज्ञानानन्द ने उत्तर दिया—"विस्तार पूर्वक कहने की आवश्यकता नहीं है। योगबल से मैं सभी कुछ समझ गया हूं। अपने कथन में आपने एक स्थल पर किसी विशेष कारणवश सच पर पर्दा डाला है वह बात भी हमारी समझ में आ गयी है।"

आश्चर्य का भाव दिखलाते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"वह कौन सी बात?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"क्या आप मेरी परीक्षा लेना चाहते हैं?"

बाबू मेहरचन्द—"स्वप्न में भी मैं आपकी परीक्षा लेने की बात नहीं सोच सकता हूं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"खैर, आप के प्रश्न का उत्तर देना आवश्यक है। अपने चाचा साहब की मृत्यु की बात कहते हुए आपने कहा है कि आपकी दुष्टता से तंग आकर उन्होंने अपनी बीमारी की दवा नहीं की और इस प्रकार उनकी मृत्यु हुई परन्तु वास्तविक बात ऐसी नहीं है। उन्होंने आत्म-हत्या के द्वारा अपने जीवन का अन्त किया है।"

उनके चरणों पर गिरते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"माफ कीजियेगा, इस अपराध के लिये। अभी तक हृदय में पाप भरा हुआ है। इस कारण लाख चेष्टा करने पर भी कोई न कोई झूठ बात बोलने के लिये वाध्य होना ही पड़ता है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"उदारतापूर्वक विचार करने पर आपकी बात एकदम झूठ नहीं कही जा सकती है। झूठ की तरह दिखलायी देने पर भी उसमें पवित्रता का भाव है। अपनी शक्ति पर आपने सच बोलने की चेष्टा की है, इसमें सन्देह नहीं। आपने इस सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, उसका अर्थ आत्म-हत्या ही होता है फिर भी कानूनी पहलू के कारण आप स्पष्ट रूप से आत्म-हत्या को चर्चा नहीं कर सके। राजनीति की दृष्टि से आपका ऐसा कहना सर्वथा उचित है। किसी अनजान आदमी के सामने गुप्त बातें नहीं कही जा सकती है। इससे अनिष्ट की सदभावना रहती है।"

बाबू मेहरचन्द—"महाराज! आपके जैसा सिद्ध महात्मा तो मैंने कहीं देखा ही नहीं। ओफ! कितना तपोबल है आपमें। आप गुप्त से गुप्त बातें भी तुरत समझ जाते हैं। आप का दर्शन पाकर आज मेरा जीवन सचमुच सार्थक हो गया।

स्वामी ज्ञानानन्द—"इतनी प्रशसा की कोई आवश्यकता नहीं है। अब मैं आपके सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करता हूं। आप ध्यानपूर्वक सुनें। आपकी वर्तमान बेचैनी का एक मात्र कारण यह है कि आप अपने चाचा साहब की शोकजनक मृत्यु का सारा दोष अपने ऊपर मढ़ते हैं। यदि किसी के दोष के कारण उसके किसी श्रेष्ठ व्यक्ति की मृत्यु हो जाय तो निःसन्देह वह भयकर अपराधी कहा जा सकता है और सुबुद्धि का संचार होने पर उसका भीषण रूप से अस्त व्यस्त होना स्वभाविक है। परन्तु आपके सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं है।"

बाबू मेहरचन्द—"यह कैसे?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपके प्रश्न का उत्तर देने के पहले मैं आपको

दोष और कमजोरी का भेद बतलाना चाहता हूं। कुछ लोग इन दोनों चीजों को एक ही वस्तु समझ कर भयंकर भ्रम में पड़ जाते हैं। इन दो भिन्न भिन्न वस्तुओं का समावेश कर देने से कभी कभी अनहोनी घटनायें हो जाती है। आपके द्वारा आत्म-हत्या की चेष्टा को भी हम इस श्रेणी में रख सकते हैं।

बाबू मेहरचन्द—"दोष और कमजोरी में क्या भेद है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"अब मैं आपको वही बतला रहा हूं। इन दोनों का भेद सर्वथा स्पष्ट है। किसी दोष के लिये मनुष्य पूर्ण रूप से जिम्मेदार रहता है। उसे हम मनुष्यों का पाप कह सकते हैं। किसी व्यक्ति को घायल कर देना अथवा मार देना दोष है। यदि कोई किसी धनवान का धन लूटना चाहता है और हम उसका साथ देते हैं अथवा धनी का सत्यानाश होने के उद्देश्य से उस भेद को जानते हुए भी छिपा रखते हैं, तो यह हमारा दोष है, परन्तु यदि हम हृदय से उस धनवान को भलाई चाहते हैं, फिर भी भेद खुलने पर डाकुओं के कोप का भाजन बनने के भय से हम लूट का रहस्य छिपा रखते हैं, तो यह हमारा दोष नहीं, कमजोरी है और इस दशा में उदारतापूर्वक विचार किये जाने से हम अपराधी नहीं कहे जा सकते हैं। कोई बुरी भावना हृदय में नहीं रहने पर यदि परिस्थिति के कारण मनुष्य कोई बुरा कार्य करने के लिये बाध्य हो तो उसे भी हम कमजोरी ही कह सकते हैं। आपके सम्बन्ध में भी यही बात लागू है। आपने जान बूझ कर न तो अपने पिताजी का दिल दुखाया और न चाचा साहब का। जहां तक पिताजीका सम्बन्ध है वहां तक तो आपके कार्यों का दोष लड़कपन और अल्हड़पन पर मढ़ा जा सकता है। रही चाचा साहब की बात। मेरा

अनुमान है कि जान-बूझ कर आपने उनका भी दिल नहीं दुखाया। परिस्थिति तथा मानवीय कमजोरी के कारण आपको कुछ ऐसे कार्य करने पड़े, जिनसे उन्हें कष्ट पहुंचा और उनका शोकजनक अन्त हुआ। इस सम्बन्ध में भी अधिक से अधिक आपकी कमजोरी का कलंक लगाया जा सकता है, जो वर्तमान परिस्थिति में सर्वथा क्षम्य है।"

बाबू मेहरचन्द—"यह कैसे?"

स्वामी ज्ञानानन्द—पश्चाताप के बाद कमजोरी की गणना अपराध में नहीं हो सकती हैं। अपनी कमजोरी के लिये आप काफी पश्चाताप कर चुके हैं, यह बात आप अवश्य ही स्वीकार करेंगे। ऐसी दशामें आप अधिक शोकाकुल रह कर अपनी हानि ही कर रहे हैं। इस समय आपको चाहिये कि कमजोरीको सदा के लिये अपने हृदय से दूर कर दृढ़ता पूर्वक अपना कार्य सम्हालें। ऐसा करने से ही आप के पहले कार्यों का प्रायश्चित हो सकता है। आत्म हत्या करने का विचार अथवा सदा खिन्न रहने की प्रवृति से तो आप अपना जीवन नष्ट कर बैठेंगे।"

बाबू मेहरचन्द—"आप की बातों से मुझे बहुत कुछ शान्ति मिली। आशा है कि इस प्रकार के आदेश से आप मुझे बराबर लाभान्वित करते रहेंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—आपके लिये मेरा दरवाजा खुला हुआ है। आप जब चाहें मेरी उपस्थिति से लाभ उठा सकते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"सुना है कि आपने मील का परिस्थिति का काफी अध्ययन किया है। वर्तमान हड़ताल से मैं बहुत ही दुखी हूं, मजदूरों की शोकजनक अवस्था का भी मुझे समाचार मिला है। इससे मेरा चित्त

और भी खिन्न हो रहा है। क्या इस सम्बन्ध में आप मेरी कोई सहायता कर सकते हैं?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"मैं बड़ी प्रसन्नता से इस कार्य में आपकी हर प्रकार की सहायता कर सकता हूं। यदि आप समझौते के लिये तैयार हों तो मैं पं० रामदयाल शर्मा को आपके पास भेज दूँ। वे मजदूरों से बड़ा ही स्नेह रखते हैं। मुझपर भी उनका बड़ा प्रेम है। आपने सुना होगा कि उन्होंने हड़ताल रोकने की बड़ी चेष्टा की थी।"

बाबू मेहरचन्द—"जी हाँ, मुझे यह सब मालूम है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"उनके साथ परामर्श कर इस प्रश्न का कोई फैसला करा लें। मैं भी शीघ्र ही हड़ताल का अन्त देखना चाहता हूँ। मजदूरों के कष्ट से मुझे बहुत दुख हो रहा है।"

बाबू मेहरचन्द—"इस सम्बन्ध में आप लोग जैसी आज्ञा देंगे, मैं अवश्य शिरोधार्य करूँगा।"

स्वामी ज्ञाननन्द—"आपसे मुझे ऐसी ही आशा है। भगवान आपकी मानसिक वेदना दूर करे। आप जैसे उत्साही तथा सम्पन्ननवयुवक यदि अपने कर्त्तव्य का ज्ञान प्राप्त कर लें, तो इससे देशका बहुत कल्याण हो सकता है। भगवान आपको बाधाओं का समुद्र पार करने की शक्ति दे।"

बाबू मेहरचन्द—"आप जैसे सिद्ध महापुरुष के आशीर्वाद से सभी कुछ सम्भव है।"

थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें कर बाबू मेहरचन्द वहाँ से लौट आये।

उन्तीसवाँ अध्याय

फतेहचन्द कारन मिल्स की हड़ताल का विरोध पं० रामदयाल शर्मा ने मजदूर के हित की दृष्टि से ही किया था। मील मालिकों की सहायता अथवा अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने की भावना उनके हृदय में नहीं थी। परिस्थिति का अध्ययन करने के बाद उन्हें विश्वास हो गया था कि स्वार्थ भावना से प्रेरित होकर रामकुमार प्रसाद हड़ताल का आयोजन कर रहे हैं। इस विश्वास ने ही उन्हें हड़ताल का विरोध करने के लिये बाध्य किया था। इसमें सन्देह नहीं कि अपनी शक्ति भर उन्होंने हड़ताल रोकने की चेष्टा की। परन्तु एक सच्चे कार्य कर्त्ता की तरह उन्हें अपनी असफलता पर तनिक भी रोष नहीं हुआ। वे गम्भीरता पूर्वक अपना कार्य क्रम सोचते रहे।

इसी बीच में उन्हें बाबू मलूकचन्द की मृत्यु तथा हड़तालियों की आर्थिक दुरावस्था का समाचार मिला। इन दोनों समाचारों ने उन्हें और भी व्यथित कर दिया। वे इस नाजुक परिरिथति में परित्राण का मार्ग ढूंढ़ने लगे। इस समय तक उन्हें आशा थी कि रामकुमार प्रसाद मजदूरों की सहायता का अवश्य ही कोई न कोई प्रबन्ध करेंगे। परन्तु दो तीन दिनों के बाद उन्हें उनकी असमर्थता का भी समाचार मिला। इस समाचार के साथ ही उन्हें काबुलियों के अत्याचार आदि की भी खबर मिली। अब वे स्वयं सहायता के लिये अग्रसर हुए। पता लगानेपर इन्हें मालूम हुआ कि पांच हजार रुपया मिलने से इस समय मजदूरों की किसी प्रकार रक्षा हो सकती है।

अब वे रुपये कि चिन्ता में पड़े। एक हजार तो इन्होंने अपने पास से देने का निश्चय किया। शेष चार हजार इन्होंने अन्य लोगों मे लेना चाहा। इस समय तक इन्होंने चन्दा के द्वारा कभी इतना धन संग्रह नहीं किया था। इस मैदान में कोरे रंग रूट रहने के कारण इन्हें लोगों से रुपया मांगते भी संकोच होता था। बड़ी कठिनाई से ८-१० लोगों के यहां से इन्हें चार हजार रुपया मिला।

रुपये का प्रबन्ध हो जाने पर उन्होंने उसके वितरण का भार स्वामी जी को देना चाहा। इसी उद्देश्य से उन्हें बुलाने के लिये मोटर भेज दी। लगभग दो घन्टे में वे आ पहुँचे। वर्तमान परिस्थिति की चर्चा छेड़ते हुए उन्होंने कहा—"अब मजदूरों की अवस्था बहुत खराब हो चली है। उन्हें समझा बुझा कर काम पर भेज देना ही ठीक होगा।"

रामदयाल शर्मा—"लेकिन अभी तक तो समझौते को कोई बात नहीं चली है। एकाएक मजदूर किस तरह काम पर जा सकते हैं?"

स्वामी ज्ञानानन्द—आप जानते हैं कि इस हड़ताल का कोई वास्तविक कारण नहीं था। फिर समझौते का क्या आधार हो सकता है?"

रामदयाल शर्मा—"मैं जानता हूँ कि हड़ताल प्रारम्भ कर मजदूरों ने गलती की थी। परन्तु अब बिना किसी शर्त के काम पर जाकर वे उससे भी बड़ी गलती करेंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—आपकी बात हमारी समझ में नहीं आयी।"

रामदयाल शर्मा—"मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि अब हड़ताल की सफलता अथवा असफलता पर ही मजदूरों की प्रतिष्ठा अथवा अप्रतिष्ठा निर्भर करती है। इस कारण अब इसकी सफलता पूर्वक ही समाप्ति होनी

चाहिये। आप कहेंगे कि जिसके प्रारम्भ का ही कोई उद्देश्य नहीं है, उसका अन्त किस प्रकार सफलतापूर्वक हो सकता है। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि कभी कभी आगे आनेवाली बड़ी बुराई को रोकने के लिये वर्तमान अवस्था की छोटी बुराई का समर्थन करना पड़ता है। जैसे कोई मनुष्य आवश्यकता से अधिक मोटा हो, लाख चेष्टा करने पर भी वह उस रोग से मुक्ति नहीं पाता हो; यदि वही व्यक्ति किसी ऐसे स्थान में जाता है, जहां उसके खाने पीने की असुविधा हो, परन्तु उस असुविधा के कारण उसकी मोटाई कम होने लगी हो, ऐसी दशा में भोजन की असुविधा को बुरा मानते हुए भी उस परिस्थिति विशेष में उसे लाभजनक समझ कर उसका समर्थन करना पड़ेगा। उसी तरह इस हड़तालको बुरा मानते हुए भी भविष्य में इसको असफलता से उत्पन्न होने वाली भयकर बुराइयों से बचने के लिये इसकी सफलता के लिये अब उद्योग करना पड़ेगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—क्या अब आप हड़ताल जारी रखना चाहते हैं?"

रामदयाल शर्मा—"नहीं! मेरा ऐसा उद्देश्य नहीं है। मैं केवल यह चाहता हूं कि उसके फलस्वरूप मीलमालिकों द्वारा मजदूरोंके उचित अधिकार स्वीकार कर लिये जांय। उचित अधिकार की स्वीकृति से मेरा तात्पर्य यह है कि कोई ऐसा समझौता हो, जिस से दो दलों में से किसी को क्षतिग्रस्त नहीं होना पड़े। स्वामीजी! आप इस बातको अवश्य स्वीकार करेंगे कि यदि यह हड़ताल एकाएक भंग कर दी जाय तो मजदूर एकदम हतोत्साह हो जायँगे और निकट भविष्य में वे फिर अपने उचित अधिकारों की प्राप्ति के लिये भी सिर उठाने का साहस नहीं कर सकेंगे। इसलिये उनके हितका विचार करनेवाला कोई भी व्यक्ति यह आवश्यक समझेगा कि हड़ताल भंग के पूर्व कोई समझौता हो।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपके कहने का तात्पर्य मैं समझ गया। लेकिन अब विलम्ब करने की कोई आवश्यकता नहीं है। बेचारे मेहरचन्द पर इन दिनों विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा है। उसकी इस नाजुक अवस्था से कोई अनुचित लाभ उठाना ठीक नहीं है। फिर भी यथासम्भव मजदूरों के भी अधिकारों की रक्षा होनी चाहिये।"

रामदयाल शर्मा—"समझौते की चर्चा करते समय हम लोग बाबू मेहरचन्द की विपत्तियों तथा कठिनाइयों का अवश्य ही पूरा पूरा ध्यान रखेंगे। हमारा विचार है कि आज रातको आप एक वार फिर कष्ट करें। उस समय हम लोग निश्चिन्त रूप से मजदूरों के हित पर विचार करते हुए समझौते को कोई स्कीम सोच लेंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"ठीक है। मैं चला आऊंगा। अभी तक आपने मजदूरों को आर्थिक सहायता देने का कोई प्रबन्ध किया है या नहीं?'

रामदयाल शर्मा—"हाँ, प्रबन्ध हो गया है और इस कार्य के लिये इस समय मैंने आपको यहां आने का कष्ट दिया है। पांच हजार रुपये से तो किसी तरह काम चल जायगा?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"हाँ, पांच हजार से बेचारों की किसी प्रकार रक्षा हो जायगी।"

तिजोरी से नोटों के बंडल निकाल कर स्वामीजी को देते हुए पं० रामदयाल शर्मा बोले—"इसके वितरण का कष्ट आप ही स्वीकार कीजिये। कुछ मजदूरों से आपका यथेष्ट परिचय भी है। उनकी सहायता से आप आसानी से यह काम कर लेंगे।"

बेचारा रामपलट आज ही अस्पताल से मुक्ति पाकर आया था। एक

पैर का रहने के कारण यह तो विशेष काम काज के योग्य था ही नहीं। इसके साथ ही मील का वायुमण्डल खराब रहने के कारण शर्माजीने उसे अपने यहां ही रोक रखा था। इस समय वह भी उन लोगों के समीप ही बैठा था। स्वामीजी के हाथों में नोट के बंडल जाते देख कर वह बोला—"खूब सावधानी से बांटियेगा। हड़ताल के दिनों में मजदूर उदण्ड हो जाते हैं, कहीं लूट मार न मचा दें।"

उसकी बातें सुन कर शंकित भाव से स्वामीजी बोले—"इसका कहना तो ठीक है। विपत्ति के दिनों में मनुष्य बुद्धि खो बैठता है। रुपये की देख रेख करने के लिये मुझे ५-७ बलवान आदमी चाहिये।"

मुस्कराते हुए पं० रामदयाल शर्मा ने कहा—"आपके योगबल के सामने मजदूरों की उदण्डता क्या कर सकती है। जब आप लोगों को भी रक्षक की आवश्यकता पड़ेगी, तब हम लोगों का तो इस दुनियां में जीना भी कठिन हो जायगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"हर समय योगबल से ही काम नहीं चल सकता है। तोप छोड़ने की परिस्थिति उत्पन्न होने पर ही उसका उपयोग किया जाता है। साधारण परिस्थिति में तोप के बदले बन्दूक, संगीन अथवा लाठी का भी सहारा लेना पड़ता है। इसी तरह इस समय मेरा योगबल कोई काम नहीं कर सकता है। रुपये पैसे की बातें तो सांसारिक माया जाल है। इसमें सांसारिक साधनों का ही सहारा लेना पड़ेगा।"

पं० रामदयाल शर्मा ने उसी समय पांच आदमी उनके साथ कर दिया। चलते समय उन लोगों ने रुपया बांटने की प्रणाली आदि के सम्बन्ध में भी परामर्श कर लिया। समझौते की स्कीम पर विचार करने के लिये रात्रि के समय फिर पधारने का वचन दे स्वामीजी सदलबल वहां से चलने लगे। परन्तु थोड़ी दूर जाकर वे फिर लौट आये और शर्माजी को भी साथ चलने के लिये बाध्य करने लगे। कई कामों का बहाना कर वे स्वामीजी की बात टालना चाहते थे। परन्तु हठ कर स्वामीजी उन्हें अपने साथ ले ही गये।

तीसवाँ अध्याय

अपने स्थान पर लौटते ही स्वामी ज्ञानानन्द ने मजदूरों के ५-७ प्रमुख अगुओं को बुलाया। उन लोगों के पधारने पर उन्हें सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा—"आज तुम लोगों को मैंने एक बड़ा ही आवश्यक कार्यसे बुलाया है। हड़ताल के कारण तुम लोगों को बहुत कष्ट हो रहा है, यह सोचकर पं० रामदयाल शर्मा ने सहायता के लिये पांच हजार रुपया इकट्ठा किया है। तुम लोग इन्हें अच्छी तरह से पहचानते हो। भले ही दल-बन्दी के कारण इनके सम्बन्ध में तुम्हारे हृदय में किसी प्रकार की गलतफहमी हो, फिर भी मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूं कि ये तुम्हारे सच्चे शुभचिन्तक हैं। इस समय अधिक कुछ न कह कर मैं तुम लोगों से अनुरोध करता हूं कि शान्तिपूर्वक यहां से इस समय प्रत्येक मजदूर दो रुपये के हिसाब से ले जाओ।"

प्रसन्नतापूर्वक एक मजदूर ने कहा—"इस मौके पर हम लोगों की सहायता करने के लिये जो आगे बढ़े, वही हमारा नेता है। पण्डित जी की इस उदारता को मजदूर आजन्म नहीं भूलेंगे।

स्वामी ज्ञानानन्द—"सब मिला कर इस समय कितने हड़ताली मजदूर हैं?"

एक मजदूर—"लगभग दो हजार।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"अब समय नष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम लोग सभी को बुला कर शान्तिपूर्वक रुपये बांट लो।"

स्वामीजी की बातें सुन कर वे मजदूरों को बुलाने चले गये। लगभग एक घटे में मजदूर सेना वहां आ पहुँची। गलती से ये लोग नोट ही लाए थे। रुपया रहने पर बाँटने में विशेष सुविधा होती। प्रत्येक पांच आदमी के पीछे एक नोट देकर किसी प्रकार वितरण कार्य समाप्त किया गया। रुपये पाकर मजदूर बड़ी प्रसन्नता के साथ "पं० रामदयाल शर्मा की जय," स्वामी जी की जय" आदि के नारे लगाते हुए अपने स्थान को लौट गये।

इस समय तक सन्ध्या हो चली थी। शर्माजी स्वामीजो से भी साथ चलने का अनुरोध करने लगे। दैनिक चर्या का समय हो जाने के कारण स्वामीजी उस समय उनके साथ न जा सके। तीन-चार घंटे के बाद उन्होंने उनके यहां पधारने का बचन दिया। स्वामोजी से वचन लेकर पं० रामदयाल शर्मा अपने जमादारों के साथ लौट आये। चलते समय स्वामीजी के आग्रह से वे शेष रुपया भी अपने साथ लेते आये।

ठीक आठ बजे के समय स्वामोजी पं० रामदयाल शर्मा के यहां पहुँचे। वे उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके पहुंचते ही वे लोग समझौते की स्कीम तैयार करने में व्यस्त हो गये। थोड़ी देर तक इस सम्बन्ध में बातें करनेके बाद स्वामीजो ने कहा—"अच्छा हो कि हम लोग इस समय बाबू मेहरचन्द से भी परामर्श कर लें। ऐसा करने से हम लोगों का मार्ग बहुत ही सरल हो जायगा।"

कुछ सोचकर पं० रामदयाल शर्मा बोले—"हम लोगों ने इस समय तक मजदूरों से कोई स्वीकृति नहीं ली है। सम्भव है कि हम लोगों की बातें मानने के लिये वे तैयार नहीं हो। ऐसी दशा में बाबू मेहरचन्द के

सामने हम लोगों को व्यर्थ ही लज्जित होना पड़ेगा। इस कारण इस समय उनके साथ परामर्श करना ठीक नहीं होगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"इसकी आप कोई चिन्ता नहीं करें। अभी मैंने इस सम्बन्ध में परामर्श कर लिया है। वे आपका नेतृत्व स्वीकार करने के लिये तैयार हैं। आप जो समझौता कर देंगे, उन्हें सर्वथा मान्य होगा।"

प्रसन्नता के साथ पं० रामदयाल शर्मा बोले—"तब तो आपने एक बहुत बड़ा काम समाप्त कर डाला है। मैं मजदूरों की प्रवृत्ति के सम्बन्ध की बातें सोचकर अधिक चिन्तित हो रहा था। मुझे भय था कि कहीं राम-कुमार प्रसाद कोई चाल न चले।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"रुपया बाँटने के समय आप स्वयं उपस्थित थे, इसका मजदूरों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। वे आपको अपना सच्चा शुभ-चिन्तक समझने लगे। यही सोच मैंने उस समय आपको साथ चलने के लिये बाध्य किया था।"

रामदयाल शर्मा—"क्या इस समय ही बाबू मेहरचन्द से परामर्श करने की आवश्यकता है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"अवश्य। ऐसा करने से हम लोगों के सामने कोई बाधा नहीं रह जायगी। मजदूरों से तो स्वीकृति ले ही ली गयी है। यदि बाबू मेहरचन्द से भी परामर्श ले लिया जायगा, तो हम लोगों की सफलता में कोई सन्देह नहीं रह जायगा।"

रामदयाल शर्मा—"आपका अनुमान सर्वथा ठीक है। हम लोगों को इसी समय उनके यहां चलना चाहिये। आज रात में ही मैं इस काम को समाप्त कर देना चाहता हूं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"मेरे जाने की क्या आवश्यकता है ? अकेले ही आप परामर्श कर आवें।"

रामदयाल शर्मा—"नहीं, आपको भी साथ चलना पड़ेगा।"

शर्माजी के विशेष आग्रह से स्वामीजी भी उनके साथ चलने के लिये तैयार हो गये। उसी समय वे लोग मोटर के द्वारा बाबू मेहरचन्द की कोठी पर आ पहुंचे। उस समय अपने खास कमरे में बैठकर वे पुस्तक पढ़ रहे थे। जमादार के द्वारा इन लोगों के आगमन का समाचार पाकर तुरत बाहर आकर उन्होंने बड़े आदर के साथ उन लोगों का स्वागत किया।

इन लोगों को यथा स्थान बिठलाते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"आप लोगों ने आज अनायास इस प्रकार दर्शन देने की कृपा की है, यह मेरे लिये बड़े ही सौभाग्य की बात है।"

मुस्कराते हुए स्वामी ज्ञानानन्द बोले—"इस जमाने में कोई किसी के यहाँ बिना स्वार्थ के नहीं जाता है। हम लोग भी एक बड़े कार्य के लिये आपके यहां आये हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"बोलिये, इस दास से कौन सी सेवा हो सकती है ?"

पं० रामदयाल शर्मा की ओर इशारा करते हुए स्वामीजी बोले—"आप इनको अवश्य ही पहचानते होंगे। ये आप लोगों के बड़े ही शुभचिन्तक हैं। मजदूरों के प्रति भी इनके हृदय में काफी सहानुभूति है। आज कई हजार रुपये से इन्होंने मजदूरों की सहायता की है। अब ये हड़ताल की समाप्ति का उद्योग करना चाहते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"इस सम्बन्ध में बड़ी प्रसन्नता के साथ मैं आप लोगों की आज्ञा मानने के लिये तैयार हूं। इस संसार से कूच करते समय चाचा

जी ने शर्माजी का नाम विशेष रूप से उल्लेख किया था। मैं तो स्वयं आपसे मिलने वाला था। बड़े ही सौभाग्य की बात है कि आज स्वतः आपने दर्शन दे दिया।"

रामदयाल शर्मा—"आपके चाचा साहब की मुझ पर विशेष कृपा रहती थी। अन्तिम समय तक वे मुझे याद करते रहे, यह मेरे लिये बड़े ही गौरव की बात है।"

बाबू मेहरचन्द—"हड़ताल रोकने की भी आपने बराबर चेष्टा की। हमारे दुर्भाग्य के कारण यह चेष्टा सफल नहीं हो सकी।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"माफ कीजियेगा। हड़ताल रोकने की चेष्टा में आपका हित प्रधान नहीं था। मजदूरों के हित की दृष्टि से ही इन्होंने हड़ताल का विशेष विरोध किया था। हाँ, इस उद्योग से मजदूरों के साथ साथ यदि आपको भी लाभ पहुंचता, तो इसके लिये शर्माजी निश्चय ही किसी प्रकार दुखित नहीं होते।"

मुस्कराते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"किसी का लाभ देख कर आप जैसे उपकारी जीव किस प्रकार दुखित हो सकते हैं?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"खैर, अब हम लोगों को काम की बात करनी चाहिये।"

बाबू मेहरचन्द—"बोलिये, मुझसे कौन सी सेवा हो सकती है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"हम लोगों के आने का उद्देश्य आपको मालूम ही हो गया है। हड़ताल की समाप्ति के सम्बन्ध में हम लोग आपसे परामर्श करना चाहते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"इस सम्बन्ध में आप लोग जो फैसला कर देंगे, वह मुझे सर्वथा मान्य होगा।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"यह आपकी उदारता है। लेकिन इस भाव से

हम लोग किसी प्रकार का अनुचित लाभ उठाना नहीं चाहते हैं। मजदूरों से हम लोगों ने स्वीकृति ले ली है। हमलोगों के निर्णय को मानने के लिये वे तैयार हैं। अब हमलोग कोई ऐसी स्कीम बनाना चाहते हैं, जिस से आपकी भी विशेष क्षति न हो। और मजदूर भी अपना उचित अधिकार प्राप्त कर लें।"

बाबू मेहरचन्द—"मजदूरों से तो आपलोगों ने स्वीकृत ले ही ली है। अब मेरी स्वीकृति भी स्वीकार कीजिये। आप लोग जो निर्णय कर देंगे, उसे मैं आँख मूँद कर मान लूँगा।"

रामदयाल शर्मा—"मैं जानता हूँ कि आप हमलोगों का निर्णय मान लेंगे। परन्तु आपकी समझ से उस निर्णय का वास्तविक रूप क्या होगा, इस सम्बन्ध में हमलोग आपसे कुछ परामर्श करना चाहते हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"इस समय मेरा चित्त स्थिर नहीं है। मैं आप लोगों को कोई विशेष परामर्श देने में असमर्थ हूं। आप लोग स्वयं कोई निर्णय कर दें।"

कुछ सोचकर स्वामी ज्ञानानन्द बोले:—"हमारे विचार से अन्तिम निर्णय का कार्य इस समय स्थगित रखिये। कल मजदूरों की एक सभा हो, उसमें एक निर्णय कमिटी बनायी जाय, जिसका निर्णय दोनों दलोंको मान्य हो। वह कमिटी दो सप्ताह के भीतर अपना फैसला पेश करेगी। इस बीच में मजदूर यथापूर्व काम करते रहें। यदि कमिटी का फैसला पीछे बाबू मेहरचन्द स्वीकार नहीं करें तो मजदूरों को फिर हड़ताल करने को स्वतंत्रता होगी।"

बाबू मेहरचन्द—"मेरी ओर से आप लोग सर्वथा निश्चिन्त रहें। मुझे आपका निर्णय मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी।"

पं० रामदयाल शर्मा को भी स्वामीजी की यह राय पसन्द आई। उन्होंने भी इस आधार पर ही कार्य करने का निश्चय किया। अब निर्णायक कमिटी के सदस्यों के चुनाव का प्रश्न छिड़ा। बाबू मेहरचन्द ने पं० रामदयाल शर्मा तथा स्वामी जी के सिवा अन्य किसी व्यक्ति को सदस्य बनाने की आवश्यकता नहीं समझी। थोड़ी देर तक इसी प्रश्न को लेकर वादविवाद होता रहा। अन्त में इन्हीं दो सज्जनों की कमिटी बनने का निर्णय किया गया और साथ ही इन्हें यह भी अधिकार दिया गया कि इच्छानुसार वे सदस्यों की संख्या बढ़ा सकते हैं।

इस प्रकार परामर्श कर दोनों व्यक्ति बाबू मेहरचन्द के यहां से लौट आये। उस समय तक ग्यारह बज चुका था। पं० रामदयाल शर्मा के विशेष आग्रह से स्वामी जी ने रात उनकी कोठी पर ही बितायी।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही स्वामी जी अपने स्थान पर लौट आये। वहां वे सभा की योजना करने की चेष्टा में लगे। दैनिक चर्चा से निवृत होकर उन्होंने तुरत कुछ प्रमुख मजदूरों को बुलाया। उन लोगों ने भी सहर्ष सभा का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। संध्या समय सभा होने की बात ठहरी। उसी समय सभी मजदूरों को इस बात की सूचना दे दी गयी।

एक आदमी के द्वारा सभा के समय की सूचना पं० रामदयाल शर्मा के पास भी भेज दी गयी। नियमित समय पर वे वहां आ पहुंचे। इस समय मजदूरों में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा हो चली थी। वास्तव में बड़े ही मौके पर इन की सहायता उन्हें प्राप्त हुई थी। यदि कल वे मजदूरों की सहायता नहीं करते तो उन्हें बड़े ही संकट का सामना करना पड़ता। उनके पधारते ही लोगों ने जय जयकार किया। इस समय किसी के हृदय में उनके प्रति

विरोध का भाव नहीं था। बाबू रामकुमार प्रसाद के कट्टर समर्थक भी इनसे सहानुभूति रखने लगे थे।

नियमित समय पर स्वामी ज्ञानानन्द के सभापतित्व में सभा की कार्यवाही आरम्भ हुई। अपने भाषण के आरम्भ में ही रामदयाल शर्मा की चर्चा छेड़ते हुए उन्होंने कहा:—"मेरे प्यारे भाइयो! इस समय मेरे बगल में जो सज्जन बैठे हैं, उनसे आप इस समय तक काफी परिचित हो चुके हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि प्रारम्भ में इनके सम्बन्ध में आपके हृदय में भ्रान्त धारायें उत्पन्न कर दी गयी थीं। परन्तु अब आपको विश्वास हो गया होगा कि ये आपके स्वार्थों के विरोधी नहीं, सच्चे समर्थक हैं। हमारा दावा है कि आगे चलकर आपका यह विश्वास और भी पुष्ट होगा। आज एक बहुत बड़े उद्देश्य को लेकर यह सभा हो रही है। गत दो सप्ताह से आप लोगों ने हड़ताल कर रखी है। अपने अधिकारों की रक्षा के लिये प्रत्येक व्यक्ति को युद्ध करने का अधिकार है और आप लोगों का भी वह अधिकार अस्वीकृत नहीं किया जा सकता है। अपने स्वत्वों की रक्षा के लिये मजदूरों को अवश्य हड़ताल का सहारा लेना चाहिये। परन्तु आपलोगों को मालूम है कि प्रारम्भ में ही हमलोगों ने इस हड़ताल का विरोध किया था। इस विरोध का हम लोगों के पास यथेष्ट कारण थे। इस समय उनका जिक्र करना मैं निरर्थक समझता हूं। संयोगवश हम लोग हड़ताल रोकने में सफल नहीं हो सके। आप लोगोंको मालूम होगा कि हड़ताल प्रारम्भ होने के बाद हम लोगोंने इसका कोई विरोध नहीं किया। उस समय से हम लोग हृदय से इसकी सफलता की ही कामना करते रहे हैं। इसे आप हमारी शुभेच्छा का प्रमाण समझ सकते हैं।

"आप इस बातको स्वीकार करेंगे कि समझौतेका उपयुक्त समय आ गया है। आप यह सुन कर और भी प्रसन्न होंगे कि आपके कई प्रमुख व्यक्तियों से सलाह लेने के बाद हम लोगों ने मील मालिकों के साथ समझौते की चर्चा की और बहुत अंशों में हम लोग इस में सफल भी हुए हैं। मैं आप लोगों से पूछना चाहता हूं कि क्या आप सम्मानपूर्ण समझौते के लिये तैयार हैं?"

चारों ओर से आवाज आई—"आप लोगों का निर्णय मानने में हमें कोई आपत्ति नहीं है।"

कोलाहल शान्त होने पर स्वामी ज्ञानानन्द फिर इस प्रकार बोलने लगे—"आप लोग सचमुच समझौते के लिये तैयार हैं, यह जान कर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई। अब मैं आप लोगों को समझौते का वास्तविक स्वरूप बतलाना चाहता हूं। मील के वर्तमान मालिक बाबू मेहरचन्द आप लोगों को हर प्रकार की उचित सुविधा देने के लिये तैयार हैं। अधिक दिनों तक हड़ताल जारी रखने से दोनों पक्ष के क्षति ग्रस्त होने की सम्भावना है। इस कारण हम लोगों ने यह निर्णय किया है कि समझौते की शर्तें तैयार करने के लिये एक कमिटी बनायी जाय और वह कमिटी दो सप्ताह के भीतर अपनी रिपोर्ट पेश करे। बाबू मेहरचन्द ने उस कमिटी का निर्णय मानने की स्वीकृति दी है। उसकी रिपोर्ट निकलने के समय तक हड़ताल जारी रखने से दोनों पक्षों की हानि होगी। इसलिये हम लोगों का अनुरोध है कि कल से आप लोग काम आरम्भ कर दें। यदि पीछे कमिटी का निर्णय मील मालिक नहीं मानेंगे तो आप लोगों को फिर हड़ताल आरम्भ करने का अधिकार होगा। अब मैं इस सम्बन्ध में आप लोगों की सम्मति चाहता हूं।"

इसी समय चारों ओर से आवाज आई—"हम लोगों को आप का निर्णय स्वीकार है।"

शान्ति स्थापित होने पर स्वामीजी ने अपना भाषण फिर आरम्भ किया। मजदूर संगठन की आवश्यकता बतलाते हुए उन्हों ने लोगों से अपील की कि पूर्ण शान्ति स्थापित होने पर वे लोग अपना एक जोरदार संगठन करें। इस प्रकार का संगठन प्रत्येक मील में होना चाहिये। सभी मीलों के प्रतिनिधियों की एक केन्द्रीय कमिटी होनी चाहिये, जो मजदूरों की भलाई की देख रेख किया करे। इस प्रकार लगभग एक घटे तक भाषण देने के पश्चात करतलध्वनि के साथ स्वामीजी ने अपना भाषण समाप्त किया।

इसके बाद पं० रामदयाल शर्मा ने भी एक संक्षिप्त भाषण दिया। अपने भाषण में उन्हों ने आजन्म मजदूरों की सेवा करने की इच्छा प्रकट की और मजदूरों को विश्वास दिलाया कि यदि वे उनकी सेवा स्वीकार करेंगे, तो वे उन्हें अवश्य ही सच्चे सेवक के रूप में पायेंगे। इसके बाद इस क्षेत्र में अवतीर्ण होने का संक्षिप्त इतिहास बतलाते हुए उन्होंने रामपलट की दुर्घटना का उल्लेख किया। उनके भाषण की समाप्ति के समय भी भीषण करतलध्वनि हुई।

उनके भाषण के बाद दो-एक मजदूरों ने भी टूटी फूटी भाषा में अपना भाव व्यक्त किया। उन लोगों ने कल से काम आरम्भ करने की अपने साथियों से अपील की। इसके साथ ही उन्होंने पं० रामदयाल शर्मा तथा स्वामीजी को अपनी भक्ति का विश्वास दिलाया।

इस प्रकार निर्विघ्न रूप से सभा की कार्यवाही समाप्त हुई। किसी ने भी सभा स्थल में विरोधात्मक भाव का परिचय नहीं दिया। स्वामीजी को

इतनी सफलता की आशा नहीं थी। वे समझते थे कि विरोधियों के द्वारा अवश्य ही कोई न कोई षड्यंत्र रचा जायगा। वे चुपचाप बैठ जांयगे, ऐसा उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था।

फिर भी इस सफलता से वे किसी प्रकार निश्चिन्त नहीं हुए। विरोधी अन्तिम समय तक अपना जाल फैला सकते हैं, यह सोच कर बारह बजे रात तक अपने मन्तव्यों का प्रचार करने के लिये उन्होंने कई विश्वासी आदमियों को नियुक्त कर दिया। तीन-चार घटे तक और ठहरने का उन्होंने पं० रामदयाल शर्मा से अनुरोध किया। ठहरना आवश्यक समझ कर उन्होंने भी यह अनुरोध स्वीकार कर लिया।

उस समय से वे लोग बराबर मजदूरों के क्वाटर में घूमते रहे। टोलियां बना कर मजदूर भी उन्हें अपने दुःख की कहानी सुनाने लगे। उनका दुखपूर्ण जीवन प्रत्यक्ष देख कर शर्माजी की आंखें डबडबा आई। उनके हृदय ने कहा कि अपने परिश्रम तथा तपस्या से दुनियां को सुखी रखने वाले इन जीवित देवताओं की सेवा ही ईश्वर की सच्ची सेवा है। उनकी आत्माने कहा कि यदि किसी को अपना जीवन सार्थक करना हो तो वह नीच कहे जाने वाले इन तपस्वियों की पूजा करे। सच्चे हृदय से इनकी पूजा कर घोर दुष्कर्मी भी अपने पापों से मुक्ति पा सकता है।

लगभग दस बजे रात्रि तक वे इसी प्रकार घूम कर मजदूरों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते रहे। इसके बाद पं० रामदयाल शर्मा ने टेलीफोन के द्वारा बाबू मेहरचन्द को सारी कार्यवाही की सूचना दे दी। हड़ताल की समाप्ति का समाचार पाकर उनका प्रसन्न होना स्वाभाविक ही था। उन्होंने उसी समय अपने मैनेजर को कार्यारम्भ का आयोजन करने

की सूचना दे दी। इस प्रकार सारा प्रबन्ध कर पं० रामदयाल शर्मा अपने घर लौट आये। स्वामीजी भी अपने स्थान पर जाकर विश्राम करने लगे।

दूसरे दिन निर्धारित समय पर मील का प्रधान फाटक खुला और मजदूरोंने "रामदयाल शर्मा की जय" "स्वामी ज्ञानानन्द की जय" तथा "मजदूर आन्दोलन की जय" आदि की ध्वनि करते हुए अपने अपने काम पर डट गये।

इक्कतीसवाँ अध्याय

सन्देह की मात्रा बढ़ने पर मनुष्य के हृदय में वेचनी का प्रारम्भ होता है। यह बेचैनी बढ़ कर कभी कभी उग्र रूप धारण कर लेती है। उस समय मनुष्य व्याकुल हो जाता है, अपना सन्देह दूर करने के लिये। बाबू मेहरचन्द को भी आज यही व्याकुलता परेशान कर रही है। स्वामी ज्ञानानन्द का वास्तविक परिचय जानने के लिये वे उत्सुक हो रहे हैं।

पहले दिन स्वामीजी को देखकर उन्हें किसी प्रकार का सन्देह नहीं हुआ। परन्तु पं० रामदयाल शर्मा के साथ जब वे परसों उनके घर पर आये तो न जाने क्यों एकाएक उनके हृदय में सन्देह की उत्पत्ति हो गयी? सन्देह का प्रधान कारण यह था कि स्वामीजी प्रस्थान करते समय इस तरह बेरोकटोक निकले, जैसे वे उस मकानके रास्तों से अच्छी तरह परिचित हों। इसके साथ ही पेशाव लगने पर वे बिना किसी मार्ग प्रदर्शन के ही पेशाव करने चले गये थे। उस मकान में वे उसके पहले कभी नहीं आये थे।

फिर भी उसके प्रत्येक स्थान से वे परिचित से मालूम पड़ते थे। यह अवश्य ही आश्चर्य और सन्देह की बात थी।

इसके साथ ही बाबू मेहरचन्द के सन्देह का एक कारण और था। स्वामीजी बोलते बोलते जब उत्तेजित हो जाते थे तो उनकी आवाज रत्नेश्वर प्रसाद की आवाज से बहुत कुछ मिल जाती थी। उत्तेजना समाप्त होने पर फिर स्वर में परिवर्तन हो जाता था। थोड़ी देर तक अध्ययन करने के बाद बाबू मेहरचन्द को इस बात का सन्देह होने लगा कि स्वामीजी बोलते समय अपने स्वाभाविक स्वर में परिवर्तन करने की चेष्टा करते हैं।

आवश्यक बातों में लगे रहने के कारण उस समय तो उनके सन्देह को पुष्टि का अवसर न मिल सका। परन्तु उन लोगों के चले जाने पर उनका सन्देह धीरे धीरे अंकुरित होने लगा। एक दिन के भीतर ही उसने उग्र रूप धारण कर लिया। अब वे अपने मन का संशय दूर करने के लिये अत्यन्त व्यग्र हो उठे।

सन्देह की मात्रा अधिक बढ़ने पर उन्होंने अपना मनोभाव लक्ष्मी पर प्रकट किया। उनकी बातें सुनने के बाद आश्चर्य के साथ उसने कहा — "क्या रत्नेश्वर बाबू ने ही स्वामीजी का स्वांग रचा है?"

बाबू मेहरचन्द—"मुझे तो ऐसा ही सन्देह हो रहा है।"

लक्ष्मी—"परन्तु मैं तो इस सन्देह का कोई कारण नहीं देखती हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"क्यों? क्या तुम्हें उनके सम्बन्ध में कोई पता है?"

लक्ष्मी कुछ बोलना चाहती थी। पर मन ही मन कोई बात सोच कर वह चुप हो रही। उसे चुप देख कर बाबू मेहरचन्द बोले—"यदि तुम्हें उनके सम्बन्ध में कोई खबर मिली हो तो कह सुनाओ। मुझे बतलाने से किसी प्रकार की बुराई नहीं हो सकती है।"

मुस्कराते हुए लक्ष्मी ने उत्तर दिया—"बुराई क्यों नहीं हो सकती है ? आपको मालूम होना चाहिये कि रत्नेश्वर बाबू की सभी बातें मैं आपको नहीं बतला सकती हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"मुझे खूब मालूम है। तुम लोगों की सभी बातें मैं जान सकूं, अपने को इतना भाग्शाली मैं हरगिज नहीं समझता हूं। फिर भी यदि तुम्हें कोई बात मालूम हो तो जल्दी बतलाओ। व्यर्थ तंग करने से कोई लाभ नहीं है।"

लक्ष्मी—"रत्नेश्वर बाबू सम्भवतः कलकत्ते में ही हैं और वे शीघ्र ही हम लोगों से मिलेंगे। परन्तु वे स्वामी ज्ञानानन्द के रूप में हैं, ऐसा मुझे विश्वास नहीं होता।"

बाबू मेहरचन्द कुछ चिढ़ते हुए बोले—"तुम्हें कुछ मालूम नहीं है। केवल बातें बना रही हो। इतना कह कर वे बाहर चले गये।"

इस समय तक चार बज चुके थे। सूर्यास्त हो जाने पर स्वामी ज्ञानानन्द के यहां चल कर अपना सन्देह दूर करने की बात सोच कर किसी प्रकार दिन बिताने के विचार से वे एक उपन्यास पढ़ने लगे।

सूर्यास्त होते ही वे मोटर पर मील की ओर चल पड़े। वहां पहुंचने पर उन्होंने स्वामीजो के सामने पचासों मजदूरों को बैठा देखा। मजदूरों की उपस्थिति में उन्हें उनके पास जाने में कुछ संकोच होने लगा। मोटर की आवाज के द्वारा स्वामीजी को भी उनके आगमन की सूचना मिल गयी थी। पांच मिनट के भीतर ही उन्होंने मजदूरों से बातें समाप्त कर बिदा कर दिया। उनके चले जाने के बाद बाबू मेहरचन्द स्वामी जीकी सेवामें उपस्थित हुए। बैठने के लिये एक आसन देते हुए स्वामीजी मुस्करा कर बोले—"आज से तो आपकी मोलमें काम शुरू हो गया।"

यह आवाज और भी स्पष्ट थी। पता नहीं, स्वामीजी ने जान बूझ कर अपने स्वाभाविक स्वर में इस समय बातें कीं या जल्दीबाजी में उनसे यह गलती हो गयी। कुछ भी हो, अब मेहरचन्द को इस बात में जरा भी सन्देह नहीं रहा कि बाबू रत्नेश्वर प्रसाद ही स्वामी ज्ञानानन्द हैं। उन्हों ने भी मुस्कराते हुए उत्तर दिया—"मजदूर तो अवश्य ही काम पर आ गये, लेकिन आपकी हड़ताल कब दूर होगी?"

आश्चर्य के साथ स्वामीजी ने उत्तर दिया—"आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई।"

बाबू मेहरचन्द—"रहने दीजिये अब यह चतुरता। घर के लोग आप को देखने के लिये बहुत उत्सुक हो रहे हैं। मैं तो आपको परसों ही पहचान गया था। फिर भी मन में कुछ सन्देह था। अब वह सन्देह भी दूर हो गया।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आप यह सब क्या बोल गये?"

बाबू मेहरचन्द—"रत्नेश्वर बाबू! अब पर्दा डालने से कोई लाभ नहीं है।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"अब बात समझ में आई। आप भ्रमवश शायद मुझे कोई दूसरा आदमी समझ रहें हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"अब तो ठीक समझ रहा हूं। पहले ही आपको भ्रमवश एक सिद्ध संन्यासी समझता था।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"अब आपकी दृष्टि में क्या मैं कोई पाखण्डी हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"अवश्य।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"शिव! शिव!! आपके मुंह से मैं यह क्या सुन

रहा हूं। आप जैसे सज्जन पुरुष से मुझे इस अपमान की आशा कदापि नहीं थी।

बाबू मेहरचन्द—"क्या आप मुझे भ्रम में डालना चाहते हैं?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"क्षमा कीजियेगा, इस समय आपके साथ बातें करनी उचित नहीं समझता हूं। शायद आप किसी रंग में मस्त हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"ओफ! अब आप मुझे भ्रम में नहीं डाल सकते।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"मैं आपकी बात का उत्तर देने में असमर्थ हूँ।"

स्वामीजी की ये बातें सुनकर बाबू मेहरचन्द बड़े चक्कर में पड़े। उन्हें भी इस बात का सन्देह होने लगा कि कहीं वे ही न भ्रम में हों। उनके सामने कोई ऐसा प्रमाण नहीं था, जिससे वे उन्हें निश्चय के साथ रत्नेश्वर प्रसाद कह सकते थे। स्वामी जी की लम्बी दाढ़ी किसी भी प्रकार कृत्रिम नहीं मालूम पड़ती थी। रत्नेश्वर प्रसाद को गये अभी लगभग दो मास ही व्यतीत हुए थे। इतने थोड़े दिनों में दाढ़ी इतनी बड़ी नहीं हो सकती है। इस प्रकार उन्हें अपने विश्वास की वास्तविकता पर सन्देह होने लगा। कुछ सोचकर वे बोले—"आपकी आवाज रत्नेश्वर प्रसाद की आवाज से बहुत कुछ मिलती जुलती है। मेरा तो विश्वास है कि आप ही रत्नेश्वर प्रसाद हैं।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"आपकी किसी बात का उत्तर देना मैं अपमान जनक समझता हूँ।"

बाबू मेहरचन्द—"सन्देह दूर कर देने में क्या हर्ज है?"

स्वामी ज्ञानानन्द—"जिस सन्देह का कोई आधार हो, उसे दूर करने

की तो चेष्टा की जा सकती है। परन्तु निराधार सन्देह किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?"

अब बाबू मेहरचन्द बड़ी घबराहट में पड़े। उनका विश्वास धीरे धीरे फिर सन्देह के रूप में परिणत होने लगा। केवल दो-एक बार उन्होंने स्वर की सफलता पायी थी। इसी आधार पर ऐसे विख्यात महात्मा पर अधिक सन्देह करना ठीक नहीं समझ कर उन्होंने कहा—"क्षमा कीजियेगा। भ्रमवश मैं आपको बाबू रत्नेश्वर प्रसाद समझ रहा था। वे मेरे अन्यतम मित्र हैं। इन दिनों मुझसे रुष्ट होकर कहीं गुमवास कर रहे हैं। उनकी आवाज से आपकी आवाज की बहुत कुछ समता है, इस कारण मुझे सन्देह हो गया था।

मुस्कुराते हुए स्वामी जी बोले—"अच्छा, ऐसी बात है! मैं तो समझता था कि आप मुझे कोई खूनी या डाकू समझ रहे हैं।"

कुछ लज्जित होते हुए बाबू मेहरचन्द ने उत्तर दिया—"भला, कौन ऐसा मूर्ख होगा, जो आप जैसे महात्मा को खूनी या डाकू समझेगा। मेरा विश्वास है कि इस भ्रमजनिक अपराध के लिये आप मुझे अवश्य क्षमा कर देंगे।"

स्वामी ज्ञानानन्द—"इसमें अपराध की कोई बात नहीं है। भ्रम प्रत्येक व्यक्ति से हो जाता है।"

स्वामीजी की यह उदारता देख कर बाबू मेहरचन्द का संकोच और भी बढ़ने लगा। अधिक देर तक वहां ठहरने में अपने को असमर्थ पाकर एक बार और क्षमा मांगते हुए, किसी जरूरी काम का बहाना बना कर वे चल पड़े। अभी वे २५-३० गज ही गये होंगे कि स्वामीजी किसी जरूरी काम

के लिये उन्हें पुकारने लगे। समीप आने पर बाबू मेहरचन्द के आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। इस समय तक लम्बी दाढ़ी न मालूम कहां हवा हो गयी थी। गेरुआ वस्त्र पहने बाबू रत्नेश्वर प्रसाद स्पष्ट रूप से सामने खड़े मालूम पड़ रहे थे। आवेश के साथ उन्हें छाती से लगाते हुए बाबू मेहरचन्द बोले—"इस प्रकार मुझे परेशान करने में आपको कौन सा मजा मिला? यदि यह रूप पहले ही दिखला देते तो क्या हर्ज था?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"यदि अभी नहीं मजा मिला तो आगे चल कर मजा मिलेगा। चलिये, बहन लक्ष्मी को अभी मैं इस समय की सारी कहानी सुनाता हूं। फिर देखियेगा कि कैसा मजा मिलता है।"

बाबू मेहरचन्द—"हां, आपके चक्करमें में तो मैं आ गया। अच्छा, अब यहां बिलम्ब करना ठीक नहीं है। चलिये घर पर ही निश्चिन्तो से सभी बातें हो सकेंगी।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इस समय मैं एकाएक यहां से गायब होना नहीं चाहता हूं। ऐसा होने से लोगों के हृदय में सन्देह उत्पन्न हो जायगा। यद्यपि मैंने इस समय मजदूरों के लाभ का ही काम किया है, फिर भी वास्तविक भाव प्रकट हो जाने पर लोग समझेंगे कि मजदूरों को क्षतिग्रस्त करने के लिये मील मालिकों की ओर से यह षड़यन्त्र रचा गया था। इस प्रकार की बात फैलने से विरोधियों को भी फिर से अपना चंगुल जमाने का अवसर मिल जायगा।"

बाबू मेहरचन्द—"फिर आप क्या करना चाहते है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मैं दो एक दिनों तक यहां इस रूप में और रहना चाहता हूं। उसके बाद सभी लोगों से बिदा लेकर यहां से चल दूंगा।

ऐसा करने से किसी को भी सन्देह नहीं हो सकता है। क्योंकि साधू सन्यासी तो एक स्थान पर रहते ही नहीं।"

बाबू मेहरचन्द—"क्या असली बात आप पं० रामदयाल शर्मा से भी छिपाना चाहते हैं?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"हां, असली बात जान लेने पर वे उत्साहहीन हो जायंगे। भविष्य में किसी पर विश्वास करने का उन्हें साहस नहीं होगा। इसके साथ ही आपके सम्बन्ध में भी शायद उनकी बुरी धारणा हो जाय। यद्यपि हमारे इस रूपसे आपका कोई भी सम्बन्ध नहीं हैं; फिर भी वे ऐसा सोच सकते हैं कि हड़ताल भंग कराने के लिये आप लोगों के द्वारा जान बूझ कर यह षड़यन्त्र रचा गया था। इस प्रकार की बातें सोचने पर भविष्य में उन्हें मजदूरों की सेवा करनेसे विरक्ति हो जा सकती है। वे बड़े ही होनहार व्यक्ति हैं। मैं नहीं चाहता कि उन्हें किसी प्रकार हतोत्साह होना पड़े।"

बाबू मेहरचन्द—"क्या आपका विश्वास है कि यह बात किसी पर प्रकट नहीं होने पावेगी?

रत्नेश्वर प्रसाद—"प्रकट होने का तो कोई कारण ही नहीं है। आप के तथा बहन लक्ष्मी के सिवा इस रहस्य के सम्बन्ध में किसी को भी कुछ मालूम नहीं हो सकता है। सच्ची खबर मिल जाने से पं० रामदयाल शर्मा पर भी मजदूरों का विश्वास नहीं रहेगा। वे उन पर भी नाना प्रकार का सन्देह करने लगेंगे।"

बाबू मेहरचन्द—"आपका विचार बिलकुल ठीक है। दो-एक दिन तक आप इस रूप में ही रहिये। परन्तु इस समय तो आपको घर चलना ही होगा। फिर सुबह में आप चले आइयेगा।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"तो इस समय मैं सन्यासी के रूप में ही चलूंगा।"

बाबू मेहरचन्द –"हाँ, हाँ, इस रूप में ही चलिये। आपकी लम्बी दाढ़ी कहां गयी?"

बात की बात में दाढ़ी लगाते हुए रत्नेश्वर प्रसाद बोले—"देखिये, दाढ़ी भी आ गयी।"

बाबू मेहरचन्द—"दाढ़ी लगाने पर आपका रूप वास्तव में बड़ा ही भयंकर हो जाता है। यदि मैं आपको आसानी से नहीं पहचान सका, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।"

इतना कहते हुए वे रत्नेश्वर प्रसाद के साथ आगे बढ़े। बेचारा ड्राइवर इनकी प्रतीक्षा करता करता परेशान हो रहा था। इन लोगों के सवार होते ही गाड़ी हवा से बातें करने लगी। गाड़ी की चाल तेज होने पर बाबू मेहरचन्द वर्तमान रूप के सम्बन्ध में रत्नेश्वर प्रसाद से पूछताछ करने लगे। परन्तु ड्राइवर की ओर इशारा कर उन्होंने उन्हें चुप रहने का संकेत किया। उनके संकेत का अर्थ समझ कर के वह प्रसंग छोड़ भिन्न भिन्न विषयों पर बातें करने लगे।

पौन घटे के भीतर ही गाड़ी दरवाजे पर आ लगी। गाड़ी से उतरते ही बाबू मेहरचन्द ने तुरत लक्ष्मी को सभी बातों की खबर दी। उसे भी यह समाचार सुन कर बड़ा ही कौतुहल हुआ। उसे इस बात का गर्व था कि रत्नेश्वर प्रसाद ने उससे सब बातें साफ साफ कह दी है। वे उससे कह चुके थे कि स्वामी ज्ञानानन्द तथा पं० रामदयाल शर्मा के साथ मिल करके हड़ताल दूर करने का उद्योग कर रहे हैं। इस कारण उसे इस बात का तनिक भी सन्देह नहीं था कि स्वयं रत्नेश्वर प्रसाद ही स्वामी ज्ञानानन्द हैं।

उनके पधारने का समाचार सुनकर लक्ष्मी बड़ी प्रसन्नता के साथ उनसे मिलने आई। भयंकर दाढ़ी वाले एक संन्यासी को कुर्सी पर बैठे देख कर वह तो आश्चर्य में पड़ गयी। उसे स्वयं अपने स्वामी की बातों पर सन्देह होने लगा। बड़े आश्चर्य के साथ वह अलग से ही उन्हें देख रही थी। उसका वास्तविक मनोभाव समझ कर रत्नेश्वर प्रसाद मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे। इतने में बाबू मेहरचन्द आ गये। इशारे से लक्ष्मी ने उन्हें अपने समीप बुला कर पूछा—"क्या यही स्वामी ज्ञानानन्द, नहीं, नहीं, रत्नेश्वर प्रसाद हैं?"

मुस्कराते हुए बाबू मेहरचन्द ने कहा—"तुम्हें सन्देह हो रहा है क्या? अच्छा, अभी मैं तुम्हारा सन्देह दूर किये देता हूं।" इतना कहते हो रत्नेश्वर प्रसाद की दाढ़ी जोर से खींच कर उन्होंने अलग कर दो। दाढ़ी अलग होते ही तो उनका असली रूप दिखलायी देने लगा। खिलखिलाती हुई उनके समीप जाकर लक्ष्मी बोली—"प्रणाम! योगी महाराज, प्रणाम!!"

मुस्करा कर योगी महाराज ने कहा—"भगवान तुम्हें शीघ्र ही पुत्रवती बनावे।"

ईंट का जबाब पत्थर से पाकर लक्ष्मी ने संकोच से अपना मुंह छिपा लिया। उसकी यह अवस्था देखकर बाबू मेहरचन्द ने भी मुस्कराते हुए कहा—"केवल आशीर्वाद लेने से काम नहीं चलेगा। जाकर योगी महाराज के लिये भोजन भेजो। महीनों से कन्द मूल खाते खाते तबीयत दुरुस्त हो गयी है।"

इस प्रकार निकलने का मौका पाकर लक्ष्मी तुरत वहांसे चली गयी। उसके जाने पर बाबू मेहरचन्द रत्नेश्वर प्रसाद से सारी कहानी पूछने लगे।

उत्तर में उन्होंने कहा—"कहानी तो कोई बड़ी नहीं है। मजदूरों पर प्रभाव जमा कर हड़ताल रोकने के उद्देश्य से इस रूप में मैं वहां रहने लगा। ईश्वर की कृपा से शीघ्र ही मजदूरों पर मेरा काफी प्रभाव हो गया।"

बाबू मेहरचन्द—"हां, मैं आपकी सिद्धि के सम्बन्ध में नाना प्रकार का समाचार सुना करता था। कहा जाता है कि कई असाध्य रोगियों को आपने अच्छा कर दिया था। इस में क्या रहस्य है?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इसमें चालाकी के सिवा और कोई रहस्य नहीं था। मैंने ५-७ ऐसे आदमियों को ठीक कर लिया था, जो असाध्य रोगों का बहाना बना कर मेरे पास आते थे। मैं नाना प्रकार के प्रयोगों का प्रदर्शन कर उन्हें तुरत अच्छा कर देता था। इस से लोगों पर मेरा बिशेष प्रभाव जम गया।"

बाबू मेहरचन्द—"तब तो आपने बड़ी चालाकी के साथ काम लिया।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"चालाकी तो अवश्य थी। परन्तु मैं आपको विश्वास दलाना चाहता हूं कि संन्यासी के रूप से मैंने किसी प्रकार का अनुचित लाभ नहीं उठाया। अपने प्रभाव का मैंने किसी भी समय दुरुपयोग नहीं किया। आपकी भलाई अवश्य मेरे सामने थी। परन्तु इसके साथ ही मैंने मजदूरों की भी कोई बुराई नहीं की। आप से कोई सम्बन्ध नहीं रहने पर भी मजदूरों के हित की दृष्टि से मैं वही करता, जो इस समय मैंने किया है। रामकुमार प्रसाद के चंगुल में फँस कर बेचारे भोले भाले मजदूर व्यर्थ ही कष्ट सह रहे थे। उसके चंगुल से उन्हें बचाना प्रत्येक देशप्रेमी का कर्त्तव्य था। मैंने केवल उस कर्त्तव्य का पालन किया है और मुझे इसका गौरव है कि आप के प्रेम ने मुझे मजदूरों का अहित करने के लिये किसी भी समय प्रेरित नहीं किया।"

बाबू मेहरचन्द—"हाँ, एक आवश्यक प्रश्न पूछना तो मैं भूल ही गया। आप एकाएक यहां से क्यों गायब हो गये?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"इस प्रश्नका उत्तर मैं अपने पत्र में दे चुका हूं। यदि आप चाहेंगे तो मैं फिर कभी इस सम्बन्ध में अपना विस्तृत स्पष्टीकरण दूंगा। हाँ, तो मैं मजदूरों के प्रभाव की चर्चा कर रहा था। प्रभाव जमने पर मैंने हड़ताल के विरुद्ध प्रचार करना आरम्भ किया और इसमें मुझे काफी सफलता मिली। इसके बाद पं० रामदयाल शर्मा से परिचय हुआ। वे स्वयं एक दिन मुझ से मिलने आये थे। उनका सहयोग प्राप्त होने से मेरी शक्ति और भी बढ़ गयी। हड़ताल रोकने में हम लोगों को पूरी सफलता मिल चुकी थी। परन्तु ईश्वर को हमें सफल देखना स्वीकार नहीं था। इस कारण विरोधियों की एक चाल के कारण हड़ताल प्रारम्भ हो गयी। उसके बाद की तो घटना आप प्रायः जानते ही हैं।"

बाबू मेहरचन्द—"और कोई विशेष घटना नहीं हुई?"

रत्नेश्वर प्रसाद—ऐसी कोई उल्लेखनीय घटना नहीं हुई, जिसका आप को पता नहीं हो। हाँ, एक दिन मैं मजदूर के वेष में बहन लक्ष्मी से मिलने आया था। यह घटना सम्भवतः चाचा साहब की मृत्यु के दो-तीन दिन बाद की है। उन दिनों आप लोग भयंकर शोकमें पड़े हुए थे। उस समय धैर्य प्रदान करने के उद्देश्य से ही मैं यहां आया था।"

बाबू मेहरचन्द—"परन्तु उसने मुझे यह बात कभी नहीं बतलायी।"

रत्नेश्वर प्रसाद ने मुस्कराते हुए कहा—"आपको सभी बातों का पता रहना आवश्यक थोड़े ही है। परन्तु इसमें उनका कोई अपराध नहीं है। मैंने इस बातको गुप्त रखने के लिये उनसे प्रबल अनुरोध किया था।"

बाबू मेहरचन्द—"क्या उसे यह बात मालूम थी कि आप ही स्वामी ज्ञानानन्द हैं ?"

रत्नेश्वर प्रसाद—"नहीं, उन्हें इस बात की कोई खबर नहीं थी। मैं यहां किस रूप में हूं, इसकी भी कोई सूचना मैंने नहीं दी थी। उनसे मैंने यह कहा था कि पं० रामदयाल शर्मा तथा स्वामी ज्ञानानन्द की सहायता से मैं हड़ताल रोकने की चेष्टा कर रहा हूं। इस कारण उन्हें तो इसका कोई सन्देह भी नहीं होगा कि मैं ही ज्ञानानन्द हू।"

ये लोग इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि लक्ष्मी रत्नेश्वर प्रसाद के लिये भोजन लेकर आ पहुंची। आग्रह करने पर उन्होंने थोड़ा भोजन किया। वे भोजन कर ही रहे थे कि बाबू मेहरचन्द ने लक्ष्मी से कहा—"ये बीच में तुम से एक बार मिले थे। परन्तु तुमने मुझे इसकी कोई खबर नहीं दी।"

मुस्कराते हुए लक्ष्मी ने उत्तर दिया—"मैं विश्वासघातिनी थोड़े ही हूं। पढ़े लिखे आदमी सभी कुछ कर सकते हैं। संन्यासी का रूप धारण कर भोले भाले मजदूरों को धोखा देना भी उनके लिये आसान है। परन्तु मैंने तो वह विद्या कभी पढ़ी ही नहीं। रत्नेश्वर बाबू के अनुरोध के विरुद्ध मैं कैसे इनके आनेकी बात आप से कहती।"

ये बातें सुन कर रत्नेश्वर प्रसाद कुछ लज्जित हुए। परन्तु अपने मनोभाव को दबाने की चेष्टा करते हुए बोले—"देखा, गलत फहमी कैसे फैलती है ? बहन लक्ष्मी के हृदय में मेरे कार्यों के सम्बन्ध में किस प्रकार बुरे भावों की उत्पत्ति हो गयी है।"

लक्ष्मी—"आप बुरा न मानें। मैंने तो केवल मजाक किया था।"

रत्नेश्वर प्रसाद—"मैं इस बातको समझता हूं। लेकिन वास्तविक बात नहीं जानने के कारण साधारण जनता में इसी तरह नाना प्रकार की गलत फहमी फैला करती है।"

लक्ष्मी—"हां, अब आप निश्चिन्त रुपसे मुझे अपनी कहानी सुनाइये।"

प्रबल आग्रह किये जाने पर रत्नेश्वर प्रसाद को फिर अपनी कहानी सुनाने के लिये बाध्य होना पड़ा। रात भर वहीं विश्राम कर के भोर होते ही मोटर पर अपने स्थान को लौट आये।

बत्तीसवाँ अध्याय

एक सप्ताह से फतेहचन्द काटन मिल्स में काम हो रहा है। इस बीच में पं० रामदयाल शर्मा तथा स्वामी ज्ञानानन्द ने समझौते की शर्तें भी तैयार कर दी। बाबू मेहरचन्द ने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। मजदूर दल भी उससे बहुत प्रसन्न हुआ। इस समझौते के फलस्वरूप मजदूरों के बालकों के पढ़ने के लिये मील की ओर से निःशुल्क विद्यालय का प्रबन्ध, बीमार पड़ने पर उनकी सेवा सश्रुषा का विशेष आयोजन, तथा आवश्यकता पड़ने पर उन्हें नाम मात्र व्याज पर कर्ज देने का प्रबन्ध किया गया। कर्ज की रकम मजदूरों से एक बार वसूल न कर, उसे किस्त के रूप में धीरे धीरे वसूल करने का भी प्रबन्ध किया गया।

इन सुविधाओं को पाकर मजदूर यथेष्ट सन्तुष्ट हो गये। सभी लोग

स्वामी ज्ञानानन्द तथा पं० रामदयाल शर्मा के भक्त बन गये। वे इन्हें हृदय से चाहने लगे। उस मील के मजदूरों की सहानुभूति पाकर पं० रामदयाल शर्मा अन्य मीलों के मजदूरों की अवस्था सुधारने की भी चेष्टा करने लगे।

हड़ताल समाप्ति के तीसरे ही दिन स्वामी ज्ञानानन्द ने यह घोषित कर दिया था कि समझौते का प्रश्न हल कर वे कहीं अन्यत्र चले जायंगे। मजदूरों को यह समाचार सुनकर बड़ा ही दुख हुआ। उन्होंने स्वामीजी से वहां ठहरने के लिये बड़ी ही प्रबल आग्रह किया। परन्तु "रमता योगी, बहता पानी" वाली कहावत का सहारा लेकर वे लोगों को चुप कर दिया करते थे।

स्वामीजी के प्रस्थान का समाचार सुन कर पं० रामदयाल शर्मा को सब स अधिक दुख हुआ। वे उनकी सहायता से सभी मीलोंके मजदूरों का सगठन करने की बात सोच रहे थे स्वामीजी की योग्यता का उन्हें यथेष्ट परिचय मिल चुका था। ऐसे योग्य सहयोगी के विछोह का समाचार सुन कर उनका दुखित होना सर्वथा स्वाभाविक ही था। उन्होंने भी उन्हें रोक रखने की बड़ी चेष्टा की, पर सर्वथा असफल रहे। स्वामीजी वहाँ से प्रस्थान करने की बात पर दृढ़ रहे।

दोनों पक्ष से समझौते की स्वीकृति हो जाने पर स्वामीजी ने दूसरे दिन प्रस्थान करने की घोषणा की। बड़ी कठिनाई से वे एक दिन के लिये और रोके जा सके। इस बीच में उनकी विदाई सभाका आयोजन किया गया। मजदूरों ने बड़ी तत्परता से उस कार्य में हाथ बँटाया। पं० रामदयाल शर्मा उसके सभापति बनाये गये। मजदूरों की ओर से ५०१) रुपये की थैली प्रदान करते हुए उन्होंने अपने भाषण में कहा—"इस मील के मजदूरों की ओर से स्वामीजी को यह अल्प भेंट प्रदान करते हुए मुझे

बड़ी प्रसन्नता हो रही है। मैं जानता हू कि इस तुच्छ रकम का स्वामीजी के सामने कुछ भी मूल्य नहीं है। फिर भी आशा है कि गरीब मजदूरों की क्षुद्र भेंट समझ कर वे इसे स्वीकार करेंगे। हम लोगों को बड़ी आशा थी कि स्वामीजी कुछ दिनों तक यहां ठहर कर अपनी विलक्षण कार्य पटुता से हम लोगों को लाभान्वित करेंगे। परन्तु चेष्टा करने पर भी हमें यह सौभाग्य प्राप्त नही हो सका। स्वामीजी आज हमें छोड़कर इस स्थान से जा रहे हैं, इसका हमें अपार दुख है फिर भी केवल यह सोच कर सन्तोष हो रहा है कि स्वामीजी के व्यक्तित्व से अन्य स्थानों के भाइयों को लाभ पहुँचेगा। इनके जैसे व्यक्ति इस समय हमारे देश में बहुत थोड़े हैं। उनके व्यक्तित्व से केवल अपने लाभ की बात यदि हम सोचें, तो यह हमारी अपार स्वार्थ परायणता होगी। स्वामीजी से अन्य भाइयों को लाभ पहुँचेगा, केवल यह भावना, इस विछोह के समय हमें सन्तोष प्रदान कर रही है। इस उदार भावना को लेकर हम दुख मिश्रित प्रसन्नता के साथ स्वामीजी को इस स्थान से विदा करते हैं। उनके आशीर्वाद से, उनकी आत्मा की सद्प्रेरणा से, हमारा मंगल होता रहेगा, इसमें सन्देह नहीं।

"स्वामीजी! अपने बहुमूल्य परामर्शों से आपने मुझे तथा इस मील के मजदूरों को जितना अधिक लाभान्वित किया है, उसका वर्णन शब्दों के द्वारा नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति हमारा समर्थन करेगा, यदि हम कहें कि आपने इस स्थान के लोगों के जीवन में युगान्तर उपस्थित कर दिया है। स्वामीजी! आप में हमने एक सच्चा मित्र तथा पथप्रदर्शक पाया। आशा है कि आप समय समय पर अपने दर्शनों से हम लोगों को लाभान्वित करते रहेंगे।" इस प्रकार भाषण समाप्त कर वे अपने स्थान पर बैठ गये।

उनके भाषण के बाद स्वामीजी बोलने के लिये उठे। उनके उठते ही भीषण करतल ध्वनि होने लगी। अपना भाषण उन्होंने इस प्रकार दिया—

"माननीय पंडित जी तथा अन्य उपस्थित सज्जनो!" आपने इस समय मेरे प्रति जिस प्रेम का परिचय दिया है, उसका अनुभव कर मेरा हृदय गद्-गद् हो रहा है। हृदय की वास्तविक भावना को व्यक्त करने योग्य शब्द मेरे पास नहीं है। आपने यह आशा प्रकट की है कि मेरे द्वारा अन्य स्थान के भाइयों को लाभ पहुँचेगा। मैं इसे आपका आशीर्वाद समझता हूं। यदि मैं वस्तुतः जनता की सेवा कर सका, तो मैं अपना जीवन गौरवपूर्ण समझूंगा। भगवान शक्ति दे, जिससे मैं आपकी आशा पूरी कर सकूँ।

प्यारे भाइयो! मैं आशा करता हूं कि पं० रामदयाल शर्मा जैसे योग्य नेता की अधीनता में कार्य कर आप लोग अपनी विशेष उन्नति कर सकेंगे। आप लोगों को दृढ़तापूर्वक अपने पथ की ओर अग्रसर होना पड़ेगा। मैं चाहता हूं कि प्रत्येक मील के मजदूरों का प्रबल सङ्गठन हो। परन्तु इस स्थान पर ही मैं आपको बतला देना चाहता हूं कि अपने संगठन का दुरुपयोग कर कोई भी संस्था अपने को लाभान्वित नहीं कर सकी है। आपको भी अपनी शक्ति तथा संगठन का अच्छे से अच्छा उपयोग करना पड़ेगा। ऐसा करने के लिये त्यागी नेता की आवश्यकता होती है। प्रसन्नता तथा सन्तोष की बात है कि अपने वर्तमान सभापति महोदय के रूप में आपने एक ऐसा नेता पा लिया है।

"इस स्थल पर मेरी सेवा के सम्बन्ध में भी बहुत कहा गया है। इस सम्बन्ध में जितनी बातें कही गयी हैं, उनसे मैं सहमत नहीं हूं। मुझे खेद है कि इस स्थान पर ठहर कर मैं आपकी विशेष रूप से सेवा

नहीं कर सका। मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी, यदि कभी आपकी सेवा का मुझे वास्तविक अवसर मिल सका।

"आपने प्रेमपूर्वक मुझे एक थैली प्रदान करने की कृपा की है। मैं बड़ी प्रसन्नता तथा गौरव के साथ उसे स्वीकार करता हूं। थैली स्वीकार करते हुए, मैं अपनी ओर से ५०१) रुपये की रकम आपकी संस्था को अर्पित करता हूं। आशा है कि आप लोग उसे स्वीकार करने की उदारता दिखलायेंगे।

"इस स्थल पर अब मुझे कुछ अधिक कहना नहीं है। आशा है कि आप लोग मेरे प्रति इसी प्रकार प्रेमभाव बनाये रखेंगे। भगवान अपने उद्देश्य में आपको सफलता प्रदान करे।" इस प्रकार भाषण समाप्त कर स्वामीजी अपने स्थान पर बैठ गये। इस अवसर पर भी लोगों ने करतल ध्वनि की।

दो एक मजदूरों ने भी स्वामीजी के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित की। उनके भाषण के बाद सभा की कार्यवाही समाप्त हुई। सभा स्थल स्वामी ज्ञानानन्द की जय ध्वनि से गूँज उठा।

सभा समाप्ति के समय तक पूरी सन्ध्या हो चुकी थी। सभी आदमी अपने अपने निवास स्थान को लौटने लगे। पं० रामदयाल शर्मा प्रेम-पूर्वक स्वामीजी से गले मिले। उस समय कुछ मजदूरों की आंखें प्रेम-जल की वृष्टि कर रही थी। सैकड़ों आदमी स्वामीजी के ठहरने के स्थान तक आये। लोगों ने उनसे प्रस्थान करने का समय पूछा। इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—"अभी तक मैंने जाने का समय निश्चित नहीं किया है। सम्भवतः आज रात्रि के समय ही प्रस्थान कर दूँगा।"

एक मजदूर ने प्रश्न किया—"यहां से आप आप कहां जायेंगे ?"

मुस्कराते हुए स्वामीजी ने उत्तर दिया—"इसका क्या ठिकाना है ? साधु संन्यासियों के लिये सभी स्थान बराबर हैं।"

एक मजदूर ने पूछा—"प्रस्थान करते समय तो आप दर्शन अवश्य देंगे।"

स्वामीजी ने उत्तर दिया—"प्रस्थान करते समय किसी से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है। तुम लोग यहां ही रहोगे। मील भी मौजूद रहेगी। इस स्थान के सभी कार्य यथापूर्व चलते रहेंगे। परन्तु मैं न मालूम कहां रहूंगा। जब प्रस्थान का समय ही निश्चित नहीं है तो अन्तिम मुलाकात का किस प्रकार वचन दे सकता हूं। इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक मुलाकात ही अन्तिम मुलाकात समझनी चाहिये।"

थोड़ी देर तक स्वामीजी इसी प्रकार मजदूरों को विनोदात्मक ढंग से उपदेश देते रहे। अधिक रात बीतने पर सभी कोई अपने अपने स्थान पर लौट आये।

दूसरे दिन स्वामीजी को कोई नहीं देख सका। वे कब और कहां चले गये। इसका पता किसी को भी नहीं लगा।

उपसंहार

—:०**०:—

कई वर्ष व्यतीत हो गये। बाबू रत्नेश्वर प्रसाद बाबू मेहरचन्द के यहां भाई की तरह रहने लगे। वे उनका सभी काम सम्हालते थे। समूचे परिवार का उनपर अपार विश्वास था। निश्चिन्त हो जाने के बाद वे अपने घर भी गये। बहुत दिनों के बाद अपने खोये हुए भाई को पाकर इनके भाई साहब को अपार प्रसन्नता हुई। उन लोगों ने इनके विवाह की बड़ी चेष्टा की। पर किसी प्रकार सफलता नहीं मिली। उस समय से वे प्रायः साल में एक बार घर आ जाते थे। बाबू मेहरचन्द तथा उनकी धर्मपत्नी लक्ष्मी ने भी इनसे विवाह करने का बहुत अनुरोध किया। परन्तु ये किसी भी प्रकार तैयार नहीं किए जा सके।

बाबू मेहरचन्द भी आनन्दपूर्वक अपना जीवन बिताते रहे। चाचा की मृत्यु के ठीक एक वर्ष के बाद इनके स्त्रीके गर्भ से एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ। उसके बाद दो पुत्रियों ने लक्ष्मी की गोद हरी भरी की। बाबू मेहरचन्द के व्यवसाय में भी यथेष्ट श्रीवृद्धि हुई। इनकी मील खूब मुनाफे के साथ चलती रही। चाचा साहब की मृत्यु के बाद इनकी चाची ने बनारस में रहने की इच्छा प्रकट की। बाबू मेहरचन्द ने उनके लिए वहाँ रहने की व्यवस्था कर दी और वे उन्हें सदा सुखी रखने की चेष्टा करते थे।

बाबू रामकुमार प्रसाद को बड़े कष्ट में पड़ना पड़ा। हड़ताल के दिनों

में मि० रावर्ट ने उन्हें आठ हजार रुपया दिया था। परन्तु शर्त यह थी कि यदि हड़ताल पूर्ण नहीं हुई, तो कुल रुपया उन्हें वापस करना पड़ेगा। इस शर्त की रक्षा के लिये उन्होंने रामकुमार प्रसाद से हैण्डनोट लिखा लिया और वह एक विश्वासी आदमी के यहां रख दिया गया था कि हड़ताल पूर्ण होनेपर रामकुमार प्रसाद उसे वापस पा जायंगे। परन्तु यदि हड़ताल पूर्ण नहीं हुई तो रुपया वसूल करने के लिए वह मि० रावर्ट को दे दिया जायगा। हड़ताल तो पूर्ण हुई ही नहीं। हैण्डनोट मि० रावर्ट को वापस कर दिया गया। उन्होंने रामकुमार प्रसाद पर नालिश ठोक दी। रुपया देने में असमर्थ रहने के कारण उन्हें दो वर्ष की सजा भुगतनी पड़ी।

पं० रामदयाल शर्मा पूरी सचाई के साथ मजदूरों की सेवा करते रहे। सभी मीलों के मजदूरों का उन्होंने जोरदार संगठन कर लिया था। आवश्यकता पड़ने पर मजदूरों की सहायता करने के लिये उन्होंने एक फंड भी जमा कर रखा था। उनके अपार परिश्रम के कारण उसमें लाखों रुपये जमा हो गए थे। वे बराबर मील मालिकों से मजदूरों के कष्टों के लिए युद्ध करते रहते थे। अधिकांश स्थानों पर वे समझौते के तरीके से ही काम लेते थे। मजदूरों का भी उनपर अपार विश्वास था। लँगड़े रामपलट को वे बराबर आर्थिक सहायता देते रहे।

दस वर्षतक बाबू रत्नेश्वर प्रसाद अपने परिवार में रहे। उसके बाद उन्हों ने सन्यास धारण कर लिया। सन्यासी होने पर उन्होंने अपना नाम ज्ञानानन्द ही रखा। जो कभी नकली नाम था, वही समय आने पर असली बन गया। अनेक स्थानों में भ्रमण करने के बाद वे कलकत्ता भी आये। यहां आने पर उन्होंने अपना आसन उसी पेड़ के नीचे जमाया, जहां उन्होंने पहले

नकली रूप में रखा था। उस समय तक गिने गिनाये ही पुराने मजदूर रह गये थे। फिर भी उन लोगों ने उन्हें पहचान लिया। इतने दिनों के बाद उनका दर्शन कर वे बड़े ही प्रसन्न हुए। समाचार मिलने पर पं० रामदयाल शर्मा भी उनसे मिलने आये। उन्होंने उनकी बड़ी सेवा की। उनके प्रबल आग्रह से लगभग दो साल तक वहाँ रहकर उन्होंने मजदूरों की अवस्था सुधारने की चेष्टा की।

सन्यासी बनने पर भी उनके हृदय में बाबू मेहरचन्द के प्रति ज्यों का त्यों प्रेम बना रहा। वे बराबर उनके यहाँ आया जाया करते थे। इस प्रवृत्ति से लाभ उठाकर, उनके कुछ विरोधी उन्हें माया में लिप्त सन्यासी कहा करते थे।

*** समाप्त ***